अंक 2 | जनवरी 2019 | अर्ध वार्षिक | बेंगलूरु

Azim Premji University

आई वंडर...

रीडिस्कवरिंग स्कूल साइंस

पेज 9

धातु-कार्बनिक ढाँचे : रासायनिक शोध में नए हरफ़नमौला

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

i wonder
No. 134, Doddakannelli
Next to Wipro Corporate Office
Sarjapur Road, Bangalore - 560 035. India
Tel: +91 80 6614 9000/01/02 Fax: +91 806614 4903
www.azimpremjifoundation.org

Also visit the Azim Premji University website at
www.azimpremjiuniversity.edu.in

यह अंक मूलत: आई वंडर...(अँग्रेज़ी) अंक 2 जनवरी, 2019 के लेखों का हिन्दी अनुवाद है। यह अनुवाद ई-कॉपी के रूप में फरवरी, 2025 में प्रकाशित हुआ है।

इसकी सॉफ्ट कॉपी https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/ से डाउनलोड की जा सकती है।

मूल अँग्रेज़ी अंक की साफ्ट कॉपी http://azimpremjiuniversity.edu.in/SitePages/resources-iwonder.aspx से डाउनलोड की जा सकती है।

आई वंडर...स्कूल शिक्षकों के लिए एक विज्ञान-पत्रिका है। हमारा उद्देश्य ऐसे लेखों को प्रस्तुत करना है जो शिक्षकों (साथ ही अभिभावकों, शोधकर्ताओं और रुचि रखने वाले अन्य वयस्कों) को शिक्षण के विभिन्न आयामों और कक्षा व कक्षा के बाहर आजीवन विज्ञान सीखते रहने के बारे में एक सरल और चिन्तनशील बातचीत में जोड़ें। हम ऐसे लेखों का स्वागत करते हैं जो विज्ञान और विज्ञान-शिक्षा पर आलोचनात्मक दृष्टिकोण साझा करते हैं, मूलभूत अवधारणाओं (कैसे, क्यों और आगे क्या) की गहरी व व्यापक समझ प्रदान करते हैं। साथ-ही-साथ जो अधिक अनुभवात्मक और सार्थक तरीकों से विज्ञान सीखने को प्रोत्साहित करने वाली कार्यप्रणालियों के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। आई वंडर...विद्यार्थियों व विज्ञान में रुचि रखने वालों के लिए भी एक बढ़िया स्रोत है।

आई वंडर...
रीडिस्कवरिंग स्कूल साइंस

सम्पादक
रामगोपाल (रामजी) वल्लत
चित्रा रवि

सम्पादकीय समिति
आनन्द नारायणन, हृदय कान्त दीवान, जयलक्ष्मी अय्यर, नवोदिता जैन, राधा गोपालन, राजाराम नित्यानन्द
रिचर्ड फर्नांडीस, सुशील जोशी, यास्मीन जयतीर्थ

सलाहकार
मनोज पी., एस. गिरिधर, चन्द्रिका मुरलीधर, सौरभ सोम
फाल्गुनी सारंगी, जुल्फिकार अली

हिन्दी अंक सम्पादक
राजेश उत्साही

प्रकाशन समन्वयक
स्नेहा कुमारी

रेखांकन
विद्या कमलेश

पत्रिका डिज़ाइन
जिंक और ब्रोकोली
enquiry@zandb.in

हिन्दी लेआउट
आदर्श प्रा.लि. भोपाल

फोटो सौजन्य
मुख पृष्ठ : एक एमओएफ की सतह में संशोधन, जिससे CO_2 निकालने की इसकी क्षमता में सुधार हो सके। इसे फ़ोकस्ड आयन बीम स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके 20,000 गुना बढ़ा करके दिखाया गया है। अमेरिकी ऊर्जा विभाग। URL:http://www.publicdomainfiles.com/show_file.php?id=14018739628538. License: Public Domain.

अन्तिम आवरण : *स्टैफिलोकोकस एपिडर्मिडिस*। NIH – नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एलर्जी एंड इन्फेक्शियस डिजीज। URL: https://www.flickr.com/photos/niaid/5613984108/in/photostream/. License: CC-BY.

आभार
इस अंक को तैयार करने में सहयोग के लिए सत्यजीत मेयर, और इंडियाबायोसाइंस, नेशनल सेंटर फॉर बायोलॉजिकल साइंसेज, बेंगलूरु की स्मिता जैन का विशेष आभार।

लाइसेंस
इस पत्रिका के सभी लेख क्रिएटिव कॉमन्स-एट्रिब्यूशन-नॉन कमर्शियल 4.0 इंटरनेशनल लाइसेंस के तहत प्रकाशित हैं।

कृपया ध्यान दें : इस अंक में व्यक्त सभी विचार और राय लेखकों के अपने हैं। अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय या अजीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन इनके लिए किसी भी रूप में ज़िम्मेदार नहीं है।

सम्पादकीय

केरल के ग्रामीण इलाकों में पले-बढ़े एक बच्चे के रूप में, मेरा मुख्य मनोरंजन पढ़ना था: ज़्यादातर विज्ञान, विज्ञान का इतिहास और वैज्ञानिकों की जीवनी। मुझे विज्ञान शुद्ध और राजनीति से अछूता लगता था। मैंने वैज्ञानिकों को पूरी तरह से तर्कसंगत प्राणी माना, जो केवल ब्रह्माण्ड के रहस्यों को उजागर करने की इच्छा से प्रेरित थे। मेरे दिमाग़ में, वे निष्पक्ष पर्यवेक्षक, प्रयोगकर्ता और विचारक थे, जो व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों से अछूते थे।

लेकिन, जैसे-जैसे मैं बड़ा हुआ, मुझे एहसास हुआ कि यह सच्चाई से कोसों दूर था। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि विज्ञान के इतिहास में वैज्ञानिकों के बीच सहयोग के ऐसे कई उदाहरण हैं, जब प्रकृति के रहस्यों को उजागर करने के लिए उन्होंने एक साथ मिलकर काम किया। लेकिन, इसमें पूर्वाग्रह, सत्ता का खेल, गुटबाजी, राजनीति और एक-दूसरे से आगे निकलने की होड़ के उदाहरण भी हैं। ऐसा ही एक उदाहरण इस अंक के 'हेलिकल स्टेयरकेस की खोज' में साझा की गई डीएनए की संरचना के खुलासे की रोमांचक कहानी है। जब भी मैं इस पथ-प्रदर्शक खोज पर विचार करता हूँ, तो मुझे इस बात का गहरा दुख होता है कि इस उपलब्धि में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले वैज्ञानिकों में से एक – रोजालिंड फ्रैंकलिन – को इसका कोई श्रेय नहीं मिला। यह इस बात का प्रतिबिम्ब है कि उन दिनों महिला वैज्ञानिकों को कैसे व्यवस्थित रूप से पृष्ठभूमि में धकेल दिया गया था। विज्ञान पर हावी होने वाले पुरुष इसे ऐसे ही रखना चाहते थे – पुरुषों का वर्चस्व। अगर महिलाओं को उनका उचित अधिकार और प्रोत्साहन दिया जाता तो विज्ञान कितना आगे बढ़ जाता?

मेरे लिए उतनी ही हृदय विदारक कहानी सुब्रह्मण्यम चन्द्रशेखर की है। पच्चीस वर्ष की उम्र में उन्हें लन्दन में रॉयल एस्ट्रोनॉमिकल सोसायटी के सदस्यों की गरिमामयी सभा में विशाल तारों के विकास पर अपना अग्रणी सिद्धान्त प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया था। मैं अच्छी तरह कल्पना कर सकता हूँ कि इस अवसर पर चन्द्रशेखर कितने आशंकित और साथ ही उत्साहित रहे होंगे। उन्हें आश्चर्य और निराशा तब हुई जब उनके प्रस्तुतीकरण की धज्जियाँ किसी और ने नहीं बल्कि उनके गुरु और मित्र आर्थर एडिंगटन ने उड़ा दीं। उन दिनों खगोलभौतिकी के क्षेत्र के दिग्गज एडिंगटन ने ही वास्तव में चन्द्रशेखर को सबसे पहले प्रस्तुतीकरण देने के लिए प्रोत्साहित किया था। लेकिन उन्होंने वैज्ञानिक रूप से इसका प्रतिवाद करने के बजाय चन्द्रशेखर के विचारों का उपहास करना ही बेहतर समझा। एडिंगटन के क़द के कारण चन्द्रशेखर के सिद्धान्त को, जिसे नोबेल पुरस्कार के लिए लगभग आधी सदी तक इन्तजार करना पड़ा, दशकों तक उनके साथियों द्वारा गम्भीरता से नहीं लिया गया। अगर उनमें से कुछ ने इसमें गुण देखे भी, तो भी वे इसे व्यक्त करने का साहस नहीं कर पाए। कल्पना कीजिए कि इस घटना के कारण अगर खगोलभौतिकी कई दशकों तक पीछे न रह गई होती, तो यह कितना आगे बढ़ गई होती। और, चन्द्रशेखर ने खुद अपने चुने हुए क्षेत्र में कितना योगदान दिया होता, अगर उन्होंने निराशा में इसे नहीं छोड़ा होता। दुनिया भर में कितने युवा वैज्ञानिक अपने जीवन में एडिंगटन जैसे किसी अन्य के कारण मूल सिद्धान्तों के साथ आने से डरते हैं? अगर हर गुरु, हर वरिष्ठ वैज्ञानिक, खारिज करने के बजाय फलने-फूलने का मौक़ा और प्रोत्साहन दे, तो विज्ञान कितना अधिक और तेज़ी से प्रगति कर सकता है?

विज्ञान शिक्षकों के रूप में, यह आवश्यक है कि हम ध्यान रखें कि युवा मन में आश्चर्य और जिज्ञासा पैदा करना उनके वैज्ञानिक स्वभाव को जगाने का केवल एक हिस्सा है। हमें व्यक्तियों के प्रति सम्मान, निष्पक्षता, रूढ़िवादिता से बाहर निकलने का साहस, सहयोगात्मक मानसिकता और यहाँ तक कि दयालुता भी विकसित करनी चाहिए। विज्ञान, जीवन के किसी भी अन्य पहलू की तरह, सबसे अच्छी प्रगति तब कर सकता है जब लोग एक-दूसरे की क्षमताओं और मतभेदों का सम्मान करते हैं, और एक-दूसरे का खुलकर समर्थन करते हैं।

रामजी वल्लत
सम्पादक

इस अंक में

रसायनविज्ञान में उभरते रुझान

नए तत्वों का निर्माण (संश्लेषण) क्यों?
सुशील जोशी

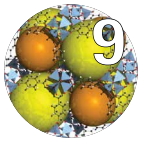

धातु-कार्बनिक ढाँचे : रासायनिक शोध में नए हरफ़नमौला
जॉएल कॉरनेलियो

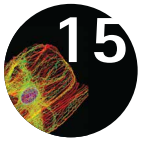

चमकते टैग : चिकित्सा शास्त्र का एक अपरिहार्य साधन
नीरजा दशपुत्रे

मैं एक वैज्ञानिक हूँ

साक्षात्कार : वेना कपूर के साथ

गतिविधि शीट
EARLY BIRD NATURE DETECTIVES BINGO
NATURE CONSERVATION FOUNDATION

शोध से अभ्यास की ओर

शिक्षकों की भूमिका में विद्यार्थी : साथी-शिक्षण का उपयोग करते हुए विज्ञान के शिक्षक विद्यार्थियों को अपना सहयोगी कैसे बना सकते हैं
केविन क्लोज़, निकोल बॉवर्स, रोहित मेहता, पुण्य मिश्र और जे. ब्रायन हेंडरसन

विज्ञान प्रयोगशाला

रसायनशास्त्र की कक्षा में विद्यार्थियों का मोलर द्रव्यमान निकालें
संगीता बालकृष्णन

गतिविधि शीट
- फेफड़े की क्षमता
- स्ट्रॉ से पीना
- गुब्बारों को पिचकाना-I
- गुब्बारों को पिचकाना-II

जी. एस. रौतेला

वैज्ञानिक खोज
जी. एस. रौतेला

संयोग से

45 यह मछली नीली क्यों है?
नवोदिता जैन और स्वागता घोष

बड़े सवाल

50 अदृश्य ऊर्जा का रहस्य
अमिताभ मुखर्जी

पोस्टर
डॉप्लर प्रभाव को खोजना
रामगोपाल (रामजी) वल्लत

शिक्षण : मानो कि धरती मायने रखती है

57 धरती पर (मानव) जीवन को ऊर्जा देना
राधा गोपालन

65 स्वच्छ ऊर्जा
ए.क्यू.कॉन्ट्रैक्टर

इतिहास के झरोखे से

72 सर्पिल सीढ़ियों की खोज
रोहिणी चिन्ता

आपके आँगन में जीवन

81 फूलों का ख़ुशबू ऑर्केस्ट्रा
वी. एस. प्रगाधीश और शैनन ओल्सन

पोस्टर
आपके आँगन में जीवन
मनमोहक सुगन्ध वाले कुछ फूल
वी. एस. प्रागधीश एवं शैनन ओल्सन

खोज

89 जीवन की कीमियागिरी
अनघ पुरन्दरे और अनिरुद्ध शास्त्री

नए तत्वों का निर्माण (संश्लेषण) क्यों?

सुशील जोशी

हम आज नए तत्वों के संश्लेषण की दौड़ में लगे हुए हैं – हर नए तत्व में प्रोटॉनों और न्यूट्रॉनों की संख्या पहले बने तत्वों की तुलना में ज़्यादा है। प्राकृतिक रूप से मिलने वाले तत्वों की तुलना में ये नए बनाए जा रहे तत्व अल्पकालिक (अस्थिर) लगते हैं – जैसे ही वे बनाए जाते हैं, वैसे ही अपना अस्तित्व खो देते हैं। ऐसा क्या है जो इन तत्वों को इतना अस्थिर बनाता है? हम इनका निर्माण करते ही क्यों हैं? इनके निर्माण से हमें नया क्या पता चलता है?

1998 में डुबना में जॉइंट इंस्टीट्यूट फ़ॉर न्यूक्लियर रिसर्च के रूसी वैज्ञानिकों के एक दल ने यह दावा किया कि तत्व 114 का निर्माण सम्भव है। सितम्बर 2009 में अमेरिका के ऊर्जा विभाग की लॉरेंस बर्कले नेशनल लेबोरेटरी के वैज्ञानिकों के एक दल ने इस दावे की पुष्टि की। रूस के दल ने (जिसका नेतृत्व यूरी ओगनेसियन ने किया था) कहा था कि तत्व 114, जिसे अब फ्लेवोरियम के नाम से जाना जाता है – 'बहुत स्थिर (टिकाऊ)' है। परन्तु आज यह तत्व अस्तित्व में नहीं है।

यह अल्पकालिक तत्व 114 कोई अपवाद नहीं है। पिछले कुछ दशकों में जिन कई महाभारी तत्वों का आविष्कार या निर्माण किया गया है (**देखें बॉक्स-1**), वे बहुत स्थिर नहीं लगते। इसके विपरीत 92 तत्व जिनमें से सबसे भारी (यूरेनियम) में 92 प्रोटॉन होते हैं, प्राकृतिक रूप से पाए जाते हैं। इस आधार पर यह परिकल्पना उभरी कि 92 से अधिक प्रोटॉन वाले तत्व शायद प्रकृति में स्थिर नहीं होते। ऐसा क्या है जो किसी तत्व को स्थिर और किसी अन्य को अस्थिर बनाता है? और नए तत्वों के निर्माण के प्रयासों में निवेश क्यों किया जाए जबकि वे वास्तव में क्षणभंगुर होने वाले हैं?

प्रोटॉन संख्या का असर

हर तत्व को उसके परमाणु क्रमांक से पहचाना जाता है जो कि उसके नाभिक में मौजूद प्रोटॉनों की संख्या होती है। उदाहरण के लिए फ्लेवोरियम का परमाणु क्रमांक 114 है यानी इसके नाभिक में 114 प्रोटॉन होते हैं। इस तत्व के प्रत्येक परमाणु को विद्युतीय रूप से उदासीन होने के लिए इतने ही इलेक्ट्रॉन चाहिए होते हैं। प्रत्येक तत्व का एक और गुण उसका परमाणु भार होता है। किसी तत्व का परमाणु भार उसके नाभिक में मौजूद प्रोटॉनों और न्यूट्रॉनों की संख्या का

बॉक्स-1 : नए तत्वों का संश्लेषण

सैद्धान्तिक रूप से किसी नए तत्व के निर्माण के लिए केवल दो उपयुक्त परमाणु संख्या वाले तत्वों के परमाणुओं की एक-दूसरे पर बहुत तेज़ गति से बौछार करनी होती है। इनमें से कुछ का संलयन हो जाएगा और आपको नए तत्व का उपहार मिल जाएगा। नए तत्वों की परमाणु संख्या इस प्रक्रिया के आरम्भ में लिए गए तत्वों की परमाणु संख्याओं के जोड़ के बराबर होगी।

वास्तव में यह कर पाना उतना आसान नहीं है जितना कि कहना। इतनी तेज़ गति (प्रकाश की गति का लगभग 10 प्रतिशत) हासिल करने के लिए परमाणुओं को साइक्लोट्रॉन में त्वरित किया जाता है। जब दो परमाणु आपस में टकराते हैं तो उनके नाभिकों के बीच का विकर्षण बल उन्हें एक-दूसरे से दूर फेंकने की कोशिश करता है। इसके परिणामस्वरूप इन ज़ोरदार टक्करों में ज़्यादातर परमाणु बिखर जाते हैं और केवल कुछ ही आपस में जुड़कर नए तत्व दे पाते हैं।

नए नाभिक के अस्तित्व और प्रकृति के बारे में जो निष्कर्ष निकाले जाते हैं वे विघटन शृंखलाओं के आँकड़ों और विघटन के उत्पादों के विश्लेषण से निकाले जाते हैं। उदाहरण के लिए नए तत्व तुलनात्मक रूप से आकार में बहुत अधिक बड़े होते हैं और इसलिए इनकी गति काफ़ी कम (प्रकाश की गति की लगभग 2 प्रतिशत) होती है और चुम्बकीय क्षेत्र में इनकी प्रतिक्रिया अलग तरह की होती है।

जोड़ होता है। कोई तत्व कहीं भी पाया जाए उसके प्रत्येक परमाणु में इतने ही प्रोटॉन होंगे, परन्तु न्यूट्रॉनों की संख्या अलग भी हो सकती है। उदाहरण के लिए, तत्व हाइड्रोजन के नाभिक में केवल एक प्रोटॉन होता है। जिस रूप में यह सबसे अधिक मात्रा में मिलता है उसके परमाणु में एक भी न्यूट्रॉन नहीं होता, जिस कारण उसके परमाणु क्रमांक और परमाणु भार बराबर होते हैं। परन्तु हाइड्रोजन के कुछ परमाणुओं में एक या दो न्यूट्रॉन होते हैं जिससे उनके परमाणु भार 2 (ड्यूटीरियम) या 3 (ट्रीटियम) होते हैं, जबकि उनके परमाणु क्रमांक वही रहते हैं (**देखें चित्र-1**)। जिन परमाणुओं के परमाणु क्रमांक एक होते हैं और परमाणु भार अलग-अलग होते हैं उन्हें उस तत्व के समस्थानिक कहते हैं। ज़्यादातर तत्वों के दो-या-दो से ज़्यादा समस्थानिक होते हैं। असल में समस्थानिकों का अस्तित्व कोई अपवाद नहीं बल्कि काफ़ी आम है। किसी तत्व के समस्थानिकों के भौतिक गुण अलग-अलग हो सकते हैं परन्तु उनके रासायनिक गुण समान होते हैं। उदाहरण के लिए लकड़ी के कोयले (चारकोल) में कॉर्बन के तीन समस्थानिकों का मिश्रण होता है इन सभी का परमाणु क्रमांक समान होता है (6), पर परमाणु भार क्रमश: 12, 13 और 14 होते हैं (**देखें चित्र-2**)। चारकोल को जलाए जाने पर सभी समस्थानिक एक ही तरह आसानी से जलते हैं और जलने से उत्पन्न कॉर्बन डाईऑक्साइड में ये तीनों उसी अनुपात में होते हैं जिस अनुपात में वे चारकोल में थे। ज़ाहिर है कि किसी तत्व के सभी समस्थानिकों को आवर्त सारिणी में एक ही खाने में रखा जाता है। परन्तु किसी तत्व के अलग-अलग समस्थानिकों की स्थिरता में अन्तर हो सकता है। उदाहरण के लिए कॉर्बन 12 और कॉर्बन 13 काफ़ी स्थिर होते हैं परन्तु कॉर्बन 14 अस्थिर होता है और इसका स्वत: क्षय होता रहता है। इसलिए अगर आप कॉर्बन 14 के 10 ग्राम नमूने को 6000 साल के लिए [जिसे कॉर्बन 14 का अर्धायु (हाफ़ लाइफ़) कहते हैं] छोड़ दें तो इतने समय बाद आपको केवल 5 ग्राम कॉर्बन ही बचा हुआ मिलेगा। बाक़ी का कॉर्बन नाइट्रोजन में परिवर्तित होकर हवा में जा चुका होगा। किसी तत्व के कुछ समस्थानिक स्थिर होते हैं और कुछ अस्थिर, ऐसा क्यों?

चित्र-2 : कार्बन के तीन समस्थानिक

Credits: Adapted from Brecksville-Broadview Heights' physical science homepage. URL: https://sites.google.com/a/bbhcsd.org/physical-science/home/chemistry/ch-14-atoms/isotopes.

समस्थानिकों की अलग-अलग स्थिरता की एक व्याख्या में परमाणु में प्रोटॉनों की संख्या को इसका कारण बताया जाता है। प्रोटॉन और न्यूट्रॉन परमाणु के नाभिक में समाए रहते हैं, परन्तु इलेक्ट्रान नाभिक के चारों तरफ़ घूमते रहते हैं। क्योंकि इलेक्ट्रॉन का द्रव्यमान न के बराबर होता है इसलिए परमाणु का लगभग पूरा द्रव्यमान नाभिक के अन्दर ही होता है। परन्तु पूरे परमाणु के आयतन की तुलना में नाभिक का आयतन

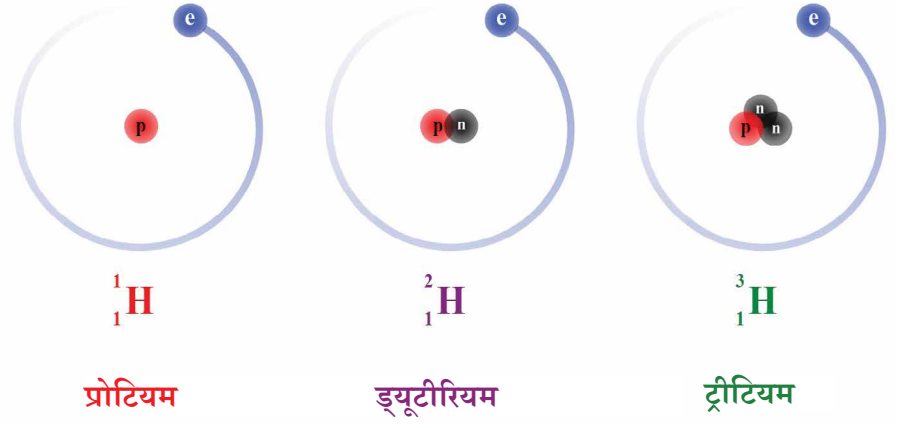

चित्र-1 : हाइड्रोजन के तीन समस्थानिक

Credits: Dirk Hünniger (derivative work in english – Balajijagadesh), Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Hydrogen_Deuterium_Tritium_Nuclei_Schmatic-en.svg. License: CC-BY-SA.

बहुत ही कम होता है। असल में अगर एक परमाणु का आकार एक फुटबाल के मैदान जितना हो तो उसके नाभिक का आयतन केवल एक टेनिस की बॉल के बराबर होगा। चूँकि प्रोटॉन धनावेशित होते हैं और न्यूट्रॉन विद्युतीय रूप से उदासीन होते हैं इसलिए नाभिक में मौजूद दो प्रोट्रॉनों के बीच विकर्षण होता है, परन्तु न्यूट्रॉन न तो एक-दूसरे पर कोई असर डालते हैं और न ही प्रोटॉनों पर। जैसे-जैसे परमाणु क्रमांक बढ़ता जाता है, छोटे-से नाभिक में समाए हुए प्रोटॉनों की संख्या बढ़ती जाती है। इससे उनके बीच का विकर्षण बल बढ़ता जाता है। इसके परिणामस्वरूप परमाणु की स्थिरता कम होते जाने की सम्भावना बढ़ती जाती है। असल में परमाणु क्रमांक 20 और उससे कम वाले तत्व तुलनात्मक रूप से स्थिर होते हैं, जबकि इससे अधिक परमाणु क्रमांक वाले तत्वों के परमाणुओं की स्थिरता कम होती जाती है। परन्तु हीलियम की स्थिरता एक दिलचस्प अपवाद है। अगर स्थिरता केवल नाभिक में मौजूद प्रोट्रॉनों के बीच के विकर्षण बल पर ही निर्भर करती तो इस तत्व को जिसके नाभिक में दो प्रोटॉन होते हैं, अस्थिर होना चाहिए था।

नाभिक को बाँधे रखने वाले बलों की मज़बूती

यह सृष्टि का सौभाग्य है कि नाभिक की अन्तःक्रियाएँ केवल प्रोटॉन के बीच के विकर्षण से ही निर्धारित नहीं होतीं। भौतिकशास्त्र के नियमों के अनुसार, उपपरमाण्विक अन्तःक्रियाएँ एक और बल द्वारा नियंत्रित होती हैं – 'स्ट्रॉन्ग बल' द्वारा। यह एक आकर्षण बल है जो एक नाभिक के अन्दर उपस्थित प्रोटॉनों और न्यूट्रॉनों के बीच केवल कम दूरी पर लगता है। इसलिए किसी समय में नाभिक में प्रोटॉनों के बीच दो बल लग रहे होते हैं – एक विद्युतीय विकर्षण बल और दूसरा स्ट्रॉन्ग आकर्षण बल। अगर किसी परमाणु में कम प्रोटॉन होते हैं और उसके नाभिक का आयतन कम होता है तो प्रोटॉनों के बीच का स्ट्रॉन्ग बल विद्युतीय विकर्षण पर काबू पा लेता है और परमाणु स्थिर रहता है। प्रोटॉनों की संख्या बढ़ने से विद्युतीय विकर्षण बल भी बढ़ता है और उनके बीच का स्ट्रॉन्ग आकर्षण बल भी। अगर नाभिक का आकार बड़ा हो तो प्रोटॉनों के बीच की दूरी भी ज़्यादा होगी, इससे उनके बीच का आकर्षण बल, जो कि केवल कम दूरी पर ही प्रभावी होता है, भी कम हो जाएगा। इससे इस परमाणु के विघटन की सम्भावना भी बढ़ जाएगी। क्या इसका अर्थ है कि अधिक परमाणु भार वाले सभी तत्व अस्थिर होते हैं?

ऐसा लगता है कि यहीं पर न्यूट्रॉन महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। नाभिक में प्रोटॉनों के बीच उपस्थित होने के कारण न्यूट्रॉन ढाल की तरह काम करके प्रोटॉनों को उनके बीच लगने वाले विकर्षण बल से बचाते हैं। न्यूट्रॉनों में भी स्ट्रॉन्ग बल लगाने की क्षमता होती है, जिसके परिणामस्वरूप नाभिक में कुल आकर्षण बल बढ़ जाता है और उसकी स्थिरता बढ़ जाती है (**देखें चित्र-3**)। इसका अर्थ है कि 20 से अधिक परमाणु संख्या वाला तत्व स्थिर होगा अगर उसके नाभिक में प्रोटॉनों की तुलना में न्यूट्रॉन ज़्यादा हों। परन्तु असल में, सभी भारी (परमाणु संख्या 20 से ज़्यादा) और महाभारी (परमाणु संख्या 100 से ज़्यादा) तत्वों में न्यूट्रॉनों की संख्या प्रोटॉनों की संख्या से ज़्यादा होती

बॉक्स-2 : इलेक्ट्रॉन विन्यास

किसी परमाणु के इलेक्ट्रॉन उसके नाभिक के आस-पास समकेन्द्रित कक्षकों में घूमते रहते हैं। इलेक्ट्रॉनों की कुछ व्यवस्थाएँ अधिक स्थिर होती हैं और कुछ कम। इलेक्ट्रॉनों के वितरण को एक गणितीय नियम से दर्शाया जाता है : $2 (n^2)$, जहाँ n कक्षक का क्रमांक है। इस तरह से पहले कक्षक में 2 इलेक्ट्रॉन $[2(1^2)]$, दूसरे कक्षक में 8 इलेक्ट्रॉन $[2(2^2)]$ और तीसरे में 18 इलेक्ट्रॉन $[2(3^2)]$ आदि आ सकते हैं। इस नियम में एक शर्त है जिसे आमतौर पर अष्टक का नियम कहा जाता है – आख़िरी यानी सबसे बाहरी कक्षक में 8 से ज़्यादा इलेक्ट्रॉन नहीं हो सकते हैं। अगर आख़िरी कक्षक पूरी तरह से भरा होता है जैसा कि उदासीन गैसों में होता है तो उसका परमाणु स्थिर होता है। अगर सबसे बाहरी कक्षक में 8 से कम इलेक्ट्रॉन होते हैं तो वह परमाणु अन्य परमाणुओं से क्रिया करके या तो इस कक्षक को पूरा कर लेता है या फिर इसे पूरी तरह से ख़ाली कर देता है (यानी यह कक्षक ही त्याग देता है)। इस शर्त के दो अपवाद हैं हाइड्रोजन और हीलियम – दोनों में केवल एक कक्षक होता है जिसमें अधिकतम 2 इलेक्ट्रॉन समा सकते हैं। हाइड्रोजन के इस कक्षक में केवल 1 इलेक्ट्रॉन होता है और इसलिए हाइड्रोजन बेहद सक्रिय होता है। दूसरी ओर हीलियम का यह कक्षक पूरी तरह से भरा होता है (इसमें 2 इलेक्ट्रॉन होते हैं) इसलिए हीलियम पूरी तरह से निष्क्रिय होता है।

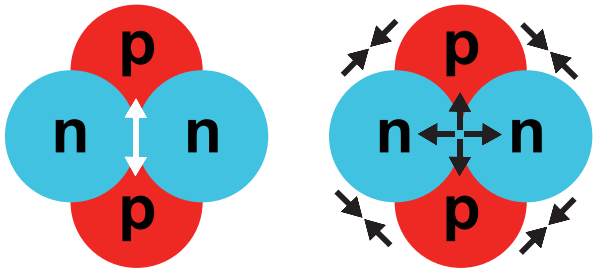

(क) (ख)

चित्र-3 : किसी परमाणु की स्थिरता उसके नाभिक में उपस्थित दो विपरीत बलों पर निर्भर करती है। (क) विद्युतीय विकर्षण नाभिक के प्रोटॉनों को दूर धकेलता है। (ख) प्रोटॉनों और न्यूट्रॉनों के बीच का आकर्षण नाभिक को बाँधे रखता है।

Credits: Adapted from Matt Strassler, What Holds Nuclei Together? Of Particular Significance, March 4, 2013. URL: https://profmattstrassler.com/articles-and-posts/particle-physics-basics/the-structure-of-matter/the-nuclei-of-atoms-at-the-heart-of-matter/what-holds-nuclei-together/. License: CC-BY-NC.

है (न्यूट्रॉन/ प्रोटॉन >1)। और हल्के तत्वों (यानी 20 से कम परमाणु भार वाले तत्वों) के सबसे अधिक प्रचुरता से मिलने वाले समस्थानिकों के नाभिक में प्रोटॉनों और न्यूट्रॉनों की संख्या बराबर होती है (न्यूट्रॉन/ प्रोटॉन =1)। इन तथ्यों ने इस परिकल्पना को जन्म दिया कि एक विशिष्ट परमाणु संख्या के बाद न्यूक्लिऑन (प्रोटॉन और न्यूट्रॉन) की संख्या में बढ़ोतरी से परमाणु की अस्थिरता बढ़ेगी। दूसरे शब्दों में भारी परमाणु आमतौर पर अधिक अस्थिर होते हैं। ज़्यादातर ऐसा ही पाया जाता है।

'स्थिरता के टापुओं' की उपस्थिति

हालाँकि परमाणु संख्या बढ़ने से तत्वों की अस्थिरता बढ़ती है परन्तु ऐसा निरन्तर रूप से नहीं होता। अचानक ऐसे परमाणुओं का मिलना जो कि तुलनात्मक रूप से अधिक स्थिर होते हैं (अर्थात मात्र परमाणु संख्या के आधार पर अपेक्षित स्थिरता से ज़्यादा स्थिर होते हैं) इस निरन्तरता को रोक देता है। इससे स्थिरता के बढ़ने की एक उबड़-खाबड़ प्रवृति मिलती है – अस्थिरता का समुद्र, जिसके बीच-बीच में स्थिरता के टापू मिलते हैं। दूसरे शब्दों में कहें, तो कुछ परमाणु उनकी परमाणु संख्या के आधार पर अपेक्षित स्थिरता से अधिक स्थिर होते हैं। ऐसे परमाणुओं की परमाणु संख्याओं की गणना की गई है : 2, 8, 20, 28, 50, 82 और सम्भवतः 126। इनमें से परमाणु क्रमांक 92 तक के तत्व प्राकृतिक रूप से मिलते हैं। वैज्ञानिक परमाणु क्रमांक 118 तक के तत्वों का निर्माण करने में लगे हैं ताकि वे इन सैद्धान्तिक भविष्यवाणियों की जाँच कर सकें।

स्थिरता के टापू पाए जाने का अर्थ है कि शायद नाभिक के अन्दर न्यूक्लिऑन ऐसे ही बेतरतीब रूप से न रहते हों बल्कि वे कुछ ख़ास तरह से व्यवस्थित हों। यह तथ्य कि इलेक्ट्रॉनों के कुछ विन्यास, अन्य से अधिक स्थिर होते हैं, उपरोक्त विचार को सहारा देता है। इससे इस परिकल्पना को बल मिला है कि न्यूक्लिऑनों की कोई व्यवस्था कुछ तत्वों में अनअपेक्षित स्थिरता का कारण हो सकती है। नाभिक की व्यवस्था के लिए कई मॉडल प्रस्तुत किए जा चुके हैं परन्तु इन जादुई परमाणु संख्याओं को किसी तरह के गणितीय सूत्र द्वारा व्यक्त कर पाने के प्रयासों में अभी तक सफलता नहीं मिली है।

कुछ दिलचस्प अवलोकन

परमाणुओं की स्थिरता की व्याख्या करने के और भी प्रयास हुए हैं। उदाहरण के लिए यह पाया गया है कि जिन तत्वों के परमाणु क्रमांक सम हैं (2, 22, 76 वग़ैरह), वे अधिक स्थिर होते हैं और उनके स्थिर समस्थानिकों की संख्या भी विषम परमाणु संख्या वाले तत्वों की तुलना में ज़्यादा होती है

सम परमाणु संख्या वाले तत्वों के स्थिर समस्थानिकों की संख्या	170
विषम परमाणु संख्या वाले तत्वों के स्थिर समस्थानिकों की संख्या	63

तालिका-1 : सम परमाणु संख्या वाले तत्वों के स्थिर समस्थानिकों की संख्या ज़्यादा है।

प्रोटॉनों की संख्या	न्यूट्रॉनों की संख्या	स्थिर समस्थानिकों की संख्या
सम	सम	163
सम	विषम	53
विषम	सम	50

तालिका-2 : जिन तत्वों में प्रोटॉनों और न्यूट्रॉनों दोनों की संख्या सम होती है उनके स्थिर समस्थानिकों की संख्या आमतौर पर ज़्यादा होती है।

(**देखें तालिका-1**)। विश्लेषण से पता चलता है कि इन समस्थानिकों की स्थिरता न्यूट्रॉन्स की संख्या पर भी निर्भर करती है (**देखें तालिका-2**)। ऐसा लगता है कि प्रोटॉनों और न्यूट्रॉनों, दोनों की संख्या सम हो तो परमाणु अधिक स्थिर होता है। अगर इन दोनों में से किसी एक की संख्या विषम होती है तो उस परमाणु की स्थिरता कम हो जाती है। इन पैटर्नों की व्याख्या करने वाली गणनाएँ जटिल हैं, पर वैज्ञानिकों ने इनका इस्तेमाल करके यह अनुमान लगाया कि परमाणु संख्या 114 वाला तत्व तुलनात्मक रूप से स्थिर होगा। और जब इस तत्व का निर्माण हुआ तो यह वास्तव में (अपने परमाणु क्रमांक के हिसाब से) तुलनात्मक रूप से 'स्थिर' साबित हुआ।

अन्त में

महाभारी तत्वों का निर्माण विज्ञान की उपयोगितावादी सोच के सन्दर्भ में व्यर्थ लग सकता है, पर इससे तत्वों की स्थिरता निर्धारित करने वाले कारकों की समझ बढ़ती है। यहाँ यह ध्यान देना भी ज़रूरी है कि किसी तत्व की स्थिरता हम अकसर इस आधार पर नापते हैं कि वह कितने सालों, दशकों या सदियों तक टिका रह सकता है। तत्व 114 इस तरह की समयावधियों की कसौटी पर स्थिर नहीं माना जा सकता। यह असल में उतना भी स्थिर नहीं है जितना कि अनुमान लगाया गया था और इसलिए यह परिकल्पित स्थिरता का टापू नहीं है (**देखें तालिका-3**)। परन्तु चूँकि अधिकांश कृत्रिम तत्वों का विघटन उनके निर्माण के तुरन्त बाद ही हो जाता है, तत्व 114 को इस मायने में स्थिर माना जा सकता है कि कम-से-कम यह इतने समय तक स्थिर रहा कि हम इसके अस्तित्व को जान सकें। इसके

नाम	संकेत	परमाणु क्रमांक	सबसे स्थिर समस्थानिक	सबसे स्थिर समस्थानिक की अर्धायु
निहोनियम	Nh	113	^{286}Nh	9.5 सेकंड
फ्लेवोरिअम	Fl	114	^{289}Fl	1.9 सेकंड
मस्कोवियम	Mc	115	^{290}Mc	650 मिली सेकंड
लिवरमोरिअम	Lv	116	^{293}Lv	57 मिली सेकंड
टेनेसिने	Ts	117	^{294}Ts	51 मिली सेकंड
ऑगनेसोन	Og	118	^{294}Og	0.69 मिली सेकंड

तालिका-3 : हाल में निर्मित कुछ तत्वों की तुलनात्मक स्थिरता

निर्माण ने हमारी कई प्रश्नों के जवाब पाने की प्यास को बल दिया है – क्या स्थिरता के टापू असल में होते हैं? क्या आवर्त सारणी की कोई सीमा है? स्थिरता का अगला टापू परमाणु संख्या 126 पर अनुमानित किया गया है। क्या यह तत्व प्रयोगशाला में बनाया जा सकता है? क्या इसके निर्माण से हम इन सवालों के जवाबों के नज़दीक पहुँच पाएँगे? हमें इन्तज़ार करना होगा।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Atom structure. hmn, Deviant Art. URL: https://www.deviantart.com/hmn/art/Atom-structure-82310862. License: CC-BY.

सुशील जोशी स्वतंत्र रूप से विज्ञान लेखन और अनुवाद करते हैं। इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ बॉम्बे (आईआईटीबी) से पीएचडी पूरी करने के बाद वे 1982 में होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम में शामिल हो गए और 2002 में इस कार्यक्रम के बन्द होने तक इससे जुड़े रहे।

अनुवाद : शशि सक्सेना **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

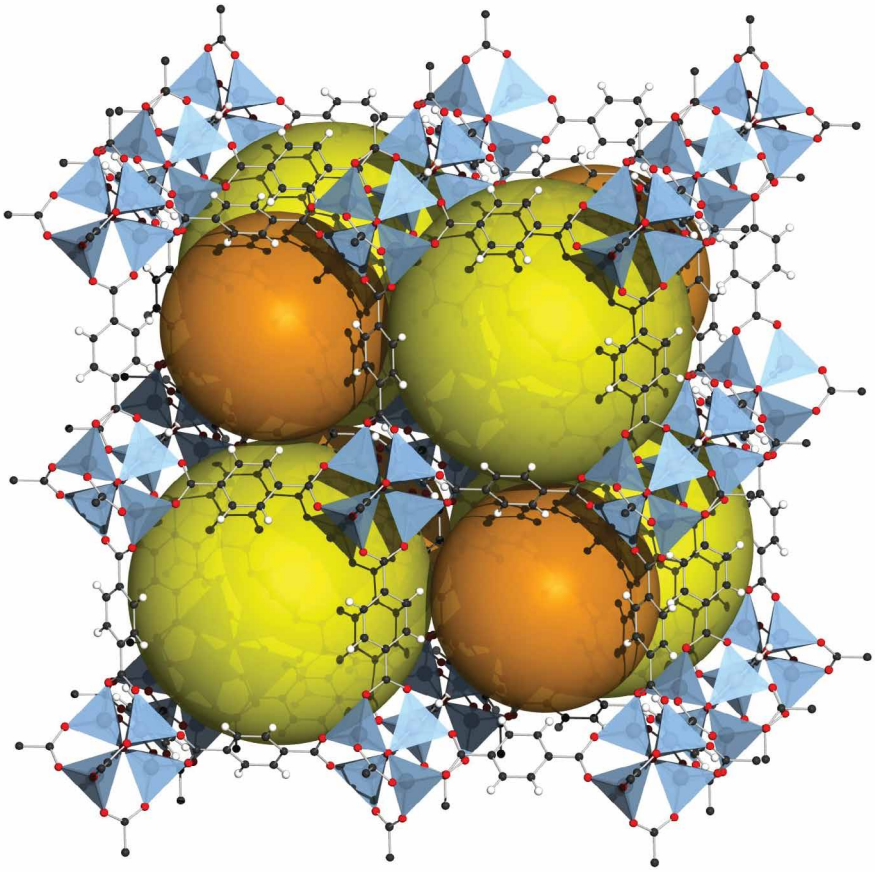

धातु-कार्बनिक ढाँचे : रासायनिक शोध में नए हरफ़नमौला

जॉएल कॉरनेलियो

धातु-कार्बनिक ढाँचे (एमओएफ़'स), ऐसे नए विकसित पदार्थ हैं जो बड़ी मात्रा में गैसों को कम दबाव पर थोड़े से आयतन में रख पाना सम्भव बनाते हैं। ये पदार्थ महत्त्वपूर्ण क्यों हैं? हम इनका इस्तेमाल कैसे करते हैं? इस लेख में एमओएफ की हमारी समझ के विकास के बारे में जानकारी दी गई है।

अप्रैल 2017 में कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी, बर्कले और मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी (एमआईटी) में काम कर रहे वैज्ञानिकों ने एक ऐसे उपकरण के प्रोटोटाइप के सफलतापूर्वक विकसित करने की सूचना दी जो सूरज की रोशनी का उपयोग करके हवा में से नमी को एकत्रित कर सकता था।[1] वर्ल्ड इकनॉमिक फ़ोरम[2] ने इसे इस साल उभरती हुई शीर्ष दस प्रौद्योगिकियों में स्थान दिया। दरअसल यह प्रोटोटाइप एक नए वर्ग के डिज़ायनर क्रिस्टल (ऐसे पदार्थ जिनकी संरचना और गुण पूर्व-निर्धारित होते हैं), जिन्हें एमओएफ कहा जाता है, के कई उपयोगों में से एक है।

एमओएफ क्या होते हैं?

इंटर्नेशनल यूनियन फ़ॉर प्योर एंड एप्लाइड केमेस्ट्री (आईयूपीएसी) धातु-कार्बनिक ढाँचों को इस तरह परिभाषित करता है : 'कार्बनिक लिगैण्ड्स के उप-सहसंयोजी ताने-बाने जिनमें सम्भावित रिक्त स्थान हों।'[3] आसान शब्दों में कहें तो एमओएफ उस वर्ग के क्रिस्टलीय यौगिक हैं जिनमें असाधारण बड़े आकार के छिद्र होते हैं जो विभिन्न आकार और साइज़ के अणुओं और आयनों को बाँध सकते हैं।

सबसे पहले 1990 में रसायनशास्त्रियों बर्नर्ड हॉस्किन्स और रिचर्ड रोबसन ने इनकी सम्भावना का पूर्वानुमान किया था।[4,5] धातु-कार्बनिक ढाँचा नाम यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिशीगन में कार्यरत एक जोर्डेनियन-अमरीकन रसायनशास्त्री ओमर यागी द्वारा 1995 में दिया गया। 1999 में ओमर यागी

बॉक्स-1 अधिशोषण : किसी ठोस की आन्तरिक और बाहरी सतहों की अपने सम्पर्क में आने वाली गैसों, द्रवों या घुले हुए ठोस पदार्थों को बाँधकर रखने की क्षमता को कहते हैं। ऐसे ठोस को अधिशोषक और जिन गैसों या घोलों को वे बाँधते हैं उन्हें अधिशोष्य कहते हैं। जब एक गैस या तरल अधिशोषित होता है तो वह ठोस के अन्दर नहीं बैठता जैसे कि अवशोषण में होता है बल्कि वह एक परत की तरह ठोस की सतह पर जमा हो जाता है।

और इयान विलियम्स के नेतृत्व में काम कर रहे दो स्वतंत्र समूहों ने पहले एमओएफ के संश्लेषण की घोषणा की थी – इन्हें क्रमशः **HKUST-1** और **MOF-5** कहा गया था।[4,6]

एमओएफ बनाने के लिए आपको धातु के एक लवण और कार्बनिक यौगिक (लिगैण्ड) की आवश्यकता होती है जो कि धातु के आयन के साथ एकाधिक सहसंयोजक बन्ध बना सके। लिगैण्ड और धातु के आयन की जमावट ऐसी संरचनाएँ बना सकती हैं जो छिद्रमय हों और अत्यधिक क्रिस्टलीय (क्रिस्टलाइन) हों। उदाहरण के लिए एमओएफ-5 (**देखें चित्र-1**) का संश्लेषण ज़िंक (जस्ता) नाइट्रेट (एक धात्विक लवण) और 1,4-बैन्ज़ीन डाईकार्बोक्सलिक अम्ल (टेरीथैलिक अम्ल) के संयोजन से होता है। अगर कोई संयोजक कई सारे सहसंयोजक बन्ध बना सकता है, तो इसका इस्तेमाल करके एमओएफ बनाया जा सकता है। पिछले दशक में हज़ारों नए एमओएफ बनाए जा चुके हैं। इसमें से सबसे प्रसिद्ध हैं – **HKUST-1**, जो कॉपर (ताँबे) का एक एमओएफ है, जिसका संश्लेषण हांगकांग यूनिवर्सिटी ऑफ़ साइंस एंड टेक्नॉलॉजी में किया गया था; **UiO-66**, जो यूनिवर्सिटी ऑफ़ ओसलो, नॉर्वे में बना ज़रकोनियम एमओएफ है, **MIL-101** क्रोमियम आधारित एमओएफ है जो इंस्टीट्यूट लेवॉज़िए, फ्रांस द्वारा बनाया गया और ज़िंक आधारित एमओएफ MOFs **ZIF-8** और **MOF-74** जिनका संश्लेषण ओमर यागी द्वारा किया गया है।[7] जल संवेदी **MOF-5** के विपरीत अधिकांश आधुनिक एमओएफ हवा, जल और कई आम विलायकों की उपस्थिति में काफ़ी स्थिर रहते हैं। परन्तु ये अम्लों और क्षारों (कुछ अपवादों के अलावा) के सम्पर्क में आने पर नष्ट हो जाते हैं। इसी तरह, ये उतने अधिक तापमान पर भी नष्ट हो जाते हैं जो इनके कार्बनिक लिगैण्ड को जलाकर CO_2 और पानी में बदलने के लिए काफ़ी हो।

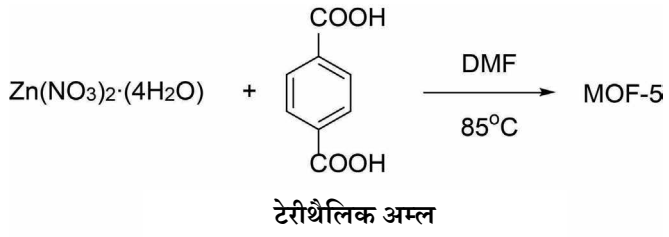

चित्र-1क : MOF-5 कैसे बनाएँ
Credits: Joel Cornelio. License: CC-BY.

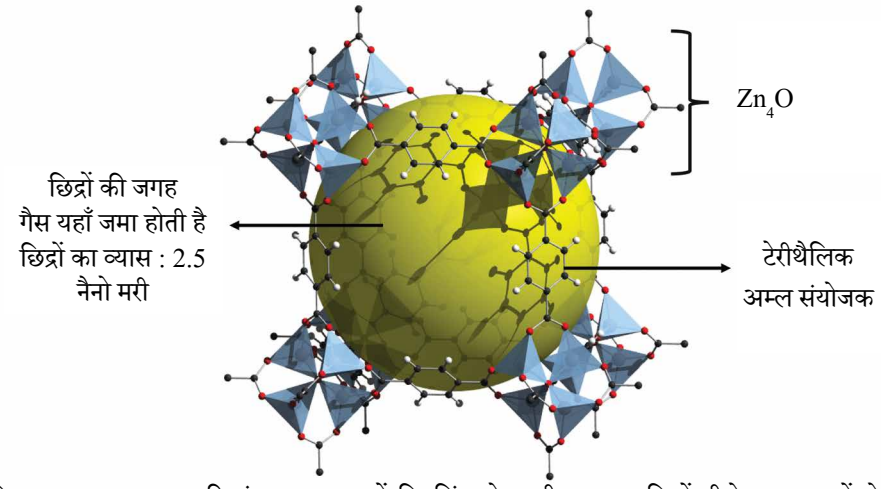

चित्र-1ख : MOF-5 की संरचना। ध्यान दें कि ज़िंक के सभी परमाणु (जिन्हें नीले चतुष्फलकों से दिखाया गया है) ऑक्सीजन के एक केन्द्रीय परमाणु (लाल रंग वाले) से जुड़कर Zn_4O संकुल बना रहे हैं। यह ज़िंक, ज़िंक नाइट्रेट से मिलता है। ज़िंक के परमाणु टेरीथैलिक अम्ल के परमाणु ऑक्सीजन परमाणुओं से भी जुड़े हुए हैं। टेरीथैलिक अम्ल का प्रत्येक अणु दो Zn_4O संकुलों से जुड़कर छिद्र बनाता है (पीले रंग से दिखाए गए हैं), जिनमें गैस क़ैद होती है।
Credits: Recreated by Joel Cornelio using Tony Boehle's template, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:IRMOF-1_wiki.png. License: Public Domain.

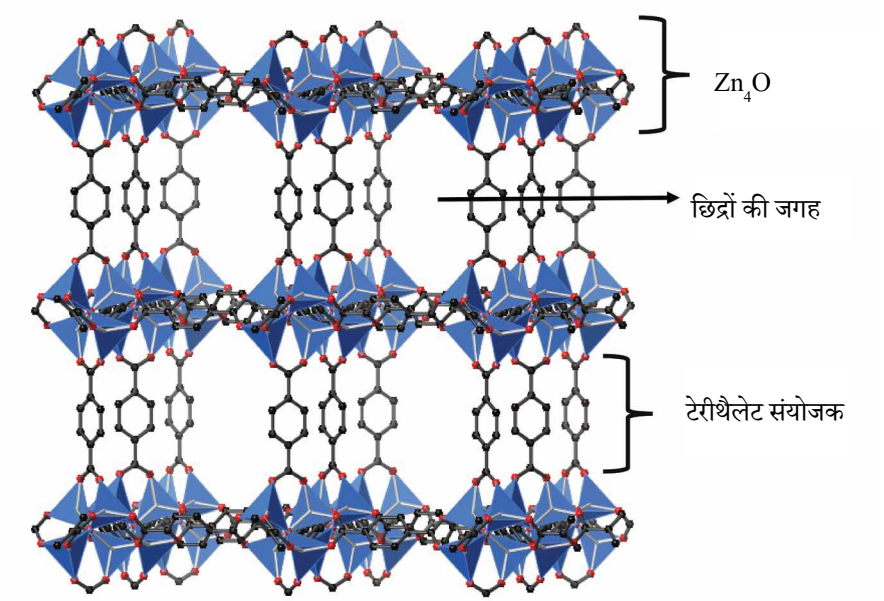

चित्र-1ग : MOF-5 की विस्तारित क्रिस्टल संरचना
Credits: Joel Cornelio. License: CC-BY.

बॉक्स-2 उत्प्रेरण : किसी उत्प्रेरक की मदद से किसी रासायनिक क्रिया की गति को बढ़ाने को उत्प्रेरण कहते हैं। यह मुख्यतः दो तरह का होता है – समांगी उत्प्रेरण और विषमांगी उत्प्रेरण। समांगी उत्प्रेरण में अभिकर्मकों और उत्प्रेरक को एक ही विलायक में घोलते हैं। इसलिए क्रिया पूरी होने के बाद उत्प्रेरक और अभिक्रिया मिश्रण को अलग करने के लिए अन्य रसायन और ऊर्जा की ज़रूरत पड़ती है। विषमांगी उत्प्रेरण में अभिक्रिया के उत्प्रेरण के लिए अविलेय, अधिक पृष्ठीय क्षेत्रफल वाले पदार्थों का इस्तेमाल होता है, इसलिए उत्प्रेरक को अभिक्रिया मिश्रण से छानने की आसान विधियों द्वारा अलग किया जा सकता है। इसलिए रासायनिक संश्लेषण के लिए अधिकांश उद्योग विषमांगी उत्प्रेरण का इस्तेमाल करते हैं। उदाहरण के लिए सल्फ्यूरिक अम्ल के उत्पादन में प्लेटिनम के साथ वेनेडियम पेंटाऑक्साइड का और हैबर प्रक्रिया द्वारा अमोनिया के संश्लेषण में आयरन (लोहे) के बारीक चूरे का इस्तेमाल होता है।

एमओएफ के उपयोग

(क) गैसों को सोखना

एमओएफ गैसों को सोखने की अपनी अत्यधिक क्षमता के लिए जाने जाते हैं। गैसों के अणुओं के बीच कमज़ोर अन्तरआण्विक बल होते हैं। इसलिए गैसों की बहुत अधिक मात्रा को थोड़े से आयतन में केवल उच्च दबाव पर ही रखा जा सकता है। इस प्रक्रिया में बहुत अधिक ऊर्जा लगती है। एमओएफ के इस्तेमाल से इस समस्या से बचा जा सकता है – सक्रियकृत चारकोल की तरह, एमओएफ भी गैसों के अणुओं को अधिशोषण द्वारा बाँध लेते हैं (**देखें बॉक्स-1**)। परन्तु सक्रियकृत चारकोल के विपरीत एमओएफ में काफ़ी विविधता सम्भव है – विभिन्न तत्वों और तरीक़ों के इस्तेमाल से विविध एमओएफ बनाए जा सकते हैं।

किसी एमओएफ की गैसों को क़ैद करने की क्षमता का आधार उनका बड़ा पृष्ठीय क्षेत्रफल होता है – 2500 से 5000 मी^{2}/ग्रा तक। कुछ एमओएफ जैसे **NU-109E** का पृष्ठीय क्षेत्रफल 7000 मी^{2}/ग्रा तक होता है। इसका अन्दाज़ इस तरह लगाएँ कि एक ग्राम **NU-109E** का आकार चीनी के एक क्रिस्टल के बराबर होगा परन्तु उसका आन्तरिक पृष्ठीय क्षेत्रफल 27 टैनिस मैदानों के बराबर होगा![8] और चूँकि इस आन्तरिक पृष्ठीय क्षेत्रफल का हर छोटा अंश गैस के अणुओं का अधिशोषण कर सकता है इसलिए एमओएफ का इस्तेमाल छोटे-से आयतन में बड़ी मात्रा में गैस इकट्ठा करने के लिए किया जा सकता है। किसी भी

बॉक्स-3 ऐल्डोल अभिक्रिया : इसमें दो कार्बोनिल (ऐसे योगिक जिनमें कार्बन-ऑक्सीजन द्वी-आबन्ध होता है) यौगिकों के संयोजन से ऐल्डोल नाम का उत्पाद बनता है।

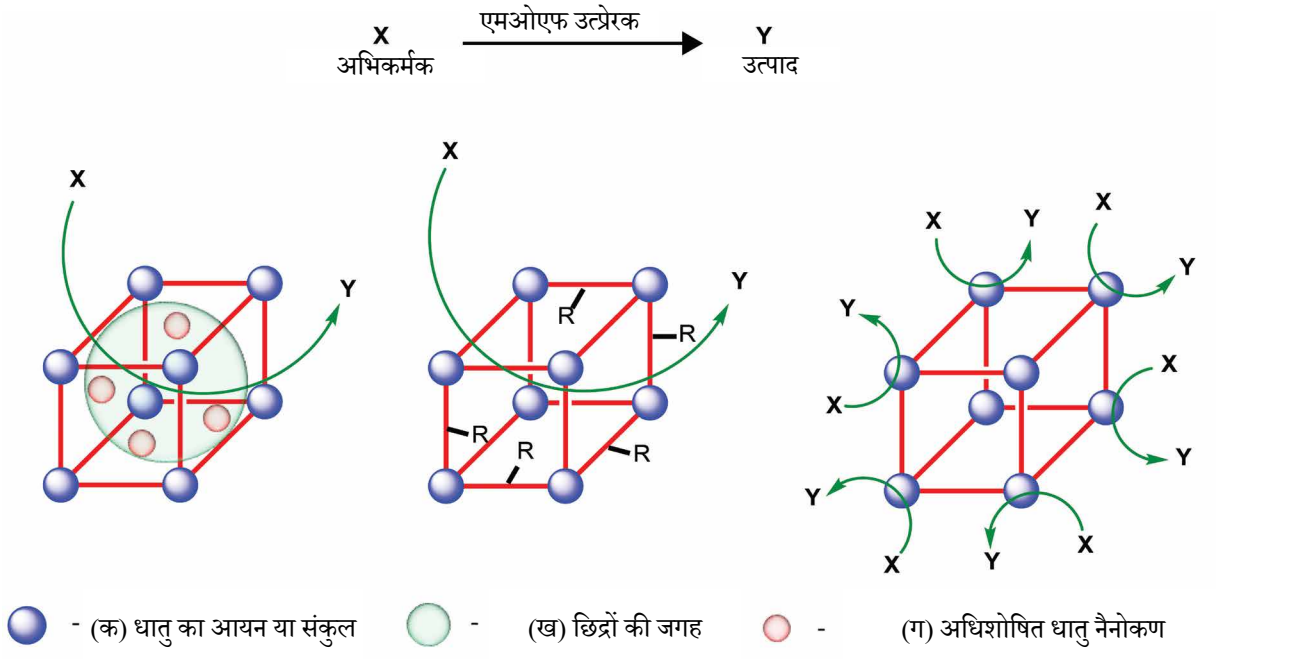

चित्र-2 : एमओएफ आधारित उत्प्रेरण के तरीक़े। X और Y क्रमशः अभिकर्मक और उत्पाद दर्शा रहे हैं। एमओएफ को घनों के रूप में दिखाया गया है। कार्बनिक संयोजकों को लाल लाइनों से दर्शाया गया है जोकि इन घनों के किनारे के रूप में दिख रहे हैं और नीले गोलक धातु के आयन या संकुल दर्शा रहे हैं। **(क)** एमओएफ की छिद्रों की जगह का धातु के नैनो कणों के लिए उत्प्रेरक के सहारे के रूप में इस्तेमाल **(ख)** कार्बनिक संयोजकों को उत्प्रेरकों के क्रियात्मक समूह बना देना (R से दर्शाया गया है) **(ग)** धातु के आयनों या संकुलों को उत्प्रेरण के लिए इस्तेमाल करना।
Credits: Joel Cornelio. License: CC-BY.

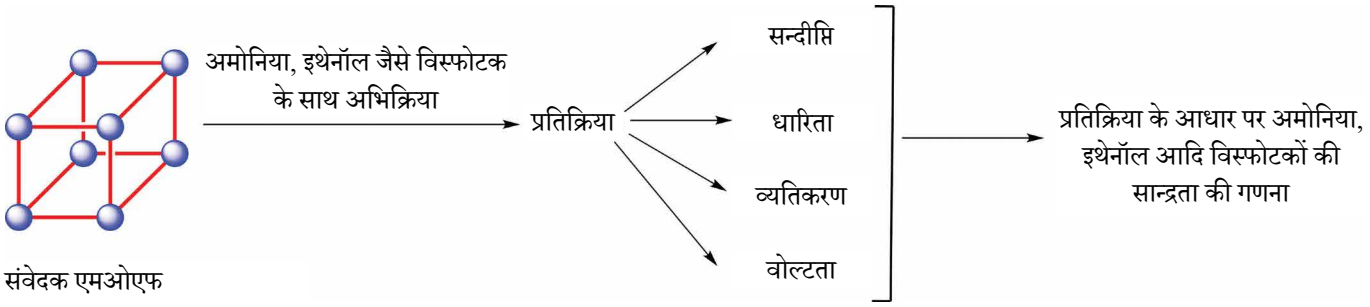

चित्र-3 : एमओएफ का एक रासायनिक संवेदक की तरह इस्तेमाल करने की एक आम योजना।
Credits: Joel Cornelio. License: CC-BY.

बॉक्स-4 : माइकल एडिशन – तब होता है जब एक C-C असन्तृप्त कार्बोनिल यौगिक किसी न्यूक्लियोफाइल (ऐसा यौगिक जो इलेक्ट्रॉन जोड़ी दे सकता है) से अभिक्रिया करता है। C-C असन्तृप्ति, कार्बोनिल कार्बन के पास के कार्बन के अणुओं के बीच होनी चाहिए।

एमओएफ को कई बार इस्तेमाल किया जा सकता है – इसके लिए बस उसे गर्म करके या चूषण द्वारा अधिशोषित गैस को उस पर से हटाना होता है।

एमओएफ की गैसों को अधिशोषित करने की क्षमता के कई दिलचस्प उपयोग हैं। इसका एक उदाहरण परिवहन उद्योग में मिलता है। जर्मनी की एक रसायन कम्पनी बीएएसएफ (बैडिशे एनिलिन एंड सोडा फैबरिक) ने वाहनों मॉडल फोर्ड एफ-550 जैसे ट्रक में सीएनजी (कंप्रैस्ड नेचुरल गैस) के संग्रह के लिए जो सिलेण्डर बनाए हैं उनमें एमओएफ हैं।[9] चूँकि एमओएफ सीएनजी के संग्रह को आम सिलेण्डरों की तुलना में तीन-चार गुना बढ़ा देते हैं इसलिए उनसे सिलेण्डर को उतनी जल्दी-जल्दी भरवाने की ज़रूरत नहीं पड़ती है। हालाँकि यह एक महत्त्वपूर्ण फ़ायदा है परन्तु एमओएफ वाले वाहन बिक्री के लिए अभी तक उपलब्ध नहीं हुए हैं। 2014 में अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार में कच्चे तेल की कीमतों में अचानक गिरावट आने के कारण सीएनजी काफ़ी सस्ता हो गया था और इससे इस तरह के वाहनों के व्यवसायीकरण के लिए आर्थिक दिलचस्पी कम हो गई।[10] एक और उदाहरण है, न्यूमैट टैक्नॉलॉजीस जैसी कम्पनियों ने ज़हरीली गैसों जैसे आरसीन (AsH_3), फॉसफ़ीन (PH_3), बोरोन ट्राईफ्लोराइड (BF_3), के संग्रहण के लिए एमओएफ युक्त सिलेण्डर बनाए हैं (जिन्हें ION-X7 कहा जाता है)। अर्धचालक (सेमीकंडक्टर) उद्योग में ये गैसें बहुत अधिक उपयोगी हैं परन्तु ये बहुत ही ज़हरीली हैं और अगर साँस के साथ अन्दर ले लिया जाए तो इनसे गम्भीर नुक़सान हो सकता है। एमओएफ युक्त सिलेण्डरों में इन्हें वायुमण्डलीय दबाव से कम दबाव पर संग्रहित किया जा सकता है। चूँकि गैसों में अधिक दबाव से कम दबाव की ओर जाने की प्रवृत्ति होती है, इसलिए कम दबाव पर संग्रहण से ठीक से सील नहीं हुए सिलेण्डरों में से भी इनके रिसने की सम्भावना कम हो जाती है।

बॉक्स-5 सन्दीप्ति : यह किसी पदार्थ द्वारा प्रकाश का उत्सर्जन है जब उसे किसी तरह की ऊर्जा (ऊष्मा के अलावा) दी जाए। यह ऊर्जा कई तरह की हो सकती है : आपतित (इंसीडेंट) फोटॉन के रूप में हो सकती है (फोटो सन्दीप्ति), यांत्रिक बल के रूप में (यांत्रिकी सन्दीप्ति), विद्युत के रूप में (विद्युतीय सन्दीप्ति) या ध्वनि के रूप में (ध्वनि सन्दीप्ति)। एक सन्दीप्तिशील पदार्थ इस ऊर्जा को अवशोषित करके कम ऊर्जा के प्रकाश का उत्सर्जन करता है। कुछ उदाहरण हैं चमकदार छड़ी, अँधेरे में चमकने वाले घड़ी के डायल या फिर सड़क पर लगे संकेत आदि।

बॉक्स-6 : रासायनिक संवेदक – वे अणु हैं जो दूसरे अणुओं से अभिक्रिया करके सन्दीप्ति, धारिता, वोल्टता या अन्य भौतिक गुणों में मापन-योग्य बदलाव पैदा करते हैं। कई तरह के उपकरणों में इनकी उपयोगिता है जैसे ग्लूकोज़ मीटर (ख़ून में ग्लूकोज़ का स्तर नापने के लिए), श्वास परीक्षक यंत्र (साँस में अल्कोहल का स्तर नापने के लिए)।

(ख) उत्प्रेरण

गैसों का शोषण करना एमओएफ की एकमात्र विशेषता नहीं है। उनका विशाल पृष्ठीय क्षेत्रफल इन्हें रासायनिक अभिक्रियाओं में उत्प्रेरण के लिए भी उपयोगी बनाता है (**देखें बॉक्स-2**)।

एमओएफ आधारित उत्प्रेरण में तीन युक्तियों का इस्तेमाल हो सकता है। पहले तरीक़े में धातु के नैनो-कणों को एमओएफ के छिद्रों में अधिशोषित किया जाता है। एमओएफ के छिद्रों में विसरित हो रहे अभिकर्मक अधिशोषित नैनो कणों के साथ जुड़ते हैं और इस तरह से उत्प्रेरण हो पाता है (**देखें चित्र-2 क**)। इसका इस्तेमाल अल्कीन्स के हाइड्रोजनीकरण में और एपॉक्साइड्स, हाइड्रोजन परऑक्साइड व मिथेनॉल के संश्लेषण में किया जाता है (**देखें चित्र-2 ख**)। एक अन्य युक्ति में उत्प्रेरण क्रिया वाले क्रियात्मक समूहों (जैसे ग्वानिडीन, फिनाइलएनालीन, प्रोलीन, इमिडेज़ोल आदि) को कार्बनिक लिगैण्ड वाले एमओएफ के साथ जोड़ दिया जाता है।

ऐसे एमओएफ का इस्तेमाल कुछ बुनियादी कार्बनिक रूपान्तरणों के लिए किया जा सकता है – जैसे ऐल्डोल अभिक्रिया (**देखें बॉक्स-3**), माइकल एडिशन (**देखें बॉक्स-4**) आदि। तीसरी युक्ति में एमओएफ के धातु संकुलों के ऊपर ही उत्प्रेरण होता है (**देखें चित्र-2 ग**)। उदाहरण के लिए प्रसिद्ध ज़ीगलर नाटा अभिक्रिया (एथीलीन के बहुलीकरण द्वारा पॉलीएथीलीन बनाना) के लिए टाइटेनियम आधारित एमओएफ का इस्तेमाल किया गया है। उत्कृष्ट धातुओं (जैसे रोडियम, प्लेटिनम, रूथेनियम या पैलेडियम) के संकुलों वाले एमओएफ हाइड्रोजनीकरण अभिक्रियाओं के उत्प्रेरकों के रूप में उपयोगी साबित हुए हैं। आज ऐसे अधिक गुणकारी और स्थिर एमओएफ बनाने के लिए शोध हो रहे हैं जो कि एक से अधिक तरह की अभिक्रियाओं के लिए उत्प्रेरक का काम कर सकें।[11]

(ग) सन्दीप्ति

अगर एमओएफ को बनाने के लिए सन्दीप्तिशील पदार्थों जैसे लैन्थेनाइड तत्व (यूरोपियम, डिसप्रोसियम आदि) का इस्तेमाल किया जाए तो वे भी सन्दीप्तिशील हो सकते हैं[12,13] (**देखें बॉक्स-5**)। एमओएफ का एक और फ़ायदा यह है कि वे किसी भी मनचाहे रंग की सन्दीप्ति दे सकते हैं। उदाहरण के लिए एमओएफ की शुद्ध सफ़ेद प्रकाश उत्पन्न करने की क्षमता के प्रकाश उद्योग में महत्त्वपूर्ण उपयोग हैं।[14]

(घ) रासायनिक संवेदक

सबसे आम वर्ग के एमओएफ संवेदक सन्दीप्ति में मापन-योग्य बदलाव पैदा करने की अपनी क्षमता पर आधारित हैं। उदाहरण के लिए टेट्राफिनायल लिगैण्ड या लैन्थेनाइडस वाले एमओएफ विस्फोटकों या भारी धातुओं को सेंस करने (पकड़ने) लिए इस्तेमाल हो रहे हैं। विस्फोटक के नाइट्रो (NO_2), समूह और एमओएफ के लिगैण्ड के बीच हाइड्रोजन बन्ध बनने से सन्दीप्ति में बदलाव होता है। एक और वर्ग के एमओएफ संवेदक धारिता में बदलाव ला पाने की अपनी क्षमता के आधार पर काम करते हैं। उदाहरण के लिए इनमें से कुछ के लिए रिपोर्ट किया गया है कि वे अमोनिया की 25पीपीबी (पार्ट पर बिलियन, एक अरब में से एक) से भी कम मात्रा को पकड़ सकते हैं।[15] एक तीसरे वर्ग के एमओएफ संवेदक इथेनॉल, प्रोपेन और पानी के व्यतिकरण में मापन-योग्य बदलाव को पकड़ पाते हैं (**देखें चित्र-3**)।[16]

रासायनिक संवदेकों में रूप में एमओएफ के इस्तेमाल के लिए मौजूदा शोध का उद्देश्य अधिक विशिष्टता वाले सरल उपकरण बनाना है। ऐसे एमओएफ का निर्माण जो विशेष रूप से केवल एक विश्लेष्य पदार्थ को पकड़े काफ़ी मुश्किल साबित हुआ है और यह शोध का एक सक्रिय क्षेत्र है।

अन्त में

पिछले दो दशकों में एमओएफ रसायनशास्त्र के क्षेत्र में काफ़ी विस्तार हुआ है। 1999 में पहले कुछ एमओएफ के संश्लेषण के बाद से आज कम-से-कम 6000 नए एमओएफ की संरचना हर साल प्रकाशित होती हैं। शोध ने कई क्षेत्रों में उनकी उपयोगिता को और तराशने में मदद की है – गैसों के शोषण और उत्प्रेरण से लेकर सन्दीप्ति और रासायनिक संवेदकों तक। शोध से इनके नए उपयोग भी उजागर हुए हैं – इमारतों को ठण्डा या गर्म करने के लिए एमओएफ का इस्तेमाल और स्वास्थ्य सम्बन्धी उत्पादों के लिए रोगाणुरोधी आवरण का उत्पादन, हवा में से नमी निकालना और बिजली संयंत्रों के उत्सर्जन में से कार्बन डाईऑक्साइड निकालना आदि।[10] इस प्रगति ने नई तरह के छिद्रित पदार्थों के संश्लेषण को बल दिया है – जिन्हें कोवेलेंट ऑरगेनिक फ्रेमवर्कस[17] (सीओएफ़) और हाईब्रिड अल्ट्रापोरस मैटीरिअल[18] (एचयूएम) कहा जाता है। एमओएफ के संश्लेषण के लिए आज जो सबसे बड़ी चुनौती है वह है उनकी उच्च उत्पादन लागत, जो कि उनमें लगने वाले कार्बनिक लिगैण्ड्स के निर्माण के लिए इस्तेमाल होने वाले ख़ास तरीक़ों और कौशल के कारण होती है। अब जबकि 2016 में पहले कुछ एमओएफ आधारित उत्पाद बाज़ार में उतरे हैं[10] तो ऐसा लगता है कि अधिक लागत ज़्यादा समय तक एक चुनौती नहीं रहेगी।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: MOF-5. Tony Boehle, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:MOF-5.png. License: CC-BY-SA.

References

1. Nelson J. D & Carbeck J. (2017). "Off-Grid Devices Draw Drinking Water from Dry Air". Scientific American. URL: https://www.scientificamerican.com/article/harvesting-clean-water-from-air/
2. World Economic Forum. Top 10 Emerging Technologies 2017. URL: http://www3.weforum.org/docs/WEF_Top_10_Emerging_Technologies_report_2017.pdf.
3. Batten R.S et al. (2013). Terminology of Metal–Organic Frameworks and Coordination Polymers (IUPAC Recommendations 2013). Pure and Applied Chemistry 85, 8 (2013): 1715.
4. Vaughan O. (1999) Porous artificial crystals. Nature Milestones Crystallography. URL: https://www.nature.com/milestones/milecrystal/full/milecrystal22.html.

5. Hoskins B. F. & Robson R. (1990). Design and Construction of a New Class of Scaffolding-Like Materials Comprising Infinite Polymeric Frameworks of 3D-Linked Molecular Rods. Journal of the American Chemical Society 112, 4: 1546-54.
6. Li H. et al. (1999). Design and Synthesis of an Exceptionally Stable and Highly Porous Metal-Organic Framework. Nature 402, 6759: 276-79.
7. Furukawa, H. et al. (2013). The Chemistry and Applications of Metal-Organic Frameworks. Science 341, 6149: 1230444.
8. Farha O. K. et al. (2012). Metal–Organic Framework Materials with Ultrahigh Surface Areas: Is the Sky the Limit? Journal of the American Chemical Society 134, 36: 15016-21.
9. Zeintl C. (2014). New Technology Makes Natural Gas Marketable. BASF SE URL: http://www.automotive.basf.com/mof_technology_natural_gas/.
10. Notman N. (2017). MOFs Find a Use. The Royal Society of Chemistry. URL: https://www.chemistryworld.com/feature/mofs-find-a-use/2500508.article.
11. Gascon J. et al. (2013). Metal Organic Framework Catalysis: *Quo Vadis?* ACS Catalysis 4, 2: 361-78.
12. Wen Y. et al. (2017). Introduction of Red-Green-Blue Fluorescent Dyes into a Metal–Organic Framework for Tunable White Light Emission. Advanced Materials 29, 37: 1700778.
13. Wang X. et al. (2017). Highly Efficient White-Light Emission and UV–Visible/NIR Luminescence Sensing of Lanthanide Metal–Organic Frameworks. Crystal Growth & Design 17, 4: 2178-85.
14. Sava D. F. et al. (2012). Intrinsic Broad-Band White-Light Emission by a Tuned, Corrugated Metal–Organic Framework. Journal of the American Chemical Society 134, 9: 3983-86.
15. Shustova N. B. et al. (2013). Selective Turn-on Ammonia Sensing Enabled by High-Temperature Fluorescence in Metal-Organic Frameworks with Open Metal Sites. Journal of the American Chemical Society 135, 36: 13326-9.
16. Kreno, L. E. et al. (2012). Metal-Organic Framework Materials as Chemical Sensors. Chemical Reviews 112, 2: 1105-25.
17. Côté A. P. et al. (2005). Porous, Crystalline, Covalent Organic Frameworks. Science 310, 5751: 1166-70.
18. Kumar A. et al. (2017). Hybrid Ultramicroporous Materials (HUMs) with Enhanced Stability and Trace Carbon Capture Performance. Chemical Communications 53, 44: 5946-49.

जॉएल कॉरनेलियो मंगलोर से हैं। वे सेंट एलोसियस कॉलेज (स्वायत्तशासी) मंगलोर में असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (2013-2015) और टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ़ फंडामेंटल रिसर्च (टीआईएफआर) मुम्बई में जूनियर रिसर्च फ़ेलो के रूप में काम कर चुके हैं। इस समय वे मैसे यूनिवर्सिटी, पामेरस्टन नॉर्थ, न्यूज़ीलैण्ड में पीएचडी कर रहे हैं।

अनुवाद : शशि सक्सेना **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

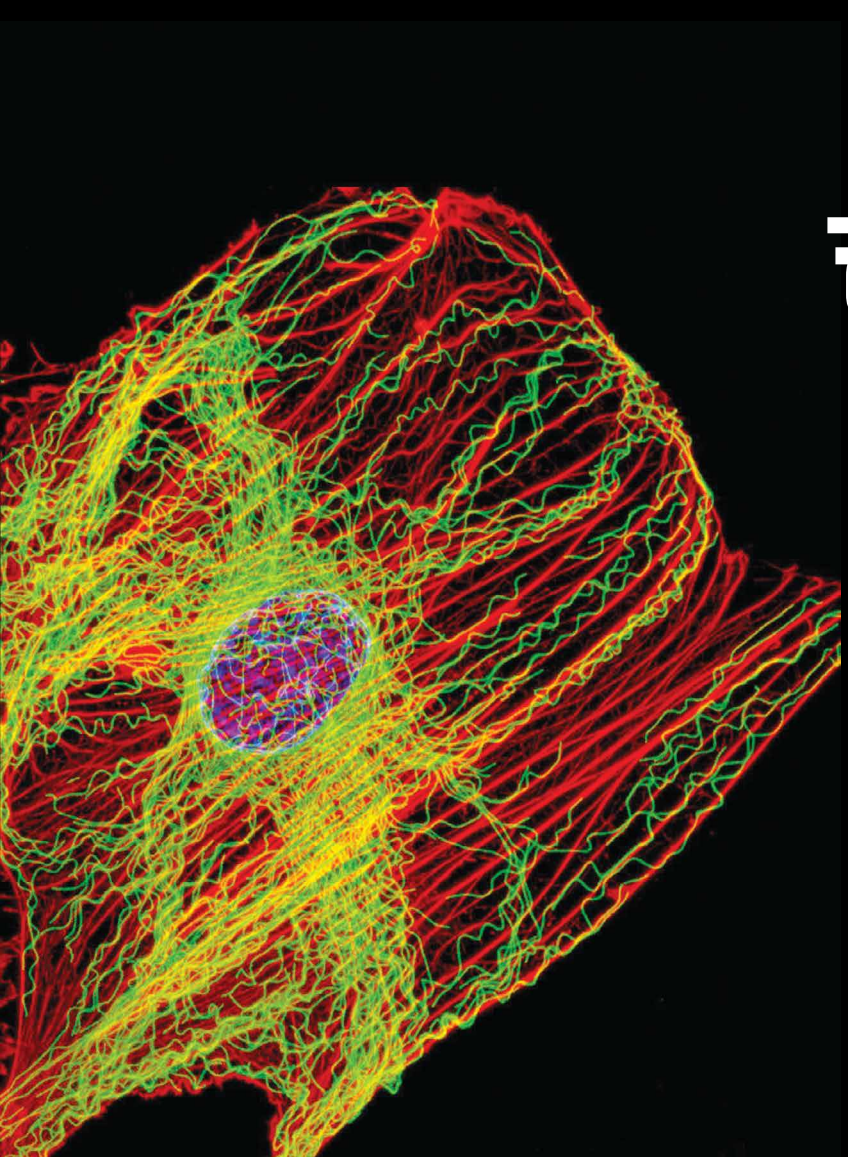

चमकते टैग : चिकित्सा शास्त्र का एक अपरिहार्य साधन

नीरजा दशपुत्रे

इमेजिंग तथा रोग निदान में प्रतिदीप्त टैग का उपयोग कई महत्त्वपूर्ण खोजों का हिस्सा रहा है। प्रतिदीप्ति क्या है? इसकी खोज कैसे हुई? रोग निदान में प्रतिदीप्त अणुओं का उपयोग कैसे किया जाता है?

वर्ष 2008 में रसायनशास्त्र का नोबल पुरस्कार ओसामू शिमोमुरा, मार्टिन चाफ़ी व रॉजर सिएन को संयुक्त रूप से दिया गया था। इन वैज्ञानिकों को यह पुरस्कार समुद्री जेली फिश में पाए जाने वाले एक प्रतिदीप्त प्रोटीन की खोज और उसका उपयोग कोशिकाओं के आन्तरिक कामकाज को समझने में करने के लिए दिया गया था।

नोबल फ़ाउण्डेशन ने इस योगदान की अहमियत को स्थापित करते हुए कहा था कि इनके योगदानों से कोशिकाओं की कुछ ऐसी प्रक्रियाओं को देखना सम्भव हुआ है, "जो पहले ओझल थीं, जैसे कि हमारे मस्तिष्क की तंत्रिका कोशिकाओं की वृद्धि व केंसर कोशिकाओं का फैलाव।"[1]

फ़ाउण्डेशन ने यह भी कहा कि प्रतिदीप्त अणुओं की खोज और टैग के रूप में उनके अनुप्रयोग ने अन्य क्षेत्रों में भी त्वरित प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया है, ख़ासतौर से जीवविज्ञान व चिकित्सा के क्षेत्र में।

प्रतिदीप्त टैग क्या हैं?

प्रतिदीप्ति एक भौतिक परिघटना है जिसमें कुछ पदार्थ प्रकाश उत्सर्जित करते हैं, जब उनका सम्पर्क विद्युत-चुम्बकीय विकिरण (दृश्य प्रकाश, पराबैंगनी विकिरण आदि) से होता है। इस प्रक्रिया के तीन चरण होते हैं। प्रतिदीप्त पदार्थों में ऐसे अणु (प्रमुख रूप से ऐरोमेटिक यौगिक) होते हैं, जिन्हें फ्लोरोफ़ोर कहते हैं। फ्लोरोफ़ोर विकिरण से फोटॉन (ऊर्जा) का अवशोषण करते हैं। इसके फलस्वरूप फ्लोरोफ़ोर के इलेक्ट्रॉन उच्च व अस्थिर ऊर्जा स्तर में पहुँच जाते हैं। यहाँ वे चन्द नेनोसेकंड

चित्र-1 : (क) फ्लोरेसीन की संरचना

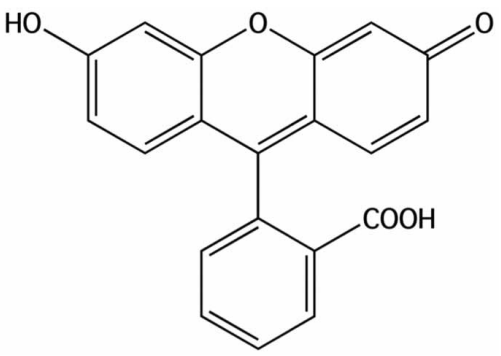

Credits: Neeraja Dashaputre. License: CC-BY-NC.

(ख) लाल रंजक का पाउडर
Credits: Benjah-bmm27, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Fluorescein-sample.jpg. License: Public Domain.

(ग) पराबैंगनी प्रकाश में देखने पर पानी में घुले फ्लोरेसीन की चटख हरी चमक
Credits: Bricksnite, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/w/index.php?curid=5062089. License: CC-BY.

(10^{-9} second) से ज़्यादा समय तक नहीं टिक पाते और अपनी अतिरिक्त ऊर्जा को प्रकाश के रूप में वातावरण में त्यागते हुए निम्न स्थिर स्तर में लौट आते हैं। लिहाज़ा, लगता है कि ये पदार्थ अपने आप अन्दर से चमक रहे हैं।

प्रतिदीप्ति के सन्दर्भ में सबसे पहला विवरण सन 1565 में स्पेन के चिकित्साविद व वनस्पति वैज्ञानिक निकोलस मोनार्डेस के अवलोकनों से प्राप्त होता है। मोनार्डेस ने देखा कि मेक्सिकन किडनीवुड (*Lignum nephriticum*) नामक एक पेड़ की छाल को पानी में रखने पर वह एक चमकीला नीला प्रकाश देती है। यह दीप्ति मैटलेलीन नामक एक फ्लोरोफ़ोर के कारण होती है। यह उस पेड़ की छाल में फ्लेवोनॉएड समूह के पदार्थों के ऑक्सीकरण से प्राकृतिक रूप से बनता है।

सन 1871 में एडॉल्फ़ वॉन बेयर ने पहली बार यह दर्शाया कि संश्लेषित पदार्थ भी प्रतिदीप्ति पैदा कर सकते हैं। बेयर ने फ्लोरेसीन नामक एक लाल रंग का रंजक बनाया जो पानी में डालने पर चमकीला हरा हो जाता है (**चित्र-1**)।

फ्लोरेसीन की संरचना की पड़ताल से पता चला है कि इसमें एकल व द्विबन्ध एक के बाद एक पाए जाते हैं, जिसे 'संयुग्मन' कहा जाता है। रसायनविदों ने इस जानकारी का प्रयोग करके कई संयुग्मित प्रतिदीप्त रंजकों का संश्लेषण किया है जो कई रंगों को प्रदर्शित करते हैं।

फ्लोरेसीन के सबसे मशहूर उपयोग की खोज द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान हुई थी। जर्मन विमान चालकों को निर्देशित किया जाता था कि यदि उनके विमान को समुद्र में मार गिराया जाए तो वे अपने आपातकालीन किट में फ्लोरेसीन की शीशियों से फ्लोरेसीन को समुद्र में फैला दें ताकि उनकी स्थिति का अन्दाज़ लग सके। तनुकृत होने पर फ्लोरेसीन चमकीले आस-पास के पानी में हरे रंग की दीप्ति पैदा करता है जिससे काफ़ी दूरी से ही हवाई बचाव अभियान के लिए स्थिति देखना सम्भव होता है।

कुछ प्रतिदीप्त पदार्थों के इसी गुण यानी एक टैग के रूप में कार्य करने की क्षमता का व्यापक अनुप्रयोग हुआ है। उदाहरण के लिए न केवल समुद्री बचाव अभियान हेतु अपितु तेल व पानी के रिसाव की पड़ताल में भी आज-कल इसका व्यापक प्रयोग होता है।

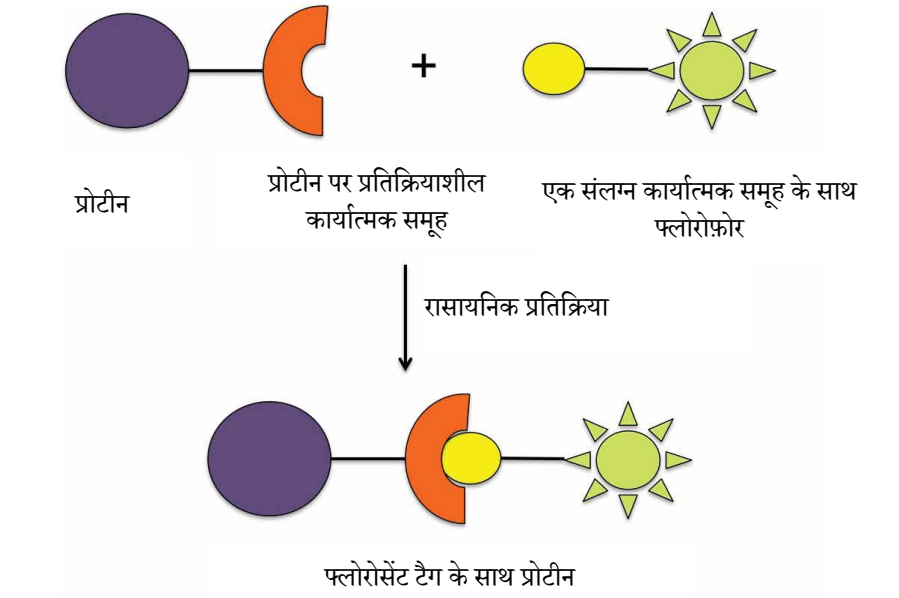

चित्र-2 : प्रतिदीप्त टैग किए गए प्रोटीन के संश्लेषण को दर्शाने वाली एक योजना।
Credits: Neeraja Dashaputre. License: CC-BY-NC.

पर सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि विज्ञान में प्राकृतिक व संश्लेषित दोनों तरह के प्रतिदीप्त पदार्थों का व्यापक अनुप्रयोग टैग, प्रोब व लेबल के रूप में हो रहा है।

इन टैग को रासायनिक अथवा एंज़ाइमी तरीक़ों से जैव अणुओं (जैसे एमीनो अम्ल, प्रोटीन, एंटीबॉडी एवं न्यूक्लिक अम्ल) से जोड़ा जा सकता है। किसी विशेष तरंगदैर्ध्य के प्रकाश की उपस्थिति में ये टैग चमककर कोशिकाओं, ऊतकों व अंगों में इनसे जुड़े जैव-अणुओं की उपस्थिति, स्थान व पैटर्न बता देते हैं (**चित्र-2**)।

सन 1962 में प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले प्रतिदीप्त प्रोटीन की खोज प्रतिदीप्ति इमेजिंग में एक महत्त्वपूर्ण सफलता थी। एक जापानी जैवरसायनविद व समुद्र जीवविज्ञानी ओसामू शिमोमुरा जेली फिश की एक प्रजाति *Aequorea Victoria,* की नीली-हरी दीप्ति का अध्ययन कर रहे थे। इस जेली फिश से एक जैव प्रतिदीप्त प्रोटीन (रासायनिक अभिक्रिया से ऊर्जा अवशोषित कर प्रकाश पैदा करने वाला) को पृथक करते समय उन्हें एक अन्य प्रोटीन मिल गया जो लगता था कि उस प्रतिदीप्त प्रोटीन से जुड़ा था। उन्होंने इस जैव-प्रतिदीप्त प्रोटीन का नाम जेली फिश के वंश के आधार पर एक्वोरिन (Aequorin) रखा। दूसरे प्रोटीन का नाम उन्होने 'ग्रीन फ्लोरेसेन्ट प्रोटीन' (जीएफपी) रखा क्योंकि वह पराबैंगनी प्रकाश में चमकीली हरी प्रतिदीप्ति देता था। आगे चलकर यह पाया गया कि जेली फिश की नीली हरी चमक एक्वोरिन व जीएफपी का मिला-जुला प्रभाव था – एक्वोरिन से नीला रंग जैव सन्दीप्त से पैदा होता है जबकि जीएफपी इसी नीले प्रकाश को अवशोषित कर हरे रंग का प्रतिदीप्ति पैदा करता है। चूँकि यह अमीनो अम्लों की शृंखला से बना एक प्राकृतिक फ्लोरोफ़ोर है, इसलिए संश्लेशित फ्लोरोफ़ोर की तुलना में इसे कोशिकाओं में आसानी से जोड़ा जा सकता है। अलबत्ता, जेली फिश से शुद्ध रूप में इस प्रोटीन के निष्कर्षण की दिक़्क़तों की वजह से इसका अनुप्रयोग सीमित बना रहा। सन 1992 में डगलस प्राशीर नामक एक अमरीकी आणविक जीवविज्ञानी ने जीएफपी के जीन का क्लोनिंग किया। जिससे इसके उपयोग की व्यापक सम्भावनाओं का रास्ता खुल गया। अब इसे प्रोटीन या कोशिकांगों के साथ एक टैग के रूप में जोड़ा जा सकता था या जीनोम में जोड़कर ज़रूरत पड़ने पर अभिव्यक्त करवाया जा सकता था। 1994 में गोलकृमि (*Caenorhabditis elegans)* में तंत्रिकाओं के विशेष परिपथों की पहचान सम्बन्धी प्रयोगों की शृंखला के आधार पर अमरीकी तंत्रिका जीवविज्ञीनी मार्टिन चाफ़ी ने प्रयोग करके सर्वप्रथम इसके व्यापक अनुप्रयोग की सम्भावनाओं को उजागर किया। उदाहरण के लिए, अपने एक पहले-पहले प्रयोग में चाफ़ी ने

चित्र-3 : हरा प्रतिदीप्त प्रोटीन

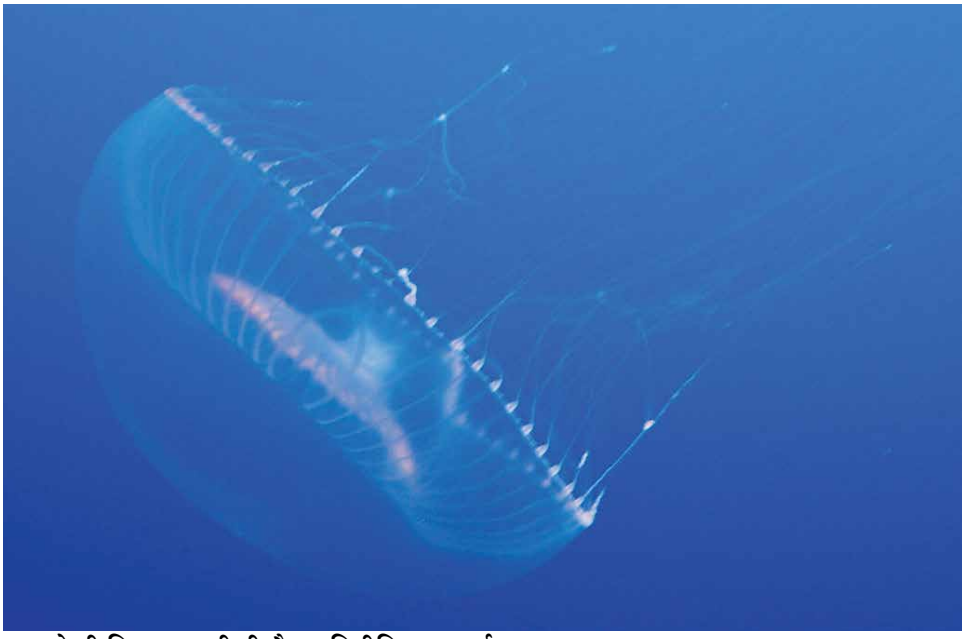

(क) जेली फिश द्वारा नीली जैव-प्रतिदीप्ति का प्रदर्शन
Credits: Mnolf, Wikimedia Commons.
URL: https://commons.wikimedia.org/w/index.php?curid=727670. License: CC BY-SA.

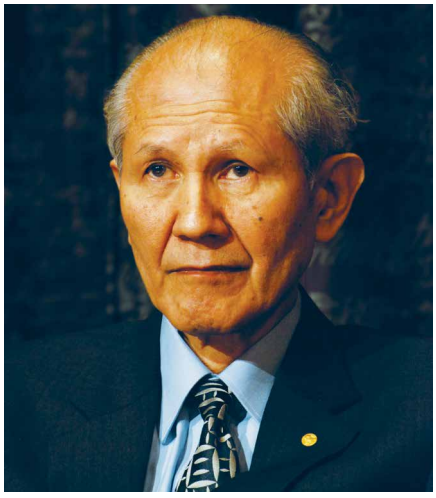

(ख) ओसामू शिमोमूरा
Credits: Prolineserver, Wikimedia Commons.
URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Osamu_Shimomura-press_conference_Dec_06th,_2008-2.jpg. License: CC-BY-SA.

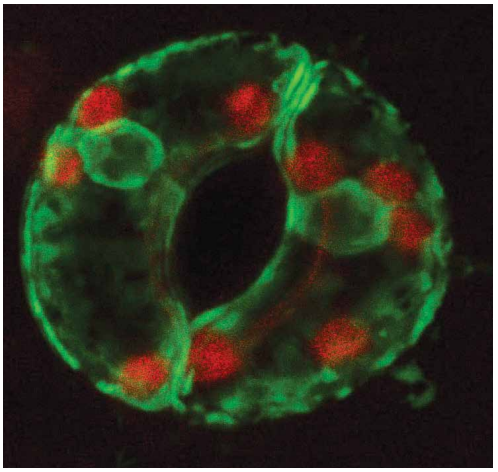

(स) कोशिका में प्रतिदीप्त प्रोटीन से जुड़े ट्यूबुलिन, माइटोकॉण्ड्रिया व केन्द्रक
Credits: A. Baker, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/71183136@N08/6985213264. License: CC-BY-NC-SA

प्राशर के क्लोन की मदद से गोलकृमि के पारदर्शी शरीर में 6 एकल कोशिकाओं को अभिरंजित कर उनकी स्थितियों का पता लगाया। चीनी-अमरीकी जैवरसायनज्ञ रॉजर सिएन ने 1994 में जीएफपी की प्रतिदीप्ति के रासायनिक आधार का पता लगाया। इस समझ के आधार पर रॉजर सिएन व उनके साथियों ने जीएफपी के कई आनुवंशिक व संरचनात्मक प्रकार बनाए। इससे जीएफपी की प्राकृतिक प्रतिदीप्ति तीव्र हुई और रंगों में विविधता बढ़ गई (जैसे गुलाबी, पीली, लाल व नीली प्रतिदीप्ति)। आजकल जीएफपी व उनके व्युत्पन्न पदार्थों का प्रयोग नियमित रूप से इमेजिंग में हो रहा है व इसने कई वैज्ञानिक खोजों में यह अहम भूमिका निभाई है (**चित्र-3**)।

प्रतिदीप्त टैग के अनुप्रयोग

(क) शोध कार्य में : कोशिका कैसे कार्य करती है? किसी कोशिका में विभिन्न कोशिकांग आपस में संवाद कैसे करते हैं? कोशिका किसी रोगजनक के आक्रमण की प्रतिक्रिया कैसे देती है? ये कुछ ऐसे सवाल हैं जिन्होंने हमेशा वैज्ञानिकों को उलझाया है। हालाँकि सूक्ष्मदर्शी से कोशिकाओं का अवलोकन करना सम्भव है परन्तु चलती हुई कोशिकीय प्रक्रियाओं एवं अति सूक्ष्म स्तर पर होने वाली आणविक अन्तःक्रियाओं का अवलोकन करना केवल सूक्ष्मदर्शी से सम्भव नहीं है। यहीं पर प्रतिदीप्त टैग की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

अपनी रुचि को जैव-अणु की उपस्थिति और अन्तर्क्रियाओं का अध्ययन उसकी प्रतिदीप्ति निशानदेही की मदद से किया जा सकता है, जिसके लिए सहसंयोजी बन्धन के ज़रिए

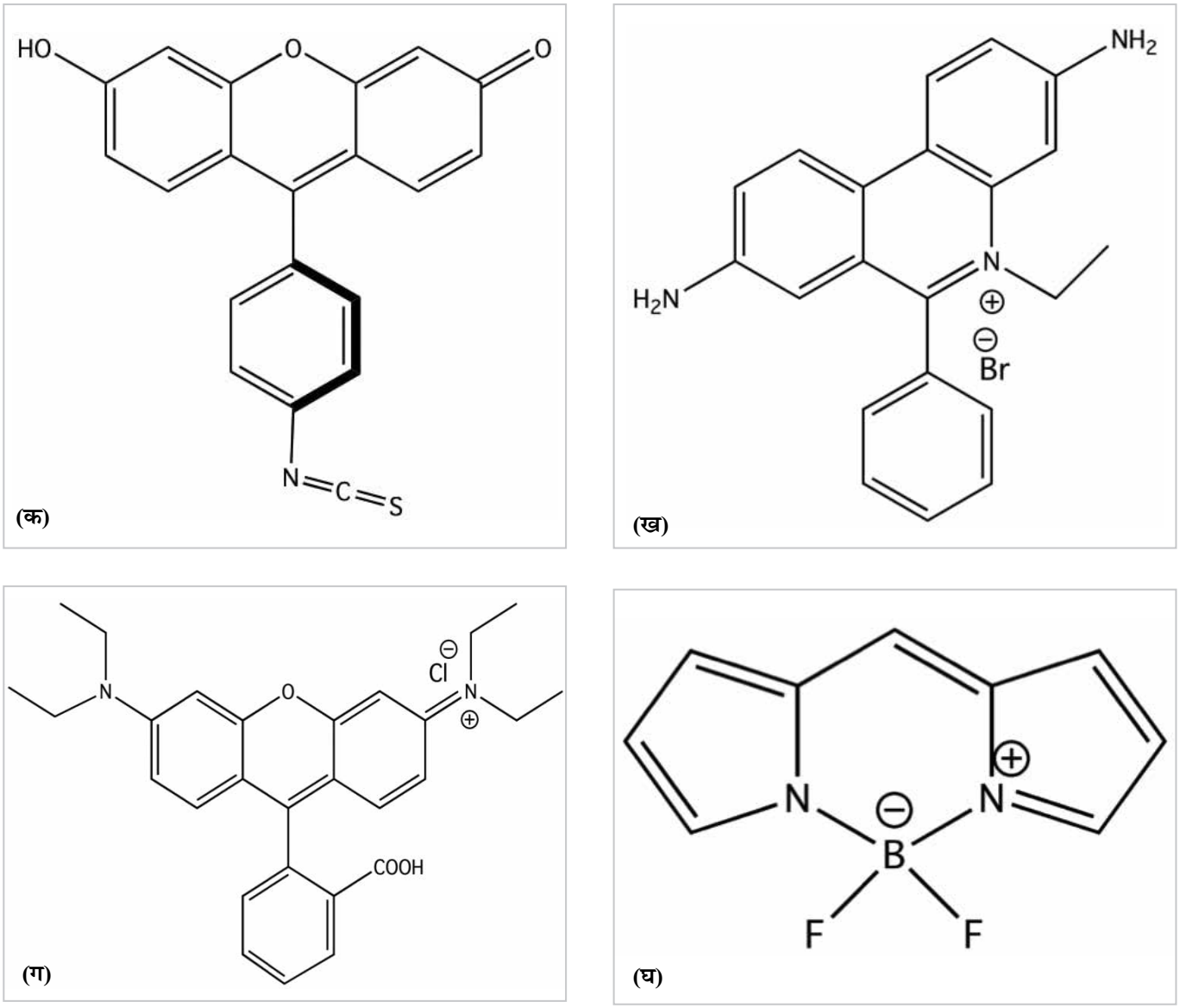

चित्र-4 : प्रोटीन टैग जैसा उपयोग किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के फ्लोरोफ़ोर। (क) फ्लोरीसीन आइसोथायोसायनेट **(ख)** इथिडियम ब्रोमाइड **(ग)** रोडामाइन रंजकें **(घ)** BODIPY रंजकें+

Credits: Neeraja Dashaputre. License: CC-BY-NC.

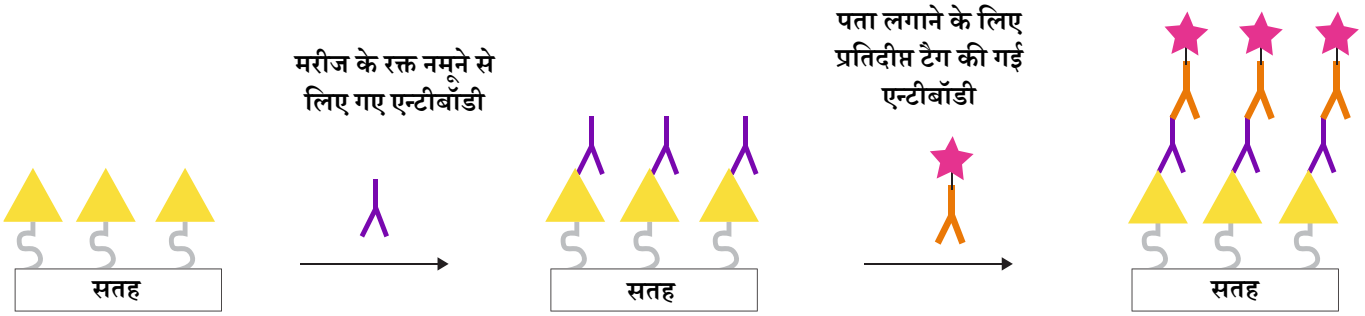

चित्र-5 : एन्टीबॉडी की उपस्थिति का पता लगाने के लिए एन्टीबॉडी-एन्टीजन परख का योजना आरेख।
Credits: Neeraja Dashaputre. License: CC-BY-NC.

उसे फ्लोरोफ़ोर (यानी रंजक के प्रतिदीप्त हिस्से) से जोड़ा जाता है। उदाहरण के लिए किसी चयनित प्रोटीन व एमिनो अम्लों के क्रियात्मक समूहों; जैसे एमीन, हाईड्रॉक्सिल व थाइऑल्स के साथ रासायनिक रूप से संशोधित फ्लोरोफ़ोर को जोड़ा जा सकता है (**चित्र-4**)। इस प्रकार, इथिडियम ब्रोमाईड (EtBr) डीएनए अणुओं के बीच-बीच में हाईड्रोजेन बन्ध द्वारा एक के ऊपर एक व्यवस्थित हो जाती है जिससे पराबैंगनी प्रकाश में चमकीला नारंगी दीप्ति प्राप्त होता है।

विशेष जैव अणुओं की चयनात्मक टैगिंग द्वारा किसी कोशिकीय प्रक्रिया को वास्तविक समय सीमा में देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए जीएफपी को जब विषाणु के जीनोम के साथ संलग्नित किया जाता है तब संक्रमित कोशिका में ऐसे रोगाणु; विषाणु की गतिविधि पर नज़र रखी जा सकती है। ऐसे ज़बरदस्त व आसानी से निगरानी रखे जा सकने वाले तरीक़ों का व्यापक अनुप्रयोग कई प्रकार के फ्लोरोफ़ोर के साथ सम्भव है।

(ख) रोग के निदान में : कोई रोगी किस रोगाणु से ग्रस्त है, पैथोलॉजी के क्षेत्र में रोग के निदान सम्बन्धी ऐसे तरीक़े, चिकित्सकों एवं चिकित्सा सेवा से जुड़े विशेषज्ञों की मदद करते हैं। ऐतिहासिक रूप से, रोग की पहचान एक समय आधारित प्रक्रिया है जो कुछ दिनों से लेकर कई हफ़्ते तक के अन्तराल में हो सकती है। रोगी के शरीर से रोग ग्रस्त नमूने का संग्रह कर, शरीर के बाहर कृत्रिम रूप से रोगाणुओं की वृद्धि करवाई जाती है जिससे उनकी प्रकृति व उपस्थिति सुनिश्चित हो सके। रोग के निदान में रफ़्तार व सुनिश्चितता उपचार के प्रभाव पर असर डालती है।

आज-कल, निश्चित प्रतिरक्षी – प्रतिजन अभिक्रियाओं की पहचान हेतु अधिक रफ़्तार से की जा सकने वाली रोग निदान तकनीकों का प्रयोग किया जा रहा है। हमारे शरीर में बी लिम्फोसाईट नामक विशेष कोशिकाएँ, रोगाणुओं के सम्पर्क में आने से, Y के आकार के प्रोटीन पदार्थों का निर्माण करती हैं जिन्हें प्रतिरक्षी कहा जाता है। प्रतिरक्षी विशेष प्रकार के अणुओं के साथ संलग्नित हो सकता है जिनको प्रतिजन कहा जाता है। प्रतिजन, रोगाणुओं की सतह पर पाई जाने वाली विशेष शर्कराओं की शृंखला, प्रोटीन या लिपिड अणु हैं। प्रतिरक्षियों का संश्लेषण व प्रतिजन के साथ संयुग्मन विशिष्ट होता है एवं यह प्रक्रिया बहुत तेज़ी से होती है।

रोग निदान के लिए परीक्षण किए जाने की विधि के विकास के लिए, रोगाणु विशिष्ट प्रतिरक्षी व प्रतिजन को या तो अलग कर प्राप्त किया जाता है या संश्लेषित किया जाता है। रोगाणु विशिष्ट प्रतिरक्षियों को किसी ठोस सतह पर सोख लिया जाता है/ स्थगित किया जाता है। इस पर किसी रोगी के रक्त या सीरम के नमूनों को लगाया जाता है। रोगी यदि रोगाणु द्वारा संक्रमित है, तो उसके ख़ून में मौजूद प्रतिजन, ठोस सतह पर स्थगित की गई प्रतिरक्षी के साथ संयोजित हो जाता है। ऐसे किसी प्रतिजन को धोकर निकाल दिया जाता है जो प्रतिरक्षी से नहीं जुड़ा हो।

अब प्रतिदीप्त टैग लगे हुए एक और ऐसे प्रतिरक्षी को डाला जाता है, जोकि संयोजित प्रतिजन की पहचान कर सके। विशेष उपकरणों का प्रयोग, प्रतिदीप्ति की उपस्थिति व तीव्रता का पता लगाने व नापने के लिए किया जाता है। इससे हमें रोगी के रक्त में रोगाणु की उपस्थिति व मात्रा का पता चलता है।

इसे 'सेन्डविच' इम्यूनोएडसोरबेन्ट एसे परीक्षण कहा जाता है जो कि पारम्परिक परीक्षणों की तुलना में काफ़ी तीव्र गति से सम्पन्न होता है। विषाणु संक्रमण में, ठोस परीक्षण सतह पर सोखकर, विषाणु सम्बधित प्रतिजन का पता लगाया जाता है। संक्रमित रोगी के रक्त में उपस्थित विषाणु के प्रतिजन विशिष्ट प्रतिरक्षी से जुड़ जाते हैं। ऐसे किसी प्रतिरक्षी को धोकर निकाल दिया जाता है जो प्रतिजन से नहीं जुड़ा हो।

अब प्रतिदीप्ति टैग लगा हुआ एक और ऐसे प्रतिरक्षी का प्रयोग किया जाता है, जो कि संयोजित प्रतिरक्षी की पहचान कर सके ताकि विषाणु की उपस्थिति का पता लग सके। (**चित्र-5**)

निष्कर्ष

चिकित्सा क्षेत्र व रोगों के निदान के लिए प्रतिदीप्त टैगों के कई अनुप्रयोगों से उनका

स्वास्थ्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रतिदीप्त टैग द्वारा कई जैविक प्रक्रियाओं के बारे में हमें पता चला है। इनकी मदद से हमें कई प्रोटीनों की कार्यप्रणाली का भी पता चला है। प्रतिदीप्त टैग का प्रयोग करने वाले सामान्य विलयन आधारित परीक्षण विधियों के बनिस्बत, इम्यूनोसोरबेन्ट जैसी परीक्षण विधियों के कई फ़ायदे हैं क्योंकि यह बहुत कम मात्रा के नमूनों पर भी कारगर हैं एवं कम समय में ज़्यादा सटीक निष्कर्ष देती हैं। पर अभी भी प्रतिदीप्त टैगों की व्यापक क्षमता का उपयोग किया जाना बाक़ी है। इनका उपयोग भविष्य में व्यापक रूप से परीक्षण विधियों के लिए किया जाना बेशक़ ही अपरिहार्य है।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Fluorescent image of a fibroblast. James J. Faust and David G. Capco, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Fluorescent_image_fibroblast.jpg. License: CC-BY.

References

1. Chemistry Nobel Glows Fluorescent Green. Larry Greenemeier, Scientific American, October 8, 2008. URL: https://www.scientificamerican.com/article/chemistry-nobel-glows-green/.

नीरजा दशपुत्रे इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ़ साइंस एजुकेशन एंड रिसर्च (IISER) पुणे के रसायनशास्त्र विभाग में सहायक प्रोफ़ेसर हैं। ये पिछले आठ साल से शिक्षण कार्य से जुड़ी हुई हैं व रसायनशास्त्र सम्बन्धी कई प्रदर्शनियाँ कर चुकी हैं। नीरजा विद्यार्थियों से संवाद करना व उनके अध्यापन हेतु शिक्षण में नवाचार करना पसन्द करती हैं।

अनुवाद : अमलान कुमार दास **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

साक्षात्कार : वेना कपूर के साथ

वेना कपूर नेचर कंज़र्वेशन फ़ाउण्डेशन (NCF), बेंगलूरु के साथ प्रकृति शिक्षा और सार्वजनिक जुड़ाव पर काम करती हैं। प्राकृतिक दुनिया उन्हें काफ़ी आकर्षित करती और अपने इस उत्साह और अचरज को वे बच्चों व युवाओं तक पहुँचाने में आनन्द लेती हैं। उनके मन में मकड़ियों के लिए एक ख़ास जगह है और वे अकसर लोगों को मकड़ियाँ दिखाने ले जाती हैं।

आपकी वर्तमान भूमिका

नेचर कंज़र्वेशन फ़ाउण्डेशन में शिक्षा और सार्वजनिक जुड़ाव कार्यक्रम टीम के सदस्य के रूप में, मेरे काम का एक बड़ा हिस्सा प्रकृति शिक्षा, अनुसन्धान व प्रचार-प्रसार पर केन्द्रित है। हम प्राकृतिक दुनिया के प्रति बच्चों व युवाओं का उत्साह व दिलचस्पी बढ़ाने के लिए, शिक्षकों के साथ मिलकर प्राकृतिक व वन्यजीव सम्बन्धित संसाधनों का विकास करते हैं। हम नागरिक विज्ञान प्रयासों का उपयोग करते विभिन्न तबक़े के लोगों को जैव विविधता के बारे में वैज्ञानिक जानकारी जुटाने को प्रेरित करते हैं। इसके साथ ही, मैं विभिन्न संस्थानों के साथियों के साथ संरक्षण अनुसन्धान व कार्रवाई का काम करती हूँ और संरक्षण-सम्बन्धी विद्यार्थी सम्मेलनों, कार्यशालाओं और अन्य कार्यक्रम आयोजित करने में मदद करती हूँ। नेचर कंज़र्वेशन फ़ाउण्डेशन के कार्यकारी बोर्ड के एक सदस्य के रूप में, मैं संगठन में दीर्घकालिक प्रक्रियाओं के निर्णय, नियोजन और क्रियान्वयन में मदद करती हूँ।

काम का एक सामान्य दिन

कोई दिन सामान्य दिन नहीं होता। हर दिन अलग होता है। अधिकांश दिनों में, मैं हमारे कार्यक्रमों के विभिन्न पहलुओं पर पढ़ती, लिखती, अनुसन्धान करती हूँ या सहयोगियों के साथ विचार-मन्थन करती हूँ। कुछ दिन हम सफ़र करते हैं – सम्भावित सहयोगियों, शिक्षकों और सहकर्मियों के साथ मुलाक़ात करने हेतु। फ़ुरसत के दिन, आप हमें अपने कार्यालय की बालकनी से पक्षियों या पेड़ों को निहारते हुए देख सकते हैं। इसके साथ अकसर अवलोकनों पर गर्मागरम चर्चाएँ चलती हैं!

आपके पेशे का पारितोषिक

प्राकृतिक दुनिया का निरीक्षण करने, रिकॉर्ड करने और समझने का अवसर – उन जीवों की अद्भुत विविधता जो हमारे आँगन,

जंगलों और दूर-सुदूर जगहों पर रहते हैं। इस क्षेत्र में कई वर्षों तक काम करने के बावजूद प्राकृतिक दुनिया के कई पहलू मुझे आज भी आश्चर्य और विस्मय से भर देते हैं।

इसके अलावा, यह भी तो है कि मैं खिड़की से बाहर निहारने का लुत्फ़ ले सकती हूँ और हमारे सामने घटती प्रकृति की लीला का दीदार कर सकती हूँ – वास्तव में, यह मेरे काम का ही एक हिस्सा है! ख़ुशक़िस्मती से, मेरा कार्यालय एक ऐसी जगह है जहाँ अभी भी काफ़ी खुली जगह और बहुत सारे पेड़ हैं। वास्तव में, मैं आपके इन सवालों का जवाब देते-देते अभी कम-से-कम तीन पक्षी प्रजातियों की आवाज़ सुन पा रही हूँ।

आपके पेशे के महत्त्वपूर्ण नैतिक पहलू

मुझे लगता है कि पशु और मानव कल्याण एक समान हैं और इसलिए मैं जो काम करती हूँ उसका यह एक महत्त्वपूर्ण नैतिक पहलू है। बेशक, इन विचारों के विशिष्ट रूप अकसर व्यक्तिगत पसन्द से प्रभावित होते हैं। उदाहरण के लिए, प्रजातियों का वर्गीकरण करने के लिए पारम्परिक रूप से नमूनों के संग्रह की आवश्यकता रही है। इस आवश्यकता को लेकर असहजता के चलते ही मैंने वर्गीकरण विज्ञान में कैरियर बनाने से बचने का एक सचेत निर्णय लिया। क़िस्मत से, अब हमने वर्गीकरण के कई प्रकार के साधन विकसित कर लिए हैं जो हमें इस आवश्यकता से परे जाने की इज़ाज़त देते हैं। कभी-कभी हमारे नैतिक विचारों पर हमारे सहकर्मियों और संस्थानों (जिनमें हम काम करते हैं) का भी प्रभाव होता है। उदाहरण के लिए, नेचर कंज़र्वेशन फ़ाउण्डेशन में सभी अनुसन्धान परियोजनाएँ एक नैतिक समिति द्वारा सख़्त समीक्षा प्रक्रिया से गुजरती हैं। इस समिति में संगठन के बाहर के कुछ सदस्य भी शामिल होते हैं।

शुरुआती अनुभव जिन्होंने विज्ञान में रुचि पैदा की

मैं भाग्यशाली थी कि मेरे स्कूल में खुली जगहें और कई बड़े-बड़े पेड़ थे और मेरे घर भी बग़ीचा और बहुत सारे पौधे थे। सहयोगी माता-पिता और दोस्तों के होने से भी बहुत मदद मिली। उदाहरण के लिए, मेरे माता-पिता ने साँपों के प्रति मेरे आकर्षण को हतोत्साहित नहीं किया, भले ही वे उसे समझ नहीं पाते थे। वास्तव में, मैं कुछ जीवों को चुपके से घर में लाने में कामयाब रही, जिनमें एक-दो बचाए हुए साँप भी शामिल थे! काश, मेरे स्कूल लाइब्रेरी में और भी ढेर सारी क़िताबें होती। हमारे यहाँ जानवरों पर थोड़ी-सी ही क़िताबें थीं, जिन्हें मैं जल्द-से-जल्द पढ़ लेती। जॉय एडम्सन की 'बॉर्न फ्री' की एक प्रति पाकर अपना रोमांच मुझे आज भी याद है। मैं सातवीं कक्षा में थी, और इस मशहूर क़िताब में वन्य जीवन के विवरणों पर फ़िदा थी – अफ़्रीका के लोगों, शेरों और उसके भू-भागों के दृश्य मेरे मन में घूमते रहते थे। मुझे आज भी अपने शिक्षक के चेहरे का भाव याद है जब मैंने वही क़िताब दोबारा माँगी।

वैज्ञानिक बनने का निर्णय

मुझे पौधों और जानवरों से हमेशा से प्यार रहा है। जब मैं छोटी थी, तब परिवार के एक मित्र द्वारा भेजी गई बीबीसी वाइल्डलाइफ़ पत्रिका के हर अंक को पढ़ डालती थी। मैं दूरदर्शन पर आने वाले जैक कुस्टोव के समुद्री और पानी के अन्दर के जीवन

चित्र-1 : मेरा ज़्यादातर कार्य प्रकृति शिक्षा पर केन्द्रित है।
Credits: Jagat Flora. License: CC-BY-NC.

पर अनगिनत कार्यक्रम भी देखा करती थी। लेकिन, वास्तविक जीवन में मैं कभी किसी वन्यजीव विज्ञानी या संरक्षणवादी से नहीं मिली थी, तो मैंने सोचा कि इस क्षेत्र में कैरियर बनाना सम्भव ही नहीं है, ख़ासकर भारत में। इसलिए, लम्बे समय तक, वन्यजीवों के लिए मेरा आकर्षण पुस्तकों, पत्रिकाओं और वृत्तचित्रों में मेरी रुचि तक सीमित रहा। फिर, एक दिन, मैंने बेंगलूरु स्थित एक संगठन द्वारा वन्यजीवों और संरक्षण के बारे में जागरूकता फैलाने के इच्छुक वालंटियरों के लिए एक विज्ञापन देखा। यह मेरे जीवन का एक महत्त्वपूर्ण मोड़ था। मैं वाणिज्य विषय में एक स्नातक कार्यक्रम में पढ़ रही थी, लेकिन मैंने अपने ग्रीष्मकालीन अवकाश इस संगठन के साथ वालंटियर करते हुए बिताए।

मेरे काम का एक बड़ा हिस्सा स्कूलों और कॉलेजों में प्रकृति शिविरों, वार्ताओं और प्रदर्शनों के माध्यम से बच्चों और किशोरों के साथ बातचीत करना था। उदाहरण के लिए, एक लाइव प्रदर्शन का उद्देश्य बच्चों को ज़हरीले और ग़ैर-ज़हरीले साँपों के बीच अन्तर दिखाना था और उनके आस-पास के कुछ मिथकों का खण्डन करना था। इन प्रकृति शिविरों के माध्यम से ही मुझे बाहरी दुनिया में अपना पहला वास्तविक अनुभव मिला। जैसे-जैसे अपने जैसी रुचि रखने वाले लोगों से मेरा सम्पर्क बढ़ा, वैसे-वैसे भारतीय वन्यजीवों और संरक्षण के पेशे से परिचय भी बढ़ता गया। लगभग इसी समय मुझे गेराल्ड डुरेल, जेन गुडाल और सालिम अली के जीवन व अनुभवों के बारे उनकी अद्भुत क़िताबों से पता चला। उनकी स्वछन्द (और अकसर मनोरंजक) संरक्षण कथाओं और उनके आकर्षक कारनामों के विवरण, पढ़ते-पढ़ते वन्यजीव संरक्षण और पारिस्थितिकी को एक पेशे के रूप में अपनाने का मेरा संकल्प और मज़बूत हो गया।

वर्तमान कार्यक्षेत्र का चुनाव

मुझे लगता है कि मेरे जीवन ने एक चक्र पूरा कर लिया है! मैंने अपने सफ़र की शुरुआत बच्चों को प्रकृति शिविरों में ले जाते हुए की थी। मकड़ियों पर मेरे शोध को, काफ़ी हद तक, चेन्नई में सेंटर फ़ॉर इंडियन नॉलेज सिस्टम्स के डॉ. विजयलक्ष्मी और ए. वी. बालसुब्रमण्यम ने प्रेरित किया था, जिनके साथ मैंने स्नातक शिक्षा के बाद अपनी पहली नौकरी में काम किया था। उनके द्वारा एकत्रित मकड़ियों से सम्बन्धित और छवि प्रलेखनों ने मेरे लिए एक पूरी नई दुनिया ही खोल दी थी। साथ ही, उन्होंने मुझे पश्चिमी घाट के जंगलों में समय बिताने और वहाँ काम करने वाले वन्यजीव शोधकर्ताओं से मिलने को प्रोत्साहित किया ताकि मैं इस कार्यक्षेत्र का अनुभव ले सकूँ। यह पहला

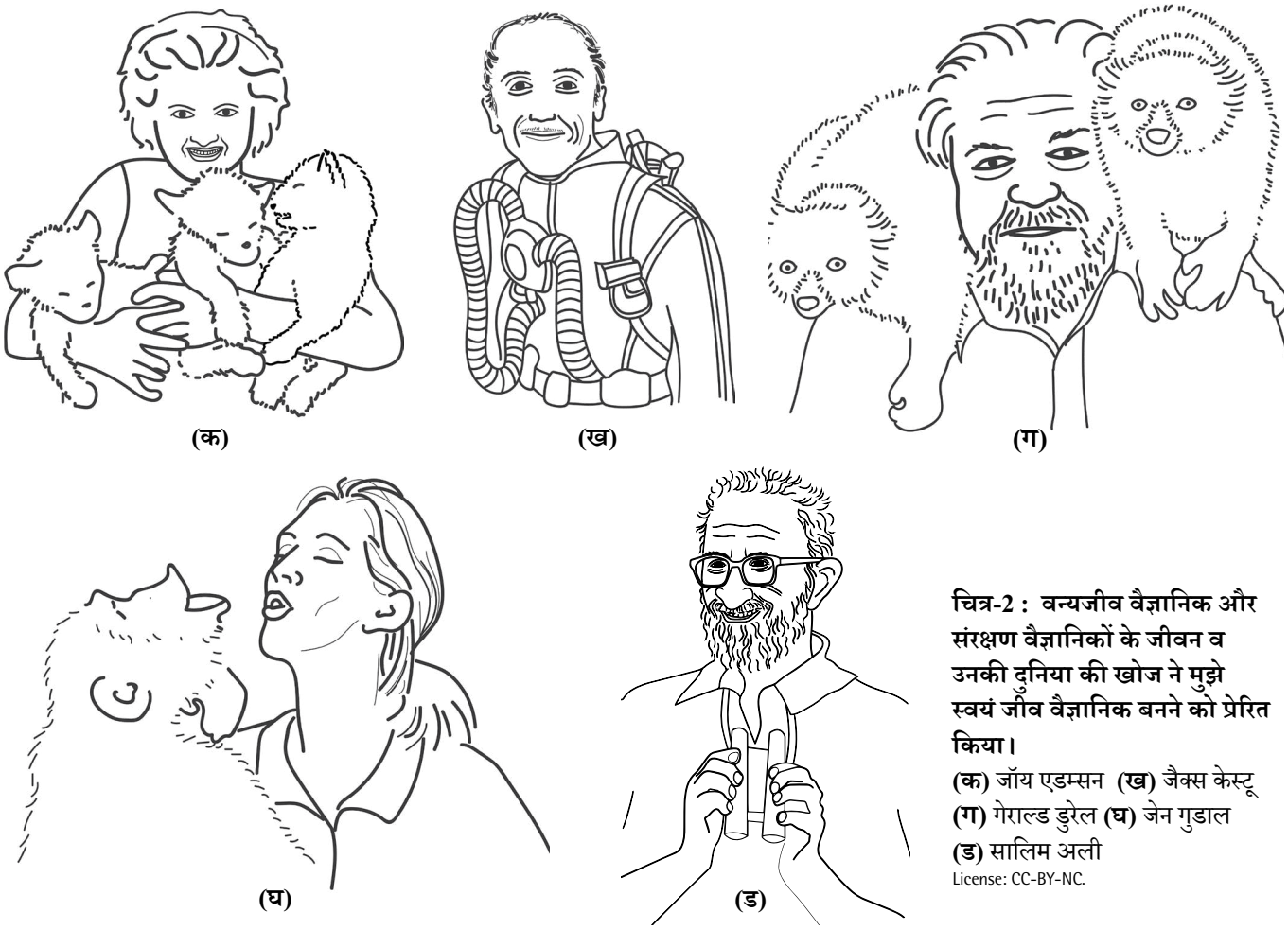

चित्र-2 : वन्यजीव वैज्ञानिक और संरक्षण वैज्ञानिकों के जीवन व उनकी दुनिया की खोज ने मुझे स्वयं जीव वैज्ञानिक बनने को प्रेरित किया।
(क) जॉय एडम्सन **(ख)** जैक्स केस्टू **(ग)** गेराल्ड डुरेल **(घ)** जेन गुडाल **(ङ)** सालिम अली
License: CC-BY-NC.

चित्र-3 : मेरा पहला काम पश्चिमी घाट की मकड़ियों पर शोध करना था।
Credits: Sara. License: Commissioned and copyright image used with permission.

अवसर था जब मैंने अनुभव किया और समझा कि पारिस्थितिक अनुसन्धान करने का क्या मतलब है।

मैं कुछ वर्षों के लिए पारिस्थितिकी और वन्यजीव संरक्षण अनुसन्धान और अभ्यास में तैरती-उतराती रही। इसमें शहरी वन्यजीवों के दस्तावेज़ीकरण की कोशिश करना और पश्चिमी घाट में दीर्घावधि वर्षावन बहाली कार्यक्रम के लिए वर्षावन बीजों और पौधों के लिए एक नर्सरी बनाने में मदद करना शामिल था। कुछ समय के लिए, मैंने नेचर कंज़र्वेशन फ़ाउण्डेशन के लिए धन जुटाने और संचालन में मदद की। मैंने बच्चों के लिए प्रकृति पर कुछ क़िताबों का सह-लेखन भी किया। शिक्षा क्षेत्र से लम्बे समय दूर रहने के बाद, दी रवि शंकरन इनलैक्स फ़ाउण्डेशन की एक पूर्ण छात्रवृत्ति ने मुझे ब्रिटेन के कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से संरक्षण नेतृत्व में एमफिल करने का मौक़ा दिया। इस पाठ्यक्रम ने मुझे वर्तमान संरक्षण अनुसन्धान और अभ्यास की तथा इस क्षेत्र की व्यापक समझ विकसित करने में मदद दी। अपनी थीसिस के हिस्से के रूप में, मैंने इस बात पर एक लघु शोध परियोजना की कि किस प्रकार संरक्षण संगठन भौगोलिक सह-स्थानिकता का उपयोग कर रहे थे ताकि उनके बीच सहयोग की सम्भावनाएँ बेहतर हो सकें। जब मैं नेचर कंज़र्वेशन फ़ाउण्डेशन से दोबारा जुड़ी, तो मुझे प्रकृति शिक्षा और सामुदायिक काम का पूर्णकालिक अवसर मिला। मुझे लगता है कि मुझे अपने कैरियर के दौरान कई भूमिकाएँ निभाने का अवसर मिला है, जिसके कारण मुझे लीक से हटकर सोचने व कई तरह के कौशल विकसित करने की क्षमता मिली।

'वैज्ञानिक होने' से जुड़ी ग़लतफ़हमियाँ

अकसर, 'वैज्ञानिक' शब्द से, बीकरों से घिरे हुए, सफ़ेद कोट पहने, चश्मिश व्यक्ति (आमतौर पर एक मर्द!) की छवि उभरती है। लेकिन, कई वैज्ञानिक प्रयोगशाला जैसी जगह से बाहर काम करते हैं। यह पारिस्थितिकी और संरक्षण विज्ञान जैसे क्षेत्रों में विशेष रूप से सच है, जहाँ हमारी प्रयोगशाला बाहर की दुनिया है! यहीं हमारे कई अवलोकन और खोजें होती हैं।

अलबत्ता, कुछ मामलों में जीव विज्ञानियों और पारिस्थितिकीविदों को ऐसी परिस्थितियाँ या प्रयोग पुनर्निर्मित करने पड़ते हैं जो किसी प्राकृतिक परिघटना की अनुकृति हों जिसका अवलोकन प्रकृति में करना मुश्किल या समयख़र्ची हो। वैज्ञानिकों

EARLY BIRD NATURE DETECTIVES BINGO

GO OUTDOORS AND FIND ANY FOUR DOWN OR ACROSS AND SAY **BINGO**!

On the ground	Flying	Bird dropping 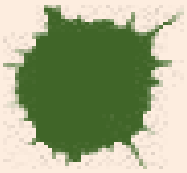	Two birds together
Bird with something in its beak	Colourful bird	Feather	Bird with a long tail
Bird with long legs	Something a bird could eat 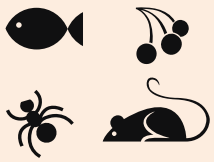	Bird on a branch	Mostly black bird
Mostly white bird	On a wire or roof	Bird sound	Somewhere a bird could hide 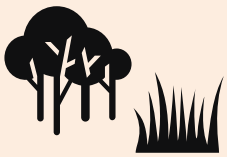

---

nature conservation foundation

Produced as part of a not-for-profit initiative to introduce children to birds and nature.

Learn more about us at www.early-bird.in

early bird

के बारे में एक अन्य प्रचलित धारणा यह है कि उनके पास कई शैक्षणिक उपाधियाँ होती हैं। हालाँकि विज्ञान में औपचारिक प्रशिक्षण उपयोगी और महत्त्वपूर्ण है, लेकिन मुझे लगता है कि तार्किक सोच की योग्यता के साथ एक पूछताछ-आधारित दृष्टिकोण विज्ञान के अभ्यास के लिए अधिक आवश्यक होता है।

स्कूली विज्ञान शिक्षा पर परिप्रेक्ष्य

स्कूल में विज्ञान को कैसे समझा और सिखाया जाए, इसमें सम्पूर्ण कायापलट की ज़रूरत है। यह सही है कि इस मामले में अभी हमें एक लम्बा रास्ता तय करना है, लेकिन आजकल स्कूल की कक्षाओं में जिस तरह से विज्ञान पढ़ाया जाता है, उसमें मुझे छोटे-छोटे सकारात्मक परिवर्तन दिख रहे हैं। ये परिवर्तन काफ़ी हद तक कई संस्थानों और व्यक्तियों द्वारा विज्ञान शिक्षण में ख़ुद करके सीखने व पूछताछ-आधारित दृष्टिकोण के लिए किए जा रहे निरन्तर प्रयासों का नतीजा हैं। इन परिवर्तनों को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए, हमें और कई सारे लोगों को साथ लाने की आवश्यकता है – विशेषकर उन लोगों को जो शैक्षिक नीति तैयार करने में शामिल होते हैं।

शिक्षकों के लिए विज्ञान में रुचि को बढ़ाने के लिए सुझाव

बच्चों को उनकी पाठ्यपुस्तकों के अलावा अन्य पुस्तकें पढ़ने को प्रोत्साहित करें। पाठ्यक्रम के विषयों के आस-पास कक्षा अनुसन्धान आरम्भ करें और उन्हें उन अन्य संसाधनों की ओर इंगित करें जिनका वे उपयोग कर सकते हैं। विद्यार्थियों को हमेशा 'क्यों' प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करें ताकि वे स्वयं से, सहपाठियों और आपके साथ तर्क कर सकें। विज्ञान के सवालों और परिघटनाओं पर समूह में चर्चा को प्रोत्साहित करें। विद्यार्थियों को विषय की अपनी समझ के आधार पर कहानियाँ मंचित करने के लिए कहें। विज्ञान शिक्षा पर व्यापक बातचीत करें। ऐसी एक बातचीत पाठ्यपुस्तकों और विज्ञान शिक्षण में लिंग, जाति और वर्ग का उचित प्रतिनिधित्व के मुद्दे पर हो सकती है। उदाहरण के लिए, आशिमा डोगरा और नन्दिता जयराज के 'दी लाइफ ऑफ साइंस' मंच पर देश भर की महिला वैज्ञानिकों की जीवन गाथाएँ हैं।

विज्ञान शिक्षा में अवलोकन और आश्चर्य की भूमिका

जिज्ञासा, आश्चर्य की भावना और निरीक्षण करने की उत्सुकता को प्रोत्साहित करना बच्चों के लिए प्राकृतिक दुनिया में रुचि विकसित करने का पहला क़दम है। व्यापक शोध से पता चला है कि अधिगम परिणामों पर कक्षा से बाहर (आउटडोर) शिक्षण का सकारात्मक प्रभाव होता है। शिक्षक इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए कक्षाओं

चित्र-4 : बच्चों को प्रकृति से जुड़ने का मौक़ा देना बहुत ज़रूरी है।
Credits: Vena Kapoor. License: CC-BY-NC.

पारिस्थितिकी और प्रकृति पर नेचर कंज़र्वेशन फ़ाउण्डेशन के संसाधन जिन्हें शिक्षक कक्षा में और बाहर उपयोग कर सकते हैं :

1. 'हमारे आस-पास की प्रकृति' पर थीम आधारित बाहरी गतिविधियाँ : www.edu.ncf-india.org
2. भारत में आम पक्षियों के इर्द-गिर्द गतिविधियाँ और खेल : http://www.early- bird.in/resources/
3. एक पेड़ को गोद लें, मौसम बदलने पर उसके फूलने और फलने के पैटर्न को देखें और रिकॉर्ड करें : http://www.seasonwatch.in/
4. प्रकृति पर लेखों की एक शृंखला, बच्चों के लिए लिखी गई है जिसे कक्षा में पढ़ा जा सकता है, वैकल्पिक कहानियों के साथ अभिनय या संशोधित किया जा सकता है : http://ncf-india.org/projects/writing-about-nature-for-children

की योजना बना सकते हैं। वे इसके लिए पारिस्थितिकी और संरक्षण जैसे विज्ञान के विशिष्ट क्षेत्रों में कार्य कर रहे व्यक्तियों या संगठनों की भी मदद ले सकते हैं।

स्कूल विज्ञान में शोधकर्ताओं को जोड़ने का महत्त्व

यह अजीब लग सकता है, लेकिन मेरा विचार है कि शोधकर्ताओं के लिए, विशेष तौर से कैरियर के शुरुआती दिनों में, किसी-न-किसी रूप में स्कूल विज्ञान शिक्षण के साथ जुड़ना फ़ायदेमन्द हो सकता है। इस तरह के अनुभव, हो सके तो उनके संस्थानों की मदद से, विज्ञान के प्रति उनकी समझ को सन्दर्भ से जोड़ने की उनकी क्षमता विकसित करने में भी बहुत उपयोगी हो सकते हैं। शोधकर्ता उन संसाधनों को जुटाने में मदद कर सकते हैं जो स्कूल के शिक्षकों की पहुँच में शायद न हों – विशेष रूप से शोधकर्ताओं के कार्यक्षेत्रों में नवीनतम खोजें। कुछ नए और मध्य-अवस्था के शोधकर्ताओं को पाठ्यपुस्तक और शिक्षक प्रशिक्षण में होने वाले सरकारी परामर्श में जोड़ना भी मददगार हो सकता है।

स्कूली विज्ञान में पर्यावरण शिक्षा

स्कूली विज्ञान को पर्यावरण शिक्षा से ज़रूर जोड़ना चाहिए। सरकारों और स्कूल बोर्डों ने इस आवश्यकता को पहचानना शुरू कर दिया है। हाल के वर्षों में, प्राथमिक स्तर के स्कूल पाठ्यक्रम में पर्यावरण विज्ञान (ईवीएस) एक अनिवार्य घटक होता है।

हालाँकि यह बच्चों और किशोरों को पर्यावरण के मुद्दों के प्रति संवेदनशील बनाने की ज़रूरत को पहचानने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण क़दम है, लेकिन हममें से कई लोगों का मानना है कि जिस तरह से ईवीएस घटक को तैयार किया गया है और पढ़ाया जाता है उसने इसे एक अतिरिक्त बोझिल 'विषय' बना दिया है। ईवीएस की पाठ्यपुस्तकें प्रदूषण, वनों की कटाई, और ग्लोबल वार्मिंग जैसे मुद्दों को रेखांकित करती हैं जो विद्यार्थियों को बेबस महसूस करा सकती हैं। हमारा तर्क है कि इसके कारण बच्चों को प्रकृति और पर्यावरण से जोड़ना मुश्किल हो सकता है। आदर्श रूप से, पाठ्यक्रम ऐसा हो जिससे युवा विद्यार्थी अपने निकट परिवेश के साथ जुड़ें व उसका अनुभव करें, उससे अचम्भित हों और प्रकृति के साथ एक जुड़ाव बनाने को प्रोत्साहित हों। और आदर्श रूप से जब बच्चा इस सम्बन्ध को पहचानना शुरू कर दे (आमतौर पर उच्च कक्षा में), तभी उसे अधिक जटिल परिप्रेक्ष्य और पर्यावरणीय मुद्दों से परिचित कराया जाना चाहिए।

प्रकृति और पर्यावरण शिक्षा पर सुझाव

अपनी कक्षा और स्कूल की लाइब्रेरी में भारत के पक्षियों, तितलियों, जानवरों और कीटों पर फ़ील्ड गाइड, पत्रिकाओं और प्राकृतिक इतिहास की पुस्तकों जैसे दिलचस्प संसाधन रखने की कोशिश करें। पारिस्थितिकी और संरक्षण शिक्षा जैसे क्षेत्रों में काम करने वाले हममें से कुछ लोग ऐसी सामग्री और मॉड्यूल तैयार कर रहे हैं जिन्हें शिक्षक अपने विद्यार्थियों को पर्यावरण से जुड़ने व महसूस करने में मदद करने के लिए उपयोग में ले सकते हैं (उदाहरण के लिए गतिविधि वर्कशीट – प्रारम्भिक बर्ड नेचर डिटेक्टिव्स बिंगो देखें)। इन संसाधनों का उपयोग करें और अपने आस-पास के क्षेत्र के सन्दर्भ में संशोधित कर लें।

हमारे अनुभव में, स्कूल या कक्षा में एक पक्षी उपस्थिति रजिस्टर रखना बहुत सफल/ लोकप्रिय साबित हो सकता है! रोज़ाना, अपने विद्यार्थियों को उन पक्षियों की उपस्थिति दर्ज करने को कहें जो उन्होंने स्कूल परिसर में देखे हैं। उनके अवलोकनों के बारे में प्रश्न पूछें – जैसे पक्षी क्या कर रहे थे? वे एक विशेष तरीक़े के क्यों दिखते हैं? वे कैसे समूह/ झुण्ड बनाते हैं? विद्यार्थियों से हर महीने और वर्ष में एक बार अपने अवलोकनों की तुलना कराएँ। उन्हें केवल वर्ष के किसी विशेष समय में ही क्यों देखा जाता है? परिसर में दिखने वाले आम पक्षियों, कीटों, पेड़ों और फूलों के चित्रों की प्रदर्शनी लगाएँ। इससे विद्यार्थियों को अपने आस-पास के वातावरण और प्रकृति से जुड़ने में आसानी होती है। अपने सामने दिखने वाली चीज़ों को पहचानने में एक अलग ही रोमांच होता है!

याद रखें कि यदि आप पक्षी, पेड़ या कीट के वैज्ञानिक नाम को पहचान न पाएँ या याद न रख पाएँ तो घबराने की ज़रूरत नहीं है। अपने विद्यार्थियों को प्राकृतिक दुनिया का निरीक्षण करने के लिए प्रोत्साहित करें, उनके अवलोकनों को उन्हीं के शब्दों में वर्णन करने के लिए प्रोत्साहित करें और हो सके तो इन अवलोकनों को प्रकृति पत्रिका में दर्ज कराएँ। इस बात पर ज़ोर दें कि यह ज़रूरी नहीं है कि आप प्रजातियों के नाम सही ढंग से लिखें, बल्कि यह पूछना ज़रूरी है कि उन्हें वर्गीकृत और समूहीकृत क्यों और कैसे किया जाता है।

अनुवाद : सात्विका ओहरी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

शिक्षकों की भूमिका में विद्यार्थी :

साथी-शिक्षण का उपयोग करते हुए विज्ञान के शिक्षक विद्यार्थियों को अपना सहयोगी कैसे बना सकते हैं

केविन क्लोज़, निकोल बॉवर्स, रोहित मेहता, पुण्य मिश्र और जे. ब्रायन हेंडरसन

यह लेख विज्ञान-कक्षा में साथी-शिक्षण (peer instruction) की विधि की पड़ताल करता है। लेखक विज्ञान-शिक्षा में हुए शोधों का उपयोग करते हुए यह स्पष्ट करते हैं कि व्यावहारिक रूप से, शिक्षक अपने विद्यार्थियों के साथ कैसे काम करें ताकि वे साथी-शिक्षण का उपयोग करके सीखने-सिखाने में बढ़ोतरी कर सकें।

"सीखना तब सबसे कम उपयोगी होता है जब यह निजी और छिपा हुआ होता है। जब यह सार्वजनिक और सामुदायिक हो जाता है तब यह सबसे शक्तिशाली होता है।"

– ली शुलमान

"विज्ञान के तथ्य और, तार्किक निश्चितता (à fortiori), इसके नियम आदि एक वैज्ञानिक के कृत्रिम कार्य हैं; इसीलिए विज्ञान हमें सत्य के बारे में कुछ भी नहीं सिखाता; हमारे लिए यह केवल कार्यान्वित करने के नियम के रूप में काम कर सकता है।"

– हेनरी पॉइनकरे

शिक्षक अकसर यह भूल जाते हैं कि विज्ञान की प्रकृति सामाजिक और अलंकारिक (Rhetorical) है। सामूहिक सहमति और समकक्ष लोगों की समीक्षा वैज्ञानिक तथ्यों को परिभाषित करती हैं, न कि राजनीतिक विमर्श। इसलिए वैज्ञानिक शिक्षण में वैज्ञानिक संवाद एवं तर्क-वितर्क के दौरान किसी विचार पर ज़ोर देना व उससे पीछे हटना और किसी विचार से आगे बढ़ जाना और फिर उसी विचार पर वापिस लौटना— यह सब शामिल होना चाहिए। जब शिक्षक स्कूल में वैज्ञानिक पद्धति की बात करते हैं तो वे परिकल्पना बनाने और प्रयोग करने पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, लेकिन वे अकसर पूरी प्रक्रिया को ठोस तर्क तैयार करने के एक तरीक़े के रूप में प्रस्तुत करने में विफल रहते हैं, जो कि यह वास्तव में है। दूसरे शब्दों में, विज्ञान तथ्यों, तर्कों और साक्ष्यों को उपयोग करने का एक तरीक़ा है ताकि दूसरों को यह समझाया जा सके कि किसी विशेष विचार के सही होने की सम्भावना है।

इस बात को ध्यान में रखते हुए, हम कक्षा के सबसे मूल्यवान संसाधन यानी स्वयं विद्यार्थियों का उपयोग करके कक्षा में सार्थक वैज्ञानिक चर्चा शुरू करने का एक तरीक़ा प्रस्तुत कर रहे हैं। **साथी-शिक्षण**

(peer instruction) नाम की यह तकनीक शिक्षक के हाथ से नियंत्रण लेकर इसे विद्यार्थियों को दे देती है। अमेरिका के नॉर्थ कैरोलिना के ब्रेवार्ड कॉलेज में रसायनविज्ञान की प्रोफ़ेसर डॉ. त्रिशा विक्रे और उनके चार सह-लेखकों के एक हालिया शोधपत्र के अनुसार, यह शोध आधारित शैक्षणिक सुधार का एक रूप है जिसे विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग और गणित[1] के शिक्षकों द्वारा व्यापक रूप से अपनाया गया है।

साथी-शिक्षण विद्यार्थियों को शिक्षण के दौरान एक-दूसरे से बात करने, बहस करने और एक-दूसरे को सिखाने के मौक़े देता है। विद्यार्थी अपने साथियों के लिए शिक्षक, मॉडल और साउंडिंग बोर्ड के रूप में काम कर सकते हैं। शोधों से पता चलता है कि इन आपसी संवादों के दौरान विद्यार्थी बहुत कुछ सीखते हैं। शिक्षा के एक प्रसिद्ध प्रोफ़ेसर जॉन ए. सी. हेटी के अनुसार, *"यदि आप अपने विद्यार्थियों की अकादमिक उपलब्धि को बढ़ाना चाहते हैं, तो अपने प्रत्येक विद्यार्थी को एक दोस्त दे दें।"* वे दावा करते हैं कि सामाजिक संवाद, विद्यार्थियों को अपने स्वयं का शिक्षक बनने के लिए प्रेरित करता है। यह सामाजिक संवाद ही है जिसे साथी-शिक्षण प्रोत्साहित करना चाहता है।

इसके अतिरिक्त, साथी-शिक्षण वैज्ञानिक प्रक्रिया की एक मूलभूत बात को दोहराता है जो किसी के दृष्टिकोण के **'सत्य मूल्य' (Truth Value)** पर अन्य लोगों को यक़ीन दिलाना है। यह तर्क की एक प्रक्रिया है— या किसी के दृष्टिकोण को समझाने के लिए आँकड़ों और तर्क को व्यवस्थित रूप से क्रमबद्ध करना है। यह अलंकारिक मोड़ या व्याख्या (Rhetorical Turn) महत्त्वपूर्ण है, यह विद्यार्थियों को न केवल सही उत्तर खोजने के लिए, बल्कि अपने उत्तर के बारे में क्यों और कैसे को समझाने और अन्य लोगों को उस पर यक़ीन दिलाने के लिए विवश करता है। अलग व्याख्या वाला एक विद्यार्थी अपने साथी के कथनों पर सवालिया रवैये के साथ बात करेगा और, ख़ुद के ग़लत सिद्ध होने के लिए भी खुले दिमाग़ से तैयार रहेगा। दिलचस्प बात यह है कि इस तरह की बातचीत का यह मतलब कतई नहीं है कि सही जवाब वाले विद्यार्थी को निश्चित रूप से अपने तर्क पर भरोसा हो। ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है जहाँ ग़लत समझ वाला कोई विद्यार्थी अपने साथी (जिसकी व्याख्या, सही हो सकती है) को अपनी बात की सत्यता पर यक़ीन दिलाने में सफल हो जाए। वास्तव में, यह स्थिति उन विद्यार्थियों की समझ में भी कमज़ोरियों को उजागर कर सकती है जो सही उत्तर निकाल पाने में सक्षम हैं। मूलत: साथी-शिक्षण केवल सही उत्तर पाने से अधिक ज़ोर अवधारणात्मक समझ और बहस के तर्क पर देता है।

शोध क्या कहता है?

हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में भौतिकी के एक प्रोफ़ेसर एरिक मज़ूर संवादात्मक मतदान

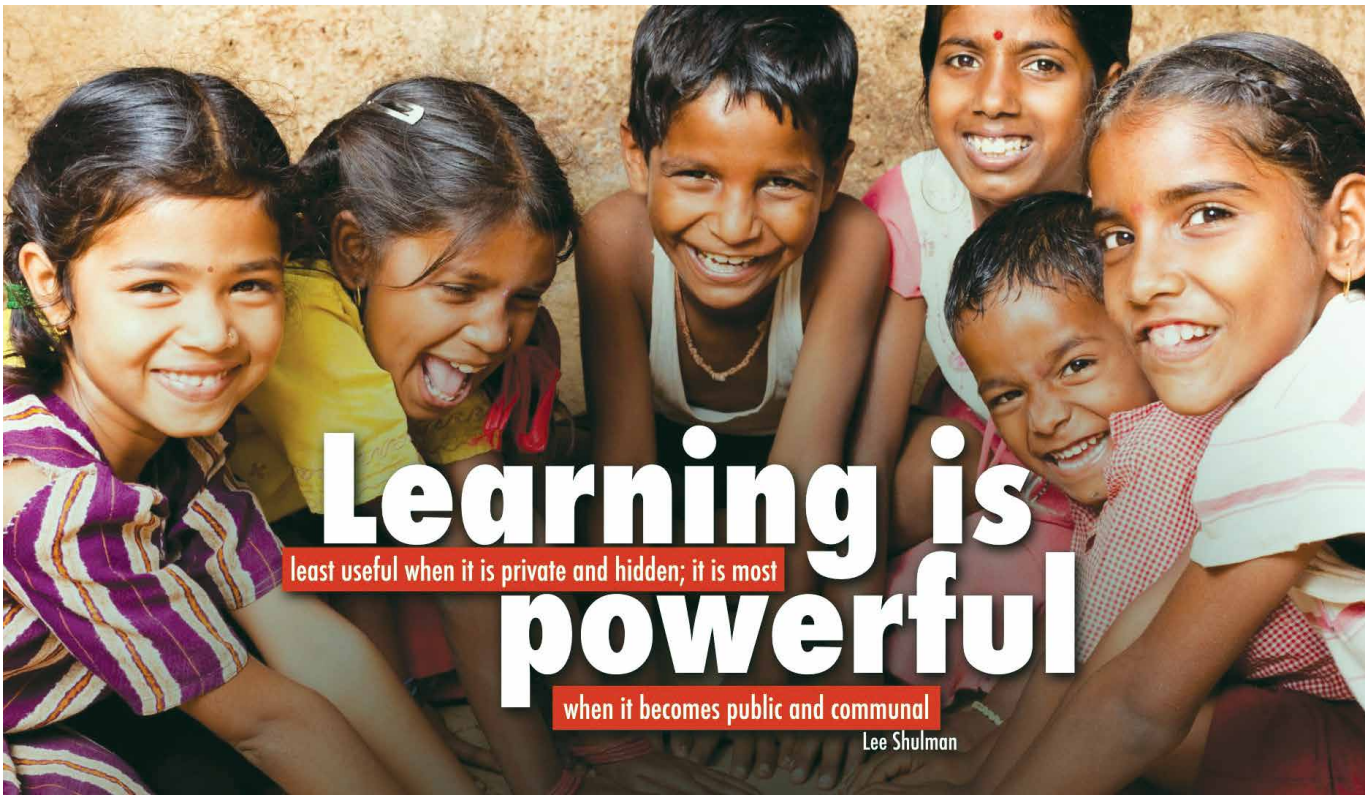

चित्र-1 : सीखना तब सबसे कम उपयोगी होता है जब यह निजी और छिपा हुआ होता। जब यह सार्वजनिक और सामुदायिक हो जाता है तब यह सबसे शक्तिशाली होता है।

Credits: Quote by Lee Shulman. Illustration by Punya Mishra. License CC-BY-NC.

(Interactive Voting) की परिपाटी में रुचि रखते थे। एरिज़ोना स्टेट यूनिवर्सिटी के डॉक्टर यूजीन जुडसन और अल्बर्टा यूनिवर्सिटी के दाइओ सवादा के अनुसार, इस परिपाटी का उपयोग 1960 के बाद से विज्ञान-कक्षाओं में किया गया, लेकिन 1990 के दशक के मध्य से यह कुछ इलाक़ों में लोकप्रिय हो गई।[2] संवादात्मक मतदान का उपयोग करने वाले शिक्षक अकसर फ्लैश कार्ड या 'क्लिकर' की व्यवस्था द्वारा कक्षा में वोट या पोल के माध्यम से किसी प्रश्न के प्रति विद्यार्थियों से प्रतिक्रियाओं की माँग करते हैं। कुछ मामलों में, इस तरह के प्रश्न का उद्देश्य विद्यार्थी की जिज्ञासा को बढ़ाना हो सकता है; जबकि अन्य स्थितियों में, इसे विद्यार्थी की समझ जाँचने के लिए डिज़ाइन किया जा सकता है। मज़ूर ने पाया कि कुछ परिस्थितियों में, विद्यार्थियों ने कहीं ज़्यादा सीखा जब उन्होंने वोटिंग के बाद अपने साथियों के साथ अपने जवाबों पर चर्चा की।[3] उन्होंने इस अवलोकन का वर्णन करने के लिए साथी-शिक्षण शब्द को गढ़ा और इसे लागू करने के लिए एक विशिष्ट मॉडल की रूपरेखा तैयार की :

1. विद्यार्थियों के सामने एक सवाल रखें।
2. विद्यार्थियों को सोचने का समय दें।
3. विद्यार्थियों को अपने व्यक्तिगत जवाबों को दर्ज करने दें।
4. विद्यार्थियों को अपने सहपाठियों (आपसी चर्चा के ज़रिए) को समझाने दें।
5. विद्यार्थियों को अपने संशोधित उत्तरों को दर्ज करने दें।
6. गणना कर परिणाम निकालें।
7. सही उत्तर को समझाएँ।

मज़ूर के निष्कर्षों और साथी-शिक्षण के उनके मॉडल ने अनुवर्ती अनुसन्धान (Follow-up Research) की एक पूरी पीढ़ी को प्रेरित किया। मज़ूर और हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में उनकी सहकर्मी रहीं कैथरीन क्राउच द्वारा दस वर्षों तक एक अध्ययन किया गया। इस अध्ययन में उन्होंने उन विद्यार्थियों के प्रदर्शन में अन्तर देखा, जिन्हें पारम्परिक व्याख्यान विधि बनाम साथी-शिक्षण विधि के कुछ तत्वों को इस्तेमाल करके प्रारम्भिक भौतिकी पाठ्यक्रम पढ़ाया गया था। उन्होंने भौतिकी अवधारणाओं पर विद्यार्थियों को कक्षा से पहले और बाद में प्रश्न देकर उनके प्रदर्शन को मापा। इस अध्ययन के माध्यम से, मज़ूर और क्राउच ने दिखाया कि जिन विद्यार्थियों ने लगातार साथी-शिक्षण के ज़रिए कोर्स किया उन्होंने उल्लेखनीय ढंग से बेहतर प्रदर्शन किया बनिस्बत उनके जिन्होंने इसके बिना कोर्स किया। अकसर, साथी-शिक्षण का उपयोग करने वाली कक्षाओं में विद्यार्थियों के सीखने में इसके बिना सीखने वाले विद्यार्थियों की तुलना में दोगुने से ज़्यादा का इज़ाफ़ा देखा गया। अन्य अध्ययनों से पता चला है कि साथी-शिक्षण ने भू-विज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान और कलन की कक्षाओं में सीखने में बढ़ोतरी की है।[4,5] यह बताता है कि साथी-शिक्षण एक

चित्र-2 : साथी-शिक्षण प्रक्रिया में सात चरणों का एक आरेख।
Credits: Illustration by Punya Mishra. License CC-BY-NC.

सामान्य शिक्षण रणनीति के रूप में उपयुक्त हो सकता है और यह सिर्फ़ भौतिकी तक सीमित नहीं है।

हालाँकि साथी-शिक्षण सरल दिखाई पड़ता है, फिर भी प्रभावी कार्यान्वयन के लिए प्रत्येक चरण में गूढ़ सोच-विचार समाहित होते हैं। हम प्रत्येक चरण को विस्तार से देखेंगे और बेहतरीन कार्यप्रणालियों के उदाहरण देंगे।

शिक्षक अपनी कक्षाओं में साथी-शिक्षण का समर्थन कैसे कर सकते हैं?

गाइड 1 : सही प्रश्न चुनें

शिक्षकों को पता होता है कि प्रश्नों में चुनौतियों के अलग-अलग स्तर होते हैं। साथी-शिक्षण के साथ अच्छी तरह से फिट होने वाले प्रश्न विद्यार्थियों के समक्ष एक अवधारणात्मक चुनौती रखते हैं।

"सूत्री विभाजन (Mitosis) के चरणों के नाम क्रम से बताइए।" इस तरह का एक परीक्षण प्रश्न विद्यार्थियों को जानकारी याद करने का अवसर देता है।

"पीढ़ियों का परिवर्तन कुछ पौधों की प्रजातियों के अस्तित्व के लिए एक प्रभावी विकासात्मक मोड का प्रतिनिधित्व किस तरह करता है?" जैसे परीक्षण प्रश्नों में विद्यार्थियों को कई अवधारणाओं पर विचार करने और उन्हें एक साथ जोड़ने की आवश्यकता होती है। याददाश्त आधारित प्रश्नों के लिए साथी-शिक्षण की आवश्यकता नहीं है; केवल सही उत्तर देने से ही विद्यार्थी यह समझ सकते हैं कि उनका उत्तर कैसे ग़लत था। वैचारिक रूप से चुनौतीपूर्ण प्रश्न के लिए सही उत्तर प्रदान करने से विद्यार्थियों को यह समझने में मदद नहीं मिलती है कि उनका उत्तर कैसे सही नहीं था। ऐसे प्रश्नों के लिए, स्पष्टीकरण के बिना केवल उत्तर देना, स्पष्टीकरण की तुलना में उत्तर को महत्त्व देना होता है। परिघटना (Phenomena) के स्पष्टीकरण तक पहुँच और स्पष्टीकरण के अभ्यास के बिना विद्यार्थी वास्तव में वैज्ञानिक अवधारणाओं या विज्ञान में तर्क करने की केन्द्रीय प्रकृति की गहन समझ विकसित नहीं कर सकते हैं।

विज्ञान में तर्क की केन्द्रीय प्रकृति के सन्दर्भ में देखें तो साथी-शिक्षण सही उत्तर वाले विद्यार्थियों की अवधारणात्मक वाक्पटुता को पुख़्ता करता है। ऐसे विद्यार्थी सही उत्तर के पीछे की सभी अवधारणाओं को पूरी तरह से समझ सकते हैं या नहीं भी समझ सकते। साथी-शिक्षण इन विद्यार्थियों को अपनी समझ के आधार पर बात करने का मौक़ा प्रदान करता है, ख़ासकर तब जब कोई साथी सवाल पूछता है। नतीजतन, यह उन्हें ख़ुद की प्रतिक्रिया के ज़रिए सोचने **और** उसे स्पष्ट रूप से कह पाने में मदद करता है ताकि दूसरा विद्यार्थी इसे समझ सके।

चुनौतीपूर्ण प्रश्नों के लिए एक गहन स्तर की समझ की आवश्यकता होती है, और साथी-शिक्षण विद्यार्थियों को उनके प्रारम्भिक उत्तर की परवाह किए बिना, एक साथ समझ के उस गहन स्तर पर काम करने देता है। दरअसल साथी-शिक्षण विद्यार्थियों को विज्ञान में तर्क के वास्तविक अभ्यास में भाग लेने के मौक़े देकर, केवल सही उत्तर प्राप्त करने की बजाए, **समझने** पर ज़ोर देता है।

इसे लागू कैसे करें : साथी-शिक्षण को अपने विद्यार्थियों के लिए पूरी तरह से समयबद्ध सीखने के अवसर के रूप में देखें। क्या कोई पुराना सवाल इसमें मददगार होगा?

चित्र-3 : साथी-शिक्षण कैसे काम करता है। Credits: Illustrations by Punya Mishra. License CC-BY-NC.

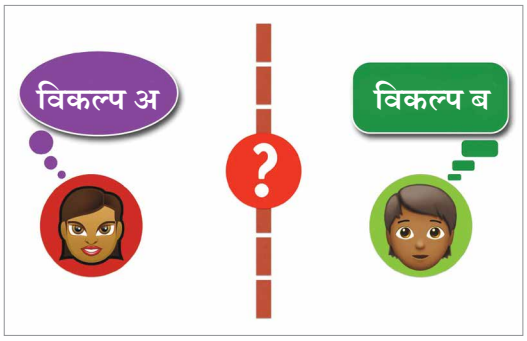

(क) जब विद्यार्थियों को एक सवाल दिया जाता है, तो वे अलग-अलग काम करते हैं और उन्हें एक-दूसरे की समझ के बारे में कम जानकारी होती है।

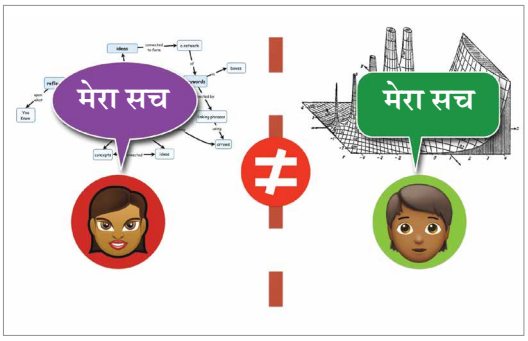

(ख) एक-दूसरे के साथ अपने हलों को साझा करते हुए विद्यार्थी महसूस करते हैं कि उनका दृष्टिकोण, रूपरेखा और समझ एक-दूसरे से भिन्न हैं।

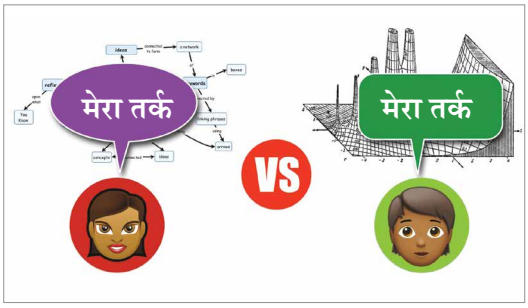

(ग) अपने हल की सत्यता को एक-दूसरे को समझाने की कोशिश में, विद्यार्थियों को सवाल को हल करने के बारे में अपने तर्क और परिप्रेक्ष्य को समझाना होता है।

(घ) अपने तर्क की व्याख्या करने के माध्यम से, विद्यार्थियों में सवाल की सही साझा समझ विकसित करने की अधिक सम्भावना है।

ज़ाहिर है कि तथ्यात्मक प्रश्न, जिनके उत्तरों का अवलोकन किया जा सकता है, इसके लिए ठीक नहीं होते हैं। शोध से पता चलता है कि तरीक़ा यह है कि ऐसे प्रश्नों को चुनें जो अवधारणाओं पर केन्द्रित हों, तथ्यों पर नहीं।[6] ऐसे प्रश्न भी चुनें जो कौतुहल जगाते हों, प्रश्न जो कक्षा में मतभेद पैदा कर दें। अकसर, आम ग़लतफ़हमियों पर आधारित प्रश्नों (जैसे, *"एक घर्षण रहित दुनिया में, कौन तेज़ी-से गिरेगा : एक बॉलिंग बॉल या टेनिस बॉल?"*) पर साथियों के बीच समृद्ध चर्चा होती है।

गाइड 2 : व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं को प्राप्त करना

यह सहज समझ के विपरीत लगता है कि साथी-शिक्षण नामक इस तकनीक के लिए अलग-अलग प्रतिक्रियाएँ आवश्यक हैं, लेकिन शोध से पता चलता है कि साथी-शिक्षण इस महत्त्वपूर्ण चरण के बिना काम नहीं करता है। विद्यार्थियों के लिए शुरू में प्रश्न के माध्यम से सोचना महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह विद्यार्थी में जिज्ञासा पैदा करता है। वे एक निर्णय लेते हैं और उस पर अपना मत ज़ाहिर करते हैं। जब विद्यार्थी इस चरण में शामिल नहीं होते हैं, तो साथी-शिक्षण में साथियों की सशक्त आलोचनाओं का अभाव होता है। इन मामलों में, कम आत्म-विश्वास वाले विद्यार्थी अकसर गहन चर्चा के बिना अधिक आत्म-विश्वास वाले विद्यार्थियों की बात मान लेते हैं। व्यक्तिगत प्रतिक्रियाएँ विद्यार्थियों को किसी साथी से प्रभावित हुए बिना सोच-विचार करके प्रश्न के साथ जुड़ने का समय देती हैं। यह प्रारम्भिक ज़िम्मेदारी सहपाठियों के बीच गहन चर्चा करवाती है।

इसे कैसे लागू करें : विद्यार्थियों से प्रश्न पूछें और उन्हें कक्षा में अपने व्यक्तिगत उत्तर साझा करने की अनुमति दें। मंथन करने और अपने उत्तरों को लिखने के लिए विद्यार्थियों के सामने सफ़ेद बोर्ड, फ्लैश कार्ड, दोनों तरफ़ 'हाँ' या 'नहीं' लिखे पैडल, (या, यदि आपके पास iClickers या Braincandy.org जैसे मुफ़्त ऑनलाइन टूल्स जैसी तकनीक उपलब्ध हो) पेश करें। उन्हें एक व्यक्तिगत प्रतिक्रिया बनाने और अपना मत ज़ाहिर करने के लिए समय और जगह दें। इससे साथी-चर्चा को समझने और परिणाम निकालने के लिए अधिक माहौल बनता है। विद्यार्थी बताते हैं कि किसी प्रश्न का उत्तर देने की प्रारम्भिक ज़िम्मेदारी व्यक्तिगत रूप से उन्हें सवाल और जवाब के बारे में अधिक गहराई से सोचने के लिए मजबूर करती है।

गाइड 3 : साथी-चर्चा

साथी-चर्चा को लागू करना ही साथी-शिक्षण की पूरी प्रक्रिया का एकमात्र सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा हो सकता है। हालाँकि, कक्षा में पूछे गए प्रत्येक प्रश्न के लिए साथी-चर्चा की आवश्यकता नहीं होती है। अनुसन्धान से पता चलता है कि जब कोई प्रश्न बहुत आसान होता है (जब पहली बार वोट देने पर ही 70% से अधिक विद्यार्थियों को सही उत्तर मिलता हो), तो शिक्षकों को साथी-चर्चा को छोड़ देना चाहिए क्योंकि इस स्थिति में सीखना लगभग न के बराबर होता है। यदि प्रश्न बहुत कठिन है (पहली बार वोट देने पर 35% से कम विद्यार्थियों को सही उत्तर मिले), तो शिक्षकों को चर्चा से पहले अधिक स्पष्टीकरण या संकेत प्रदान करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त, शिक्षकों को विद्यार्थियों को न केवल अपने उत्तरों पर चर्चा करने के लिए, बल्कि अपने **उत्तरों के कारणों** पर भी चर्चा करने के लिए प्रेरित करना चाहिए। यह महत्त्वपूर्ण है क्योंकि सीखने का केन्द्र सही उत्तर प्राप्त करने के बजाय वैचारिक समझ पर होना चाहिए। शोध से पता चलता है कि जब शिक्षक 'उत्तर-केन्द्रित' चर्चाओं के बजाय 'कारण-केन्द्रित' चर्चाओं को प्रोत्साहित करते हैं, तो सीखने में वृद्धि होती है।

इसे कैसे लागू करें : मतदान के पहले चरण के दौरान विद्यार्थियों को ध्यान-से देखें कि क्या प्रश्न साथी-चर्चा के लिहाज़ से बहुत आसान है या बहुत कठिन है। यदि प्रश्न बहुत सरल और बहुत कठिन के बीच के किसी बिन्दु पर हो, तो विद्यार्थियों को अपने साथी के समक्ष अपना मत रखने और यह समझाने के लिए प्रोत्साहित करें कि उन्होंने अपना व्यक्तिगत उत्तर क्यों चुना। विद्यार्थियों को चर्चा के लिए समय दें; विश्वास करें कि वे अपने स्वयं के शिक्षक के रूप में कार्य कर रहे हैं।

गाइड 4 : उत्तर की व्याख्या करना

मतदान, चर्चा और दुबारा मतदान के बाद शिक्षक द्वारा दिए जाने वाले अन्तिम स्पष्टीकरण के बिना साथी-शिक्षण अधूरा रहता है। अध्ययनों से यह संकेत मिलता है कि शिक्षक स्पष्टीकरण को साथी-चर्चा के साथ जोड़ने से यह इसी तरह की अन्य शैक्षणिक विधियों से बेहतर परिणाम देता है। मुमकिन है, इसका कारण यह हो कि विद्यार्थी अब शिक्षक के स्पष्टीकरण को सुनने के लिए तैयार और प्रेरित हो जाते हैं। उनका कौन-सा उत्तर सही था – पहला वाला (यानी, उनका व्यक्तिगत उत्तर), या किसी साथी के साथ बनाया गया, नया वाला? साथी-शिक्षण चक्र के पहले चरणों के बाद, विद्यार्थी अपने शिक्षक के दृष्टिकोण सुनने के लिए तैयार रहते हैं।

इसे कैसे लागू करें : एक बार जब विद्यार्थियों के मत दुबारा एकत्र हो जाएँ तब सही जवाब बतलाएँ और उसकी व्याख्या करें। कुछ प्रचलित उत्तरों की ओर उनका ध्यान आकर्षित करने का प्रयास करें, यह समझाते हुए कि क्यों, कोई ख़ास उत्तर एक सामान्य ग़लतफ़हमी को दर्शाता है या कोई ख़ास उत्तर क्यों सही है।

निष्कर्ष

साथी-शिक्षण विद्यार्थियों को अपने स्वयं के विचारों को बनाने और अपने विचारों का समर्थन करने में सक्षम बनाता है। साथ ही यह विधि उनकी स्वयं की समझ के बारे में स्पष्टता लाती है और इसमें वे अपने साथियों के साथ अर्थ का निर्माण करते हैं।

यह विद्यार्थियों को प्रेरित करता है, उनकी जिज्ञासा को बढ़ाता है, और विद्यार्थियों को उत्तरों को खोजने में सहभागिता के पहलुओं का अनुभव करने के मौक़े देता है। साथी-शिक्षण विभिन्न विषयों में और विद्यार्थियों के अध्ययन के विभिन्न स्तरों पर काम करता है। और, यदि इसे सही तरीक़े से लागू किया जाए, तो यह न केवल तथ्यात्मक ज्ञान में सुधार करता है, बल्कि वैचारिक ज्ञान में भी सुधार करता है। साथी-शिक्षण प्रत्येक शिक्षक के टूल-बॉक्स में निश्चित रूप से होता है क्योंकि यह सशक्त और प्रभावी है।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Illustration by Punya Mishra. License CC-BY-NC.

References

1. Vickrey T., Rosploch K., Rahmanian R., Pilarz M. & Stains M. (2015). Research-Based Implementation of Peer Instruction: A Literature Review. CBE-Life Sciences Education, 14(1).
2. Judson E. & Sawada D. (2002). Learning from past and present: Electronic response systems in college lecture halls. Journal of Computers in Mathematics and Science Teaching, 21(2), 167-181.
3. Mazur E. (1997). Peer Instruction: A User's Manual. Upper Saddle River, NJ: Prentice Hall.
4. McConnell D. A. et al. (2006). Using concepts to assess and improve student conceptual understanding in introductory geoscience courses. Journal of Geoscience Education, 54(1), 61-68.
5. Miller K., Lasry N., Lukoff B., Schell J. & Mazur E. (2014). Conceptual question response times in peer instruction classrooms. Physical Review Special Topics-Physics Education Research, 10(2), 020113.
6. Rao S. P., & DiCarlo S. E. (2000). Peer instruction improves performance on quizzes. Advances in Physiology Education, 24(1), 51-55.

केविन क्लोज़ एरिज़ोना स्टेट यूनिवर्सिटी में लर्निंग, लिट्रेसीज़ और टेक्नोलॉजीस में डॉक्टरेट के विद्यार्थी हैं। वह सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील मानकीकृत परीक्षणों, जटिल अधिगम को मापने और कक्षा के रचनात्मक मूल्यांकन (Formative assessment) पर शोध कर रहे हैं। उनसे kevin.close@asu.edu पर सम्पर्क किया जा सकता है।

निकोल बॉवर्स एरिज़ोना स्टेट यूनिवर्सिटी में लर्निंग, लिट्रेसीज़ और टेक्नोलॉजीस में डॉक्टरेट की छात्रा हैं। उनके शोध के विषयों में वे पथ (trajectories) शामिल हैं जिनका अनुसरण लोग वैज्ञानिक बनने के लिए करते हैं और साथ ही वे संगठन भी शामिल हैं जो विद्यार्थी-केन्द्रित सीखने का समर्थन करते हैं। उनसे nbowers1@asu.edu पर सम्पर्क किया जा सकता है।

रोहित मेहता कैलिफोर्निया स्टेट यूनिवर्सिटी, फ्रेस्नो में करिकुलम एंड इंस्ट्रक्शन के सहायक प्रोफ़ेसर हैं। उनका शोध वैज्ञानिक साक्षरता और न्यू एज मीडिया के समावेश पर है। उनसे mehta@csufresno.edu पर सम्पर्क किया जा सकता है।

पुण्य मिश्र स्कॉलरशिप एंड इनोवेशन के एसोसिएट डीन हैं और एरिज़ोना स्टेट यूनिवर्सिटी में प्रोफ़ेसर हैं। उनसे punya.mishra@asu.edu पर सम्पर्क किया जा सकता है।

जे. ब्रायन हेंडरसन एरिज़ोना स्टेट यूनिवर्सिटी में लर्निंग साइंसेज में सहायक प्रोफ़ेसर हैं। वह रचनात्मक मूल्यांकन तकनीकों के माध्यम से आपसी विज्ञान सीखने-सिखाने को सुगम बनाने के लिए शैक्षिक प्रौद्योगिकी और साक्ष्य-आधारित तर्क के उपयोग में रुचि रखते हैं। उनसे jbryanh@asu.edu पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : प्रमोद मैथिल **पुनरीक्षण** एवं **कॉपी एडीटिंग** : कविता तिवारी

रसायनशास्त्र की कक्षा में विद्यार्थियों का मोलर द्रव्यमान निकालें

संगीता बालकृष्णन

रसायनविज्ञान के शिक्षकों के लिए एक अ-प्रयोग की अ-विधि

उद्देश्य : रसायनशास्त्र की एक कक्षा[1] में विद्यार्थियों के मोलर द्रव्यमान का निर्धारण करना।

आवश्यक वस्तुएँ : आवर्त सारणी, काग़ज़, पेन

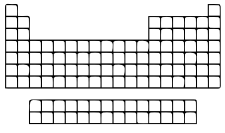

Periodic Table

Paper

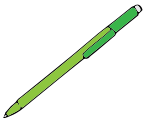

Pen

आवश्यक ग़ैर-वस्तुएँ : रसायनविज्ञान के विद्यार्थियों का एक समूह

सिद्धान्त : अकथनीय मज़ा और मज़ेदार रूप से अकथनीय।

व्यवस्था : तात्कालिक करें तो सबसे बढ़िया। ख़ासकर जब आप कक्षा में बोरियत के संकेत महसूस करने लगें।

विधि

1. आप निम्नलिखित या इसी प्रकार का प्रश्न (शब्दों के चयन में आप स्वतंत्र है) विद्यार्थियों से पूछें : "तो, क्या हम इस विषय को जारी रखें या क्या आप कोई खेल खेलना चाहते हैं?" काफ़ी सम्भावना है कि ऐसा प्रश्न पूछने के बाद आप बिना किसी रुकावट आगे बढ़ जाएँगे।[2]

एंतोन लेवॉज़िए

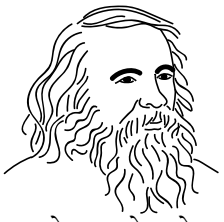

जोहान्स वोल्फगेन्ग डॉबराइनर

2. विद्यार्थियों को बताएँ कि वे अब "सबसे भारी कौन है?" नामक एक खेल खेलेंगे जिसमें आवर्त सारणी शामिल होगी। सुनिश्चित करें कि आपका उत्साह सबके बीच संचारित हो जाए।

जॉन न्यूलैंड्स

दिमित्री मेंडेलीव

3. इस चरण का शीर्षक है : आवर्त सारणी का संक्षिप्त, अति-संक्षिप्त परिचय। लेवॉज़िए, डॉबराइनर, न्यूलैंड्स, मेंडेलीव और चार नए खोजे गए तत्व — यही आपकी लगभग समय-रेखा हैं। संक्षेप में कहें तो, आप एक मिनट में आवर्त सारणी पर 300 से अधिक वर्षों के काम को कवर कर रहे हैं। आवर्त सारणी के दर्शन में चहलक़दमी। चरण का यह हिस्सा आप अपनी समझ के आधार पर छोड़ सकते हैं। रुचि भाँपने का समय : 4 सेकंड। आपके पूरे एकल संवाद के लिए समय : 56 सेकंड (क्योंकि : Foray[3])।

4. इस चरण को कदापि न छोड़ें। विद्यार्थियों से कुछ ऐसी चीज़ों के बारे में बात करें जिनमें आवर्त सारणी का उपयोग पाठ्यचर्या शिक्षण के अलावा किया गया है। आवर्त सारणी का उल्लेख करना न भूलें।

5. प्रक्रिया का मर्म यही है। कक्षा में हरे/ काले/ सफ़ेद बोर्ड पर अपना पहला नाम लिखें। अक्षरों को बड़ा और मोटा बनाएँ। अपने नाम में आए तत्वों के प्रतीकों को गोलों से घेर दें। बोर्ड पर उन तत्वों के परमाणु भार लिखें। उन्हें जोड़ें। परिणामी संख्या परमाणु भार इकाइयों (एएमयू) में आपका मोलर द्रव्यमान है। इसके चारों ओर एक बड़ा, मोटा बहुभुज बनाएँ।

6. विद्यार्थियों के लिए कार्य : विद्यार्थियों को प्रक्रिया के मर्म के अनुसार अपने मोलर द्रव्यमान की गणना करने के लिए कहें। विद्यार्थियों को अपने पहले नाम में भारी तत्वों के संयोजन को चुनने को कहिए। उदाहरण के लिए, यदि मारविन दी पैरानॉयड एंड्रॉइड (**Marvin the Paranoid Android**) आपका विद्यार्थी होता, तो उसके लिए, उसके पहले नाम मार्विन (**Marvin**) में उपलब्ध निम्नलिखित दो संयोजनों में से, पहला चुना जाएगा :

   (क) Ar (आर्गन), V (वैनेडियम), I (आयोडीन) और N (नाइट्रोजन)। इस संयोजन से हमें मोलर द्रव्यमान 231.8006 एएमयू प्राप्त होता है।

   (ब) Ar (आर्गन), V (वैनेडियम) और In (इंडियम) इससे हमें मोलर द्रव्यमान 205.7075 एएमयू प्राप्त होता है।

7. 'सबसे भारी विद्यार्थी' के लिए एक छोटा पुरस्कार घोषित करें।

8. अपने पहले नामों में Nh (निहोनियम), Mc (मस्कोवियम), Ts (टेनेसिन) और Og (ओगानेसन) वाले विद्यार्थियों के लिए एक और छोटे पुरस्कार की घोषणा करें।

9. विद्यार्थियों से इस टास्क को करने के लिए कहें और यदि वे बोर्ड पर आपके मान से ज़्यादा द्रव्यमान लाते हैं, तो चिल्लाकर इसकी सार्वजनिक घोषणा करने को कहें।

10. विद्यार्थियों की उल्लासपूर्ण उछल-कूद के लिए तैयार रहें।

11. हर बार नए 'सबसे ज़्यादा रासायनिक मोलर द्रव्यमान' को विद्यार्थी के नाम के साथ दर्ज करें।

12. निर्देश 7 के अनुसार कक्षा का 'विजेता' चुनें।
13. निर्देश 8 के अनुसार 'विजेताओं' को अलग से चुनें।
14. मुस्कराहट। शरारती बच्चों के एक पूरे समूह को लजाना।

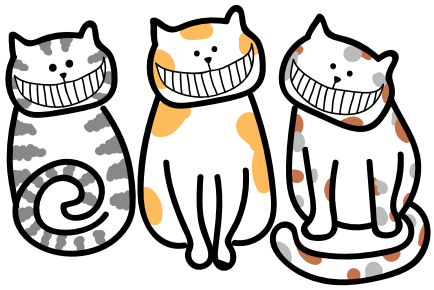

परिणाम

प्रफुल्लित विद्यार्थी। उन्हें लगता है कि आवर्त सारणी कभी इतनी मज़ेदार नहीं थी। एक प्रफुल्लित शिक्षक। आपको लगता है कि आवर्त सारणी कभी इतनी मज़ेदार नहीं थी।

सावधानियाँ

आपके सहकर्मी आपकी कक्षा में यह सोचकर ताका-झाँकी कर सकते हैं कि कहीं आप और आपके विद्यार्थी प्रयोगशाला से नाइट्रस ऑक्साइड को चुराकर कक्षा में तो नहीं लाए हैं।

ऐसी सवालिया नज़रों का पता लगने पर शान्त भाव से मुस्कराते हुए लगे रहें।

टिप्पणियाँ :

1. *जर्नल ऑफ़ केमिकल एजुकेशन (Journal of Chemical Education) 2015, 92 (10), 1757-1758 की प्रेरणा से इस अभ्यास को कक्षा में किया गया था।*
2. व्यक्तिगत अनुभव और व्यावहारिक सबूत।
3. Foray सैर (सं) : किसी गतिविधि में लगने वाली एक छोटी अवधि जो गतिविधियों की सामान्य समय सीमा से अलग होती है। स्रोत : http: // dictionary. cambridge.org/dEDIA/english/foray इसके अलावा, यह माना जाता है कि सैर एक मिनट से भी कम समय की होती है।
4. http://theodoregray.com/periodicTable/
5. इस गतिविधि के दौरान आपको एक उल्लास की अनुभूति होगी।
6. प्रत्येक कक्षा अद्वितीय होती है और यह तय करने के लिए शिक्षक ही सबसे सही व्यक्ति होगा कि किसी गतिविधि को कब और कैसे शुरू करना है। लेखक ने इस गतिविधि का उपयोग सतत व्याख्यान की बोरियत को तोड़ने के लिए किया था। हालाँकि, इसे आवर्त सारणी की शुरुआत करने के लिए विद्यार्थियों के लिए अतिरिक्त गतिविधि के रूप में आसानी से इस्तेमाल किया जा सकता है; या यह तब भी उपयोगी होगी, जब मोलर द्रव्यमान पढ़ाना हो। आशा की जाती है कि चूँकि यह गतिविधि विद्यार्थियों को एक व्यक्तिगत स्तर पर जोड़ती है, इसलिए यह उन्हें अन्तर्निहित रासायनिक अवधारणाओं को बेहतर ढंग से समझने में मदद करेगी।
7. लेख के बैक ग्राउंड में उपयोग किए गए चित्र का स्रोत : Chemistry Test: Thebarrowboy, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/thebarrowboy/6283758878 License: CC-BY.

संगीता बालकृष्णन कर्नाटक के मैसूर में क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान (आरआईई) के विज्ञान और गणित विभाग में रसायनविज्ञान की सहायक प्राध्यापक हैं। उनसे balakrishnan.sangeetha@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : प्रमोद मैथिल **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

वैज्ञानिक खोज

जी. एस. रौतेला

स्थानीय स्तर पर उपलब्ध सस्ती सामग्री का उपयोग करते हुए सरल प्रयोगों द्वारा अनेक वैज्ञानिक अवधारणाएँ समझी व प्रदर्शित की जा सकती हैं। इस लेख में भौतिकी के बुनियादी सिद्धान्त समझने के लिए कुछ सरल व रोचक प्रयोग दिए गए हैं।

हम अकसर ऐसी प्राकृतिक घटनाएँ देखते हैं जो हमें चमत्कृत कर देती हैं और हम विस्मय में डूब जाते हैं। इन घटनाओं को ग़ौर से देखते हुए उनके पीछे छिपे विज्ञान का पता लगाना न सिर्फ़ हमारे इन अनुभवों का आनन्द कई गुना बढ़ा देता है, बल्कि वैज्ञानिक अवधारणाओं को लेकर हमारी समझ भी इससे बेहतर होती है।

इसी तरह, कक्षा में सस्ती सामग्री का उपयोग करते हुए सरल प्रयोगों और गतिविधियों के द्वारा विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में दिए गए बुनियादी सिद्धान्तों की व्याख्या करना स्कूली शिक्षा में सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं को बहुत मज़ेदार और कारगर बना सकता है। ऐसे प्रयोग विद्यार्थियों को रोमांचित करने के साथ-साथ विज्ञान में उनकी रुचि और समझ को भी बढ़ाते हैं।

यहाँ हम, कुछ ऐसे सरल प्रयोग दे रहे हैं जो आप कक्षा में कर सकते हैं या अपने विद्यार्थियों को घर पर करने के लिए भी प्रेरित कर सकते हैं। इनमें से हरेक प्रयोग, विद्यार्थियों को सवाल पूछने के लिए उकसाएगा और प्रयोगों के बुनियादी सिद्धान्तों को स्वयं खोजने में मददगार होगा। इस प्रक्रिया में काफ़ी सारा विज्ञान भी सीखेंगे।

प्रयोग-1 : फेफड़ों की क्षमता

सम्बन्धित गतिविधि शीट में दिया गया प्रयोग अपने विद्यार्थियों को बताएँ। उनसे पूछें कि इससे वे क्या खोजने की अपेक्षा करते हैं। फिर उन्हें, दो-दो के समूहों में यह प्रयोग करने और अपने परिणाम

विज्ञान प्रयोगशाला

फेफड़े की क्षमता

- *कचरा रखने की एक थैली (garbage bag) लें। उसे अपने मुँह के पास रखें (चित्र **क**) और पूरी ताक़त लगाकर उसमें फूँकें। देखें कि आप थैली में कितनी हवा भर पाते हैं।*
- *अब थैली का मुँह पूरी तरह खुला रखें और उसे अपने मुँह से थोड़ा दूर रखें (चित्र **ख**)। एक बार फिर पूरी ताक़त लगाकर उसमें फूँकें।*

(क)

(ख)

दोनों में से कौन-सी थैली ज़्यादा भरी हुई लगती है?

1. *स्थिति (**क**) वाली थैली*
2. *स्थिति (**ख**) वाली थैली*
3. *दोनों थैलियाँ समान रूप से भरी हुई लगती हैं।*

जी.एस. रौतेला नेशनल काउंसिल ऑफ़ साइंस म्यूज़ियम के पूर्व महानिदेशक; नेहरू साइंस सेंटर, मुम्बई के निदेशक; साइंस सिटी, कोलकाता के निदेशक; और एन्थ्रोपोलजिकल सर्वे ऑफ़ इंडिया के निदेशक (प्रभारी) रह चुके हैं। उनसे gsr.rautela@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : कविता तिवारी

i wonder... Rediscovering school science
Azim Premji University

विज्ञान प्रयोगशाला

स्ट्रॉ से पीना

(क)

(ख)

- *एक स्ट्रॉ का उपयोग करके काँच के गिलास में भरे पानी को जितनी जल्दी हो सके पीकर ख़ाली करें* ***(क)****।*
- *गिलास में फिर से समान मात्रा में तरल भरें और इस प्रयोग को दो स्ट्रॉ के साथ दोहराएँ। दोनों स्ट्रॉ का एक सिरा अपने मुँह में रखें। पर यह सुनिश्चित करें कि एक स्ट्रॉ का दूसरा सिरा तरल के अन्दर और दूसरी स्ट्रॉ का दूसरा सिरा गिलास के बाहर रहे* ***(ख)****।*

दोनों में से किस स्थिति में गिलास जल्दी ख़ाली होगा?

1. *स्थिति* ***(क)*** *में*
2. *स्थिति* ***(ख)*** *में*
3. *दोनों स्थितियों में गिलास समान दर से ख़ाली होगा।*

जी.एस. रौतेला नेशनल काउंसिल ऑफ़ साइंस म्यूज़ियम के पूर्व महानिदेशक; नेहरू साइंस सेंटर, मुम्बई के निदेशक; साइंस सिटी, कोलकाता के निदेशक; और एन्थ्रोपोलजिकल सर्वे ऑफ़ इंडिया के निदेशक (प्रभारी) रह चुके हैं। उनसे gsr.rautela@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कविता तिवारी

विज्ञान प्रयोगशाला

गुब्बारों को पिचकाना–I

- *इंट्रावेनस ट्यूब सेट के नुकीले सिरे को काटें और उसे एक ऐसे गुब्बारे में डालें जो तीन-चौथाई फूला हुआ हो।*
- *इंट्रावेनस ट्यूब के वॉल्व को बन्द रखते हुए, गुब्बारे के मुँह को ट्यूब के गोल सिरे के चारों ओर इतना कसकर बाँधें कि थोड़ी-सी भी हवा बाहर न निकल पाए।*
- *इसी गुब्बारे जैसा एक और गुब्बारा लें और उसे एक-तिहाई फुला लें। उसके मुँह को इंट्रावेनस ट्यूब के दूसरे सिरे पर कसकर बाँध लें।*

जी.एस. रौतेला नेशनल काउंसिल ऑफ़ साइंस म्यूज़ियम के पूर्व महानिदेशक; नेहरू साइंस सेंटर, मुम्बई के निदेशक; साइंस सिटी, कोलकाता के निदेशक; और एन्थ्रोपोलजिकल सर्वे ऑफ़ इंडिया के निदेशक (प्रभारी) रह चुके हैं। उनसे gsr.rautela@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : कविता तिवारी

i wonder... Rediscovering school science
Azim Premji University

विज्ञान प्रयोगशाला

गुब्बारों को पिचकाना–II

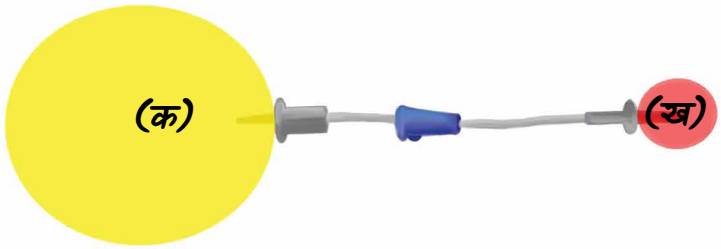

- *यह जाँचने के लिए इंट्रावेनस ट्यूब का वॉल्व बन्द है और दोनों गुब्बारों का मुँह सही ढंग से सील है या नहीं, कुछ मिनटों तक गुब्बारों के आकार को देखें– दोनों का आकार जैसा था वैसा ही बना रहना चाहिए।*
- *अब इंट्रावेनस ट्यूब के वॉल्व को धीरे-धीरे खोलें।*

कौन-सा गुब्बारा पहले पिचकता है?

1. *गुब्बारा **(क)***
2. *गुब्बारा **(ख)***
3. *दोनों का आकार समान रहता है।*

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

जी.एस. रौतेला नेशनल काउंसिल ऑफ़ साइंस म्यूज़ियम के पूर्व महानिदेशक; नेहरू साइंस सेंटर, मुम्बई के निदेशक; साइंस सिटी, कोलकाता के निदेशक; और एन्थ्रोपोलजिकल सर्वे ऑफ़ इंडिया के निदेशक (प्रभारी) रह चुके हैं। उनसे gsr.rautela@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कविता तिवारी

साझा करने को कहें। विचित्र किन्तु सत्य तो यह है कि मुँह से दूर रखने और ज़्यादा खोलने पर बैग ज़्यादा भरेगा। एक बार वे इस नतीजे पर पहुँच जाएँ तब उनसे पूछिए कि ऐसा क्यों होता है?

पहले मामले **(क)** में, बैग में वही हवा अन्दर जाती है जो आप प्रश्वसित करते हैं या फेफड़ों से बाहर निकालते हैं। एक स्वस्थ वयस्क अपने फेफड़ों में जहाँ लगभग 6 लीटर हवा थामे रख सकता है (यह वायटल क्षमता कहलाती है), वहीं दूसरी ओर साँस लेने या छोड़ने के दौरान वह एक साँस में कोई आधा लीटर हवा ही अन्दर ले या बाहर छोड़ पाता है (इसे टाइडल वॉल्यूम कहते हैं)। अब दूसरे उदाहरण **(ख)** की बात करें तो बैग में अन्दर जाने वाली हवा की मात्रा आपके द्वारा प्रश्वसित हवा से ज़्यादा है। इस बात को बरनोली के सिद्धान्त से समझा जा सकता है, जिसके अनुसार, "किसी द्रव के एकरेखीय प्रवाह (streamline flow) के लिए दाब, गतिज ऊर्जा प्रति इकाई आयतन और स्थितिज ऊर्जा प्रति इकाई आयतन का कुल योग हमेशा स्थिर रहता है।" जब आप दम लगाकर मुँह से हवा छोड़ते हैं तब हवा के तेज़ रफ्तार अणुओं के चलते गतिज ऊर्जा बढ़ जाती है। पर चूँकि उनकी स्थितिज ऊर्जा तो वही-की-वही रहती है, सो आपके मुँह से दम लगाकर निकाली गई हवा का दाब कम हो जाता है। नतीजतन, यूँ पैदा हुए आंशिक निर्वात को भरने के लिए आस-पास की हवा धड़ल्ले से बैग में घुसती है और क़ैद हो जाती है।

प्रयोग-2 : स्ट्रॉ से पीना

सम्बन्धित वर्कशीट का प्रयोग अपने विद्यार्थियों को बताएँ। हर बार की तरह इस बार भी, प्रयोग शुरू करने से पहले उनसे परिणामों का अनुमान लगाने को कहें। अबकी बार भी, उन्हें दो-दो के समूहों में बाँटें और अपने प्रायोगिक परिणाम साझा करने को कहें। अजीब तो लग सकता है, लेकिन दो स्ट्रॉ से पीना वाकई एक मुश्किल काम है। अपने विद्यार्थियों को इस 'मुश्किल' पर सोचने को प्रेरित करें।

पहले मामले **(क)** में, जैसे ही आप एक स्ट्रॉ से चूसना शुरू करते हैं, आप उस स्ट्रॉ की सारी हवा खींचकर अपने मुँह में ले लेते हैं, जिसके चलते उस स्ट्रॉ के अन्दर एक आंशिक निर्वात बन जाता है। नतीजतन, स्ट्रॉ के अन्दर हवा के दबाव में कमी आ जाती है। लेकिन, गिलास के अन्दर के पानी पर वायुमण्डलीय दाब तो जस-का-तस बना रहता है। सो, स्ट्रॉ के दो सिरों पर दबाव के इस अन्तर के चलते पानी स्ट्रॉ के अन्दर ऊपर चढ़कर आपके मुँह में चला आता है और इस तरह आप मज़े से अपना जूस पीते हैं। दूसरे मामले **(ख)** में जब आप एक स्ट्रॉ गिलास के अन्दर और दूसरी स्ट्रॉ गिलास के बाहर रखकर पीना शुरू करते हैं तो गिलास के बाहर वाली हवा दूसरी स्ट्रॉ के रास्ते अन्दर आकर ऊपर चढ़ने लगती है। नतीजतन, स्ट्रॉ के अन्दर निर्वात नहीं बन पाता, सो अन्दर की हवा का दबाव भी उतना ही होता है जितना कि गिलास में डले द्रव पर पड़ने वाला वायुमण्डलीय दाब। नतीजतन, द्रव को नली के अन्दर ऊपर सरकाने/ खींचने के लिए ज़िम्मेदार दाब-अन्तर के नदारद होने से नली में द्रव नहीं चढ़ पाता और जूस पीने का हमारा मज़ा किरकिरा हो जाता है।

प्रयोग-3 : गुब्बारों की हवा निकालना

गतिविधि शीट-1 में अपने विद्यार्थियों के साथ प्रयोग को जमाएँ। गतिविधि शीट-2 में दिखाई गई अन्तःशिरा नली/ इंट्रावीनस ट्यूब का वॉल्व खोलने से पहले विद्यार्थियों से प्रयोग के परिणाम का क़यास लगाने को कहें। आपके द्वारा वॉल्व खोलते समय विद्यार्थियों से ग़ौर से देखने को कहें। उनसे यह भी पूछें कि क्या वे अपने इस अवलोकन का कारण बता सकते हैं।

हममें से बहुतों के मन में यह ख़्याल आता है कि एकबारगी जो वॉल्व खुला, तो बड़े गुब्बारे **(क)** की हवा इतनी तो निकल ही जाएगी कि इसकी साइज़ सिकुड़कर छोटे गुब्बारे **(ख)** जितनी हो जाएगी। लेकिन असल में होता उल्टा है – सिकुड़ता तो छोटा गुब्बारा है जिसके चलते बड़ा गुब्बारा और भी 'बड़ा' दिखने लगता है। इसे समझने के लिए, चलिए यह देखें कि एक गुब्बारे के अन्दर भरी हवा का दाब किस तरह से गुब्बारे के व्यास के हिसाब से बदलता है। शुरुआत में, जब भी किसी गुब्बारे में हवा भरी जाती है तो उसके रबड़ की इलास्टिसिटी/ लचीलापन उसके फूलने/ फैलने का विरोध करती है। नतीजतन, गुब्बारे के अन्दर हवा का दबाव तुरत-फुरत बढ़ते हुए अपने चरम पर पहुँच जाता है। हमारे प्रयोग का छोटा गुब्बारा हवा के इस दबाव पर या उसके क़रीब ही होता है। एकबारगी इस स्तर पर पहुँचने के बाद, गुब्बारा बड़ी आसानी से साइज़ में फूलकर अपने आयतन में बढ़ने लगता है। फिर इसके बाद और ज़्यादा हवा घुसाने से बल्कि गुब्बारे का अन्दरूनी दाब कम होने लगता है। दूसरे शब्दों में, बड़े गुब्बारे का आन्तरिक दाब अपने चरम पर पहुँच जाता है और साइज़ बढ़ने पर उसका यह दाब न्यूनतम हो जाता है। अगली बार जब आप गुब्बारा फुलाएँ तो आप उसके इस व्यवहार पर नज़र रखें। शुरुआत में तो आपको बहुत दम लगाना पड़ेगा इतना कि आपकी ख़ुद की हवा भी निकल सकती है, लेकिन एक ख़ास साइज़ तक फूलने के बाद तो फिर उसे और फुलाना आसान हुआ जाता है। इसीलिए, दोनों गुब्बारों के बीच हवा के बहाव को अनुमति देने वाला वॉल्व जब खोला जाता है तो हवा उच्च दबाव क्षेत्र (यानी छोटे गुब्बारे) से निम्न दाब (बड़े गुब्बारे) की ओर बहती है। नतीजे में, बड़ा गुब्बारा और फूलकर कुप्पा (बड़ा) हो जाता है। एकबारगी, दोनों गुब्बारों के बीच की हवा का दबाव एक समान हो जाने पर हवा का बहना/ प्रवाह रुक जाता है और दोनों की साइज़ें तब और नहीं बदलतीं।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Colourful balloons in a calm sky. Tirachard Kumtanom. URL: https://www.pexels.com/photo/balloons-calm-clouds-colorful-574282/. License: CC-0.

References

1. Wikipedia contributors, "Two-balloon experiment," Wikipedia, The Free Encyclopedia. URL: HYPERLINK "https://en.wikipedia.org/w/index.php?title=Two-balloon_experiment&oldid=830073077%20"https://en.wikipedia.org/w/index.php?title=Two-balloon_experiment&oldid=830073077 (accessed June 5, 2018).

जी. एस. रौतेला राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद के महानिदेशक; नेहरू साइंस सेंटर, मुम्बई के निदेशक, साइंस सिटी, कोलकाता के निदेशक और एन्थ्रोपोलजिकल सर्वे ऑफ़ इंडिया के डायरेक्टर (प्रभारी) रह चुके हैं। पेशे से विज्ञान सम्प्रेषक रहते हुए उन्होंने विद्यार्थियों लिए अनेक प्रायोगिक विज्ञान प्रदर्शनियों, शौक़िया प्रयोगशालाओं, उपकरण-किटों और परस्पर-संवादी विज्ञान गतिविधियों का सक्रिय मार्गदर्शन किया है। इसके साथ ही, विज्ञान शिक्षकों के पेशेवर विकास में भी इनका योगदान रहा है। उनका ई-मेल पता है gsr.rautela@gmail.com

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

यह मछली नीली क्यों है?

नवोदिता जैन और स्वागता घोष

एक रहस्यमई नीले प्रोटीन के नवीन गुणधर्म की आकस्मिक खोज से उस सवाल का जवाब मिला जो दो दशकों से एक मत्सय जीवविज्ञानी को मथे जा रहा था। यह कहानी है वेन शेफ़र और एक अवलोकन के पीछे पड़ जाने की उनकी लगन की – पीली मछलियों के लिए प्रसिद्ध एक झील में नीली मछली का मिलना।

उत्तर-पूर्वी अमरीका और कनाडा (द ग्रेट लेक्स रीजन) में बड़ी तादाद में झीलों का होना इन इलाक़ों में मन-बहलाव के मत्स्याखेट की लोकप्रियता की व्याख्या कर देता है (**देखें चित्र-1**)। कभी-कभी, पैनी नज़रों वाला कोई व्यक्ति जब मछली पकड़ने जाता

चित्र-1 : नॉर्थ अमरीका और कनाडा का ग्रेट लेक इलाक़ा। Credits: Jonnie Nord – U.S. Army Corps of Engineers, Detroit District, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Great_Lakes_1.PNG. License: Public Domain.

चित्र-2 : पीली वॉलआई

(क) मछली

Credits: Engbretson, Eric / U.S. Fish and Wildlife Service, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Sander_vitreus.jpg. License: CC-BY.

(ख) शुभंकर वॉली

Credits: Counselman Collection, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/counselman/14504597100. License: CC BY-SA 2.0.

है, तो हो सकता है कि वह किसी वैज्ञानिक खोज के साथ लौटे। यह एक ऐसी ही कहानी है – एक तेज़ नज़र वाले मच्छीमार, वेन शेफ़र की।

यूनिवर्सिटी ऑफ़ विस्कॉन्सिन, यूएस के एमेरिटस प्रोफ़ेसर शेफ़र एक मत्स्य जीवविज्ञानी हैं। उनकी ख़ास रुचि *सैंडर विट्रीयस* या पीली वॉलआई नामक प्रजाति में है (**देखें चित्र-2 क**)। पिछले 25 सालों से हर साल शेफ़र अपने ओंटारियो, कनाडा स्थित कैबिन में जाते हैं – इन मछलियों का उनके प्राकृतिक आवास में अध्ययन करने।

वॉलआई क्या है?

ऐसा माना जाता है कि इस मछली को यह विचित्र-नाम इस तथ्य से मिला कि इसकी आँखें अपारदर्शी और शीशे के समान होती हैं। कनाडा (और उत्तर अमरीका) की देशज वॉलआई इस इलाक़े का एक लज़ीज़ व्यंजन है। लगभग 76 सेमी लम्बी और क़रीब 9 किलो वज़नी यह मछली वाक़ई एक सुनहरा शिकार होती है! मज़ेदार बात है कि वॉली नाम की एक वॉलआई, ओहायो, यूएस की आइस हॉकी टीम टोलेडो वॉलीज़ की शुभंकर है (**देखें चित्र-2 ख**)।

"देखो! मेरी पकड़ में एक नीली वॉलआई आई है!"

1992 की गर्मियों में कुछ अजीब घटा – वेन ने एक मछली पकड़ी जो नीले शल्कों वाली एक नई प्रजाति लग रही थी (**देखें चित्र-3 क**)। लेकिन मछली को हाथ में लेते ही उन्होंने पाया कि नीला रंग श्लेष्मा जैसे उस पदार्थ का था जो रगड़ने पर उनकी हथेलियों पर लग गया था (**देखें चित्र-3 ख**) और पीछे छूट गई इस्पाती धूसर रंग की मछली जो साफ़तौर पर पीली वॉलआई जैसी दिख रही थी। वेन की प्रखर जिज्ञासा न होती, तो कहानी यहीं ख़त्म हो सकती थी। उन झीलों में मत्स्याखेट के अपने तजुर्बे के चलते वेन ने अपने शिकार को एक वॉलआई के रूप में पहचान लिया। प्रयोगशाला में लौटकर उन्होंने डीएनए अध्ययनों के द्वारा अपने इस निष्कर्ष की पुष्टि की। लेकिन सवाल यह था कि नीले रंग का वह पदार्थ क्या था? वह वहाँ क्यों कर था? क्या यह एकबारगी होने वाली घटना थी? वेन के अन्दर के वैज्ञानिक के लिए ऐसा असंगत अवलोकन एक ज़बरदस्त चुनौती था।

जब उसी इलाक़े के शौक़िया व पेशेवर दोनों तरह के बंसीबाज़, यहाँ नीली वॉलआई दिखने की बात कहने लगे तब जाकर वेन को समझ आया कि यह कोई बिरली घटना नहीं थी। उनके आगामी मत्स्याखेट अभियानों में उन्हें ऐसी मछलियाँ लगातार मिलती रहीं। साल 2006 में वेन ने अपनी वॉलआई जानकारी को संकलित कर एक ऑनलाइन डाटाबेस बनाने की ठानी। इसके बाद उन्होंने अन्य लोगों को भी आमंत्रित किया कि वे अपने अवलोकनों का ब्योरा इस डाटाबेस में जोड़ें और साथ ही उनसे आग्रह किया कि वे अपने द्वारा एकत्रित श्लेष्मा के नमूने भी उन्हें भेजें। तमाम रिकॉर्डों को देखने पर वेन

चित्र-3 : नीली वॉलआई

चित्र-3 क : नीली वॉलआई बरअक्स पीली वॉलआई

Credits: © Canadian Science Publishing or its licensors. URL: http://www.nrcresearchpress.com/doi/full/10.1139/cjfas-2014-0139#.WyoKe1OFN-U. License: CC-BY 4.0.

चित्र-3 ख : हथेलियों पर लगा श्लेष्मा

Credits: Gary Skrezk, Walleye Heaven. URL: https://www.walleyeheaven.com/bluewalleye/bluewalleye4.png. License: Obtained with permission from the rights owner.

और उनके समूह को दो दिलचस्प पैटर्न मिले – नीली वॉलआई देखे जाने की ज़्यादातर घटनाएँ गर्मी के दिनों (जून-अगस्त) की थीं और उनमें से एक भी नमूना यूएस के मिनेसोटा या विस्कॉन्सिन राज्यों की झीलों से नहीं था। वेन और उनकी रिसर्च टीम द्वारा 16 सालों तक किए गए ज़मीनी अवलोकनों से इन पैटर्नों की पुष्टि हुई। तथ्यों के इन समान्तर स्रोतों के आधार पर वेन इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि नीली वॉलआई 45 डिग्री उत्तर अक्षांश में पाई गई हैं, इसीलिए वे सिर्फ़ कनाडा की तरफ़ वाली झीलों में ही पाई जाती हैं।

वेन की टीम ने मछली की सतह से छूटकर हाथ पर लगे श्लेष्मा के विभिन्न नमूनों का विश्लेषण करना जारी रखा और वे इसकी व्याख्या करने वाली कई परिकल्पनाओं तक पहुँचे। इनमें से एक परिकल्पना ने नीले रंग का कारण इस इलाक़े के पानी की अम्लता को बताया। एक और परिकल्पना थी कि यह श्लेष्मा मछली की त्वचा पर विकसित हो रहे शैवाल या बैक्टीरिया की वजह से हो सकती है। अन्ततः विशेषज्ञ रसायनज्ञों के सहयोग से वेन उस विशिष्ट पदार्थ को अलग कर पाए जिसके चलते श्लेष्मा को उसकी नीली आभा मिलती थी। इस पदार्थ की प्रकृति प्रोटीनी पाई गई, जिसके चलते यह सम्भावना ख़ारिज हो गई कि यह मछली की त्वचा पर बसर करने वाले कोई बैक्टीरिया या शैवाल हैं।

रहस्यमय नीला प्रोटीन

मछली की ही तरह नीले प्रोटीन की अपनी दास्तान भी कुछ कम दिलचस्प नहीं। विस्तृत रासायनिक अध्ययनों के बाद वेन और उनके सहयोगियों ने पाया कि इसका नीला रंग प्रोटीन-क्रोमोफ़ोर संकुल से आता है। यह प्रोटीन सिर्फ़ इस मछली में ही पाया गया, सो इसका नाम संडरसायनिन रखा गया। पता चला कि यह क्रोमोफ़ोर दरअसल बिलिवर्डिन है जो कई प्रजातियों में संरक्षित रहा है। बिलिवर्डिन लाल रक्त कोशिकाओं में हीमोग्लोबिन के पुनर्चक्रण के दौरान हीम के टूटने से बनता है। नीली मछली के पाए जाने के पैटर्न के चलते यह सवाल उठा – प्रोटीन-क्रोमोफ़ोर संकुल का उत्पादन सिर्फ़ गर्मियों में और केवल कनाडा की झीलों में पाई जाने वाली वॉलआई मछलियों में ही क्यों होता है?

इस पहेली के हल का एक हिस्सा हाईस्कूल के एक विद्यार्थी से मिला जिसने दिखाया कि 45 डिग्री अक्षांश से ऊपर के क्षेत्रों को गर्मी के दिनों में असामान्य रूप से ऊँची मात्रा में पराबैंगनी विकिरण मिलता है। दक्षिणी स्वीडन के एक अध्ययन में भी 55 डिग्री अक्षांश के ऊपरी इलाक़ों में गर्मियों के दौरान पराबैंगनी रेडिएशन में ऐसी ही बढ़ोतरी रिकॉर्ड की गई थी। इस अध्ययन के शोधकर्ताओं ने इस बढ़ोतरी का कारण ध्रुवों के निकट ओज़ोन की मात्रा में मौसमी कमी को बताया। हल का दूसरा हिस्सा बिलिवर्डिन के संश्लेषण सम्बन्धी अध्ययनों से आया। आमतौर पर हीम का विघटन एंज़ाइमों की मध्यस्थता से होता है, लेकिन पराबैंगनी विकिरण पड़ने पर भी होता है। इस महत्त्वपूर्ण जानकारी के बल पर वेन और उनके सहकर्मी इस परिकल्पना के क़रीब आते दिखे – कनाडा की झीलों में पराबैंगनी विकिरण की ऊँची मात्रा के चलते हीम का टूटना बढ़ रहा होगा। जिसके नतीजतन, हो सकता है कि संडरसायनिन-बिलिवर्डिन संकुल यानी नीली श्लेष्मा का उत्पादन बढ़ता होगा। पहेली का अन्तिम हिस्सा संयोग से

चित्र-4 : प्रतिदीप्ति सूक्ष्मदर्शी से देखने पर नीली श्लेष्मा

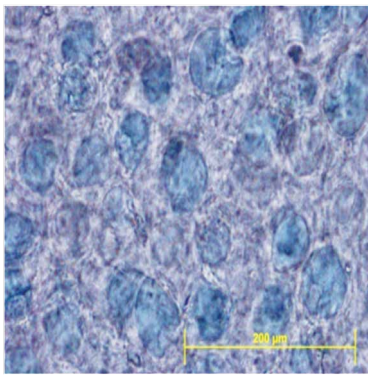

(क) सफ़ेद प्रकाश में देखने पर

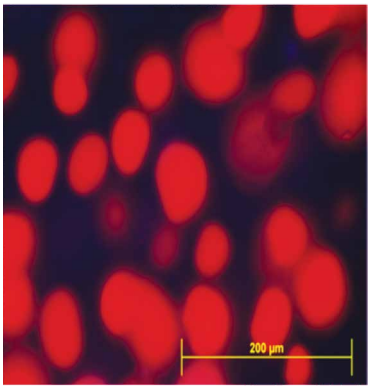

(ख) पराबैंगनी प्रकाश में देखने पर

Credits: Ghosh S et al ©National Academy of Science. URL: http://www.pnas.org/content/113/41/11513. License: CC BY-NC-ND.

घटा। वेन को उनके एक सहयोगी ने सुझाया कि वेन नीली श्लेष्मा को एक ब्राइट-फील्ड (सफ़ेद प्रकाश) सूक्ष्मदर्शी से देखें। ऐसा करने पर वेन को आश्चर्यजनक रूप से नमूने में अनेक चटख लाल रंग के धब्बे दिखे। यह सुनकर उस सहयोगी ने वेन से पूछा, "क्या आपको यक़ीन है कि आपतित प्रकाश वाक़ई सफ़ेद था।" यह सवाल सुनते ही वेन का माथा ठनका कि वे अब तक उस नमूने को एक प्रतिदीप्ति (फ्लोरेसेंस) सूक्ष्मदर्शी में पराबैंगनी (तरंग लम्बाई क़रीब 375) प्रकाश में देख रहे थे। उत्साहित होकर उन्होंने नमूने को पहले सफ़ेद प्रकाश से और फिर पराबैंगनी प्रकाश से आलोकित किया। ऐसा करने पर हर बार उन्हें नतीजा वही मिला। सफ़ेद प्रकाश में नमूना लगभग समान रूप से नीला दिखा (**देखें चित्र-4 क**) लेकिन पराबैंगनी प्रकाश में देखने पर उसमें सुर्ख़ लाल रंग के धब्बे दिखे (**देखें चित्र-4 ख**)। श्लेष्मा का कोई घटक पराबैंगनी प्रकाश (तरंग लम्बाई अपेक्षाकृत कम) को सोखने और लाल प्रकाश (तरंग लम्बाई अपेक्षाकृत अधिक) को उत्सर्जित करने की क्षमता रखता था। दूसरे शब्दों में, वह प्रतिदीप्ति दर्शाता था। वेन ने अनुमान लगाया कि यह चमकीला घटक संडरसायनिन था। इसकी पुष्टि हुई जब वे और उनके एक सहयोगी एस. रामास्वामी इस प्रोटीन को पृथक करने में कामयाब हुए।

स्वाभाविक रूप से अगला सवाल उठ गया – क्या श्लेष्मा महज़ एक मौसमी प्रतिक्रिया थी? या इसके चलते उस नीली मछली को जीवित रहने में कुछ मदद भी मिलती है? संडरसायनिन द्वारा पराबैंगनी प्रकाश को सोखने की क्षमता की संयोगवश हुई खोज ने इस रहस्य के कुछ सुराग़ दिए। चूँकि वेन पीली और नीली वॉलआई के बीच कोई जीनोमिक अन्तर नहीं खोज पाए, सो उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि नीली श्लेष्मा एक मौसमी 'अनुकूलन' हो सकता है। हो सकता है कि सतह पर पराबैंगनी विकिरण को सोखकर श्लेष्मा का संडरसायनिन-बिलिवर्डिन संकुल अन्दरूनी ऊतकों को इसके नुक़सानदेह प्रभावों से बचा रहा हो। रामास्वामी एक और सम्भावित लाभ की ओर इशारा करते हैं।

चूँकि पानी अपेक्षाकृत अधिक तरंग-लम्बाई का प्रकाश सोखता है, सो केवल कमतर तरंग-लम्बाइयों वाला प्रकाश (नीला और पराबैंगनी) ही गहरे पानी में पहुँच पाता है। गहरे पानी में रहने वाली मछलियों में चीज़ों को उनके द्वारा परावर्तित पराबैंगनी प्रकाश में 'देखने' की क्षमता (पराबैंगनी दृष्टि) विकसित हुई है, जो एक अनुकूलन है। कनाडा की झीलों में वॉलआई की प्राकृतिक शिकारी, पाइक (बड़े तेज़ दाँत वाली विशाल मछली), शिकार को देखने के लिए पराबैंगनी दृष्टि पर भरोसा करती है। अपने मौसमी अनुकूलन के चलते नीली वॉलआई पराबैंगनी को परावर्तित करने की बजाय उसे सोखती हैं। इस प्रकार नीली श्लेष्मा एक अदर्शन आवरण (invisibility cloak) की तरह काम करती है और मछली को उसके प्रमुख शिकारियों की नज़रों में अदृश्य बना देती है! लेकिन वॉलआई ख़ुद भी गहरे पानी में रहती है और पराबैंगनी दृष्टि से देखती है। तो फिर इसका मतलब क्या यह हुआ कि नीली वॉलआई न सिर्फ़ पाइक्स के लिए अदृश्य बनती हैं, बल्कि अपने सम्भावित यौन–जोड़ीदार के लिए भी अदृश्य हो जाती हैं? रामास्वामी का मानना है कि वॉलआई में बाहरी निषेचन के चलते सम्भोग-साथी के लिए 'दृश्यमान होने' की ज़रूरत ही नहीं रह जाती है।

इस प्रोटीन की उपयोगिता केवल मछलियों के लिए ही नहीं है। रामास्वामी की प्रयोगशाला की एक रिसर्चर स्वागता, उस टीम की एक सदस्य थीं जिसने संडरसायनिन के प्रतिदीप्ति गुण का विस्तृत अध्ययन किया था। इस टीम ने पाया कि संडरसायनिन साइज़ में काफी छोटा होता है – शायद अब तक ज्ञात सबसे छोटा लाल प्रतिदीप्त प्रोटीन। लेकिन अपनी अनोखी रासायनिक प्रकृति के चलते यह लम्बे समय तक चमकता रह सकता है। इन दो गुणधर्मों को ध्यान में रख स्वागता रिसर्च और रोग निदान में एक प्रतिदीप्त पहचान लेबल के तौर पर संडरसायनिन की भूमिका की पड़ताल करना चाहती हैं। इसमें संडरसायनिन जीन के कोडिंग क्षेत्रों की पहचान और अन्य जीवों की जीवित कोशिकाओं व ऊतकों में इसे रोपित करना शामिल होगा ताकि इनकी गतिविधियों पर रिअल-टाइम नज़र रखी जा सके।

निष्कर्ष

कुछ मछलियाँ क्यों पीली नहीं बल्कि नीली दिखती हैं, इस जिज्ञासु-चिंगारी के चलते वैज्ञानिक अनुसन्धान की एक लम्बी प्रक्रिया शुरू हुई। इस समूची प्रक्रिया में विभिन्न विषयों के अनेक वैज्ञानिक व कनाडा के 'ग्रेट लेक क्षेत्र' के मत्स्याखेट रसिक

शामिल हुए। इसके चलते एक नए प्रतिदीप्त प्रोटीन की 'संयोगी' खोज भी हुई। अब इस नए प्रतिदीप्त प्रोटीन का अध्ययन किया जा रहा है ताकि शोध व नैदानिकी में इसके उपयोग के द्वारा जीवन के अन्य रहस्यों की गुत्थी सुलझाने में इसकी सम्भावनाएँ उजागर हों। संयोग अकसर कठिन परिश्रम से प्रखर हुए मस्तिष्कों में घटता है – व्याख्या पेश करके आगे का रास्ता दिखाता है। क्या आज आपने कुछ ऐसा देखा जो सामान्य नहीं था? उसका पीछा करते हुए क्या आपने एक बड़ी पहेली के कुछ अंश खोजे?

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Fisherman with rod. URL: https://pixabay.com/en/fisherman-fishing-fishing-rod-man-1869288/. License: CC0.

नवोदिता जैन एक प्रशिक्षित कोशिका जीवविज्ञानी हैं। उनकी रुचि नवीनतम चिकित्सा में है और विज्ञान-लेखन के प्रति उनका रुझान है। वे 'इंडियाबायोसाइंस' से विज्ञान शिक्षा समन्वयक के बतौर जुड़ी हैं। नवोदिता से navodita@indiabioscience.org या navod12@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है

स्वागता घोष गोटेनबर्ग विश्वविद्यालय में एक विज़िटिंग रिसर्चर हैं। उनकी रुचि भारत की स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने और उच्च शिक्षा को बढ़ावा देने में है। उनसे swagathag.gu@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

अदृश्य ऊर्जा का रहस्य

अमिताभ मुखर्जी

हमें यह बताया जाता है कि हम जिस ब्रह्माण्ड में रहते हैं वह डार्क एनर्जी (अदृश्य ऊर्जा) नामक एक रहस्यमयी वस्तु से भरा हुआ है। इस लेख में हम यह समझाने की कोशिश कर रहे हैं कि अदृश्य ऊर्जा से वैज्ञानिकों का आशय भला क्या है और हमें इसके होने का पता कैसे चलता है?

यह 1920 की बात है। यूएसए की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी (नेशनल एकेडमी ऑफ़ साइंसेस) की एक बैठक में उस ज़माने के प्रमुख खगोलविद 'ब्रह्माण्ड के पैमाने' पर बहस कर रहे थे। उनके तर्क ग्रेट एंड्रोमेडा नेब्युला (लातिनी में नेब्युला ~ नन्हा बादल) जैसे बादल-सदृश पिण्डों पर केन्द्रित थे। इसे M31 के नाम से भी जाना जाता है (**देखें चित्र-1क**)। एक विचारधारा के मुताबिक़, नेब्युला महज़ आकाशगंगा में भीतर के गैस व धूल के बादल थे। जबकि दूसरी विचारधारा, अंशतः ही इस तर्क का समर्थन करती थी – निश्चय ही, आकाशगंगा में कुछ गैसीय बादल तो थे। लेकिन उनकी दलील यह थी कि अनेक नेब्यूला तारों के समूह हैं जो इतनी दूर हैं कि वे हमारी मन्दाकिनी (आकाशगंगा) में नहीं हो सकते।

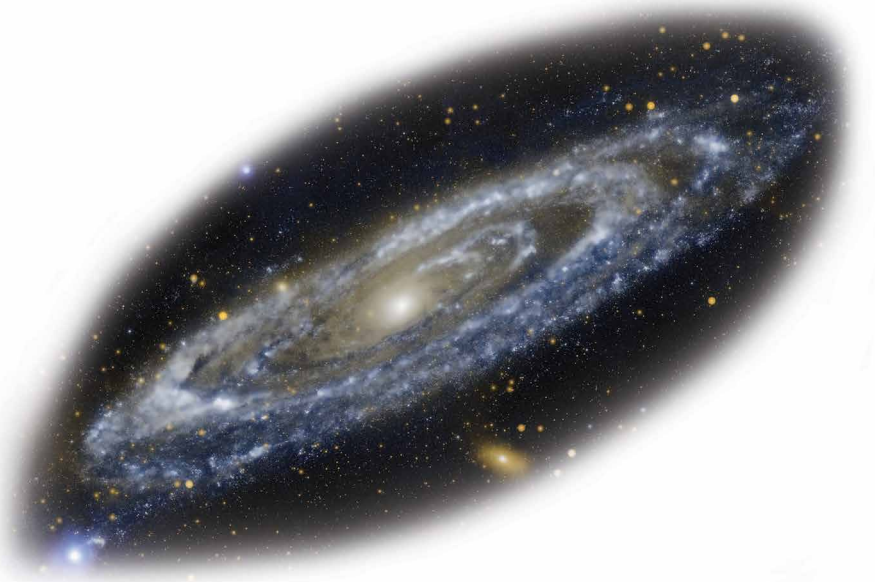

चित्र-1क : देवयानी (एंड्रोमेडा) मन्दाकिनी : आधुनिक तस्वीर
Credits: NASA/JPL-Caltech, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Andromeda_galaxy_2.jpg. License: CC-BY.

चित्र-1ख : इमैनुएल कांट

Credits: A photograph (http://www.philosovieth.de/kant-bilder/bilddaten.html) of a painting by Johann Gottlieb Becker uploaded by Daube aus Böblingen, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Kant_gemaelde_3.jpg. License: CC-BY.

यह बाद वाला ख़्याल कोई नया विचार नहीं था। 1775 में ही दार्शनिक इमेन्यूअल कांट (**चित्र-1ख**) ने अटकल लगाई थी कि नेब्यूला जिन्हें उन्होंने 'द्वीपीय ब्रह्माण्ड' कहा था, 'दूरस्थ' पिण्ड थे। 1925 आते-आते, विस्तृत अवलोकनों, ख़ासकर अमरीकी खगोलविद एडविन हबल द्वारा किए गए अवलोकनों ने इस बहस का पटाक्षेप कर दिया। हबल ने कैलिफोर्निया की माउंट विल्सन वेधशाला में हूकर टेलीस्कोप का इस्तेमाल करते हुए M31 के तारों को सफलतापूर्वक अलग-अलग करके देख लिया था (**देखें चित्र-2**)। जल्द ही, हबल और उनके साथियों ने इन तारों की दूरी के आकलन भी कर लिए। इन आकलनों से समझ आया कि न सिर्फ़ M31 इतनी दूर था कि हमारी आकाशगंगा में नहीं हो सकता था; बल्कि वह ख़ुद एक मन्दाकिनी थी, अरबों तारे समेटे। इससे यह सिद्ध हुआ कि ब्रह्माण्ड उससे भी कहीं ज़्यादा बड़ा था जितना कि पहले सोचा गया था। सो कोई अचरज नहीं कि M31 ऐसी वर्णक्रम रेखाएँ दर्शाती है जो तारों में विद्यमान विभिन्न रासायनिक तत्वों से मेल खाती हैं।

ब्रह्माण्ड फैल रहा है

1916-1919 के दौरान पता चला कि एक ओर जहाँ एंड्रोमेडा (देवयानी) जैसे कुछ नेब्यूला अपनी वर्णक्रम रेखाओं में नीला विस्थापन (ब्लू शिफ्ट) दर्शाती हैं, वहीं अधिकांश नेब्यूला की वर्णक्रम रेखाओं में लाल विस्थापन (रेड शिफ्ट) दिखता है। अधिकांश दूरस्थ मन्दाकिनियों के मामले में यह बात ख़ासतौर पर सही पाई गई। डॉपलर प्रभाव (**देखें बॉक्स-1**) के चलते हम इस

चित्र-2 क : एडविन हबल

Credits: Johan Hagemeyer, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Studio_portrait_photograph_of_Edwin_Powell_Hubble.JPG. License: CC-BY.

चित्र-2 ख : कैलिफोर्निया की लॉस एंजिल्स काउंटी स्थित माउंट विल्सन वेधशाला का 100 इंची हूकर टेलीस्कोप।

Credits: Ken Spencer, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:100_inch_Hooker_Telescope_900_px.jpg. License: CC-BY-SA.

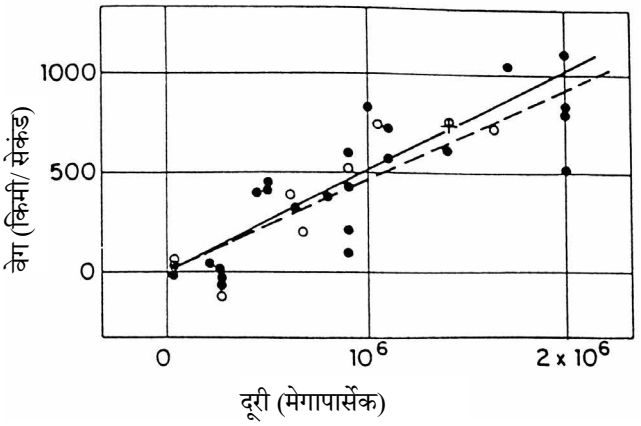

चित्र-3 : हबल का ग्राफ़
Credits: Edwin Hubble, Proceedings of the National Academy of Sciences, vol. 15 no. 3, pp.168-173. URL: http://www.pnas.org/content/pnas/94/13/6579/F3.large.jpg. License: Copyright PNAS.

वर्णक्रम-विस्थापन का नाता पिण्ड की गतिशीलता से जोड़ पाते हैं और इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अधिकांश मन्दाकिनियाँ हमसे दूर भाग रही हैं।

1920 के दशक के उत्तरार्ध में, हबल और उनके सहयोगियों ने उस समय ज्ञात अधिकांश मन्दाकिनियों के लाल विस्थापन की गणना कर ली थी। उनकी खोज थी कि जो मन्दाकिनियाँ हमसे ज़्यादा दूर थीं, उनमें लाल विस्थापन ज़्यादा था यानी वे ज़्यादा तेज़तर गतियों से हमसे दूर जा रही थीं। 1929 में हबल के प्रथम वैज्ञानिक शोधपत्र के मुताबिक़ किसी मन्दाकिनी के इस दूरगमन की गति हमसे उस मन्दाकिनी की दूरी के समानुपाती होती है (**देखें चित्र-3**)। आज इसे 'हबल का नियम' कहते हैं (**देखें बॉक्स-2**)।

और आँकड़े उपलब्ध होने के साथ, 1930 के दशक में हबल के नियम की पुष्टि हो गई। दरअसल आज किसी मन्दाकिनी का लाल विस्थापन उसकी दूरी का एक मापक माना जाता है। लेकिन हबल और उनके सहयोगी इस तथ्य का कोई कारण नहीं समझा सके।

आज हम इस प्राचीन धारणा को नहीं मानते कि हम मनुष्य कोई विशेषाधिकार प्राप्त प्रजाति हैं और ब्रह्माण्ड के केन्द्र में बसे हैं। हम यह मानते हैं कि हमारी आकाशगंगा

बॉक्स-1 : डॉपलर प्रभाव और मन्दाकिनियों के लाल विस्थापन

आपने कभी अपनी तरफ़ आती किसी मोटरसाइकिल की आवाज़ के तारत्व (पिच) में आते उस बदलाव पर कान दिया होगा जो मोटरसाइकिल के आपके पास से गुज़रते वक़्त होता है। तारत्व में यह बदलाव तब होता है जब तरंग (ध्वनि) पैदा करने वाला स्रोत (मोटरसाइकिल) हमारी ओर आता है या हमसे दूर जाता है। यही डॉपलर प्रभाव कहलाता है।

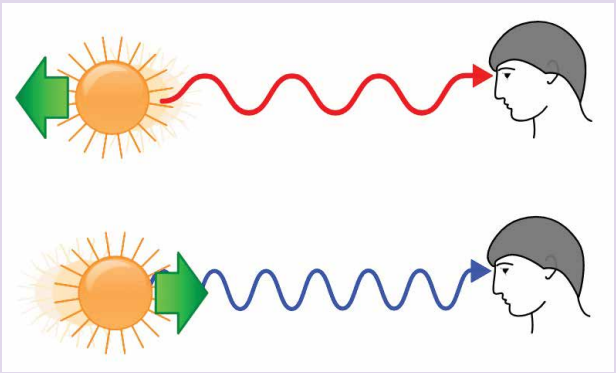

चित्र-4 : डॉपलर प्रभाव के द्वारा प्रकाश का लाल विस्थापन व नीला विस्थापन।
Credits: Aleš Tošovský, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Redshift_blueshift.svg. License: CC-BY-SA.

ब्रह्माण्ड में मौजूद अन्य प्रकाशमान पिण्डों की तरह, मन्दाकिनियाँ भी विद्युत-चुम्बकीय (गामा किरणें, एक्स-रे, पराबैंगनी, दृश्यमान प्रकाश, अवरक्त) तरंगें उत्सर्जित करती हैं। इनमें विभिन्न रासायनिक तत्वों के वर्णक्रम की रेखाएँ होती हैं। इसमें से कुछ प्रकाश धरती तक पहुँचता है। मोटरसाइकिल की तरह ही, डॉपलर प्रभाव के चलते हम अपने सापेक्ष मन्दाकिनियों की गति का अध्ययन कर पाते हैं। अगर कोई मन्दाकिनी हमारी तरफ़ आ रही है तो उसकी वर्णक्रम रेखाएँ छोटी तरंग लम्बाइयों (नीले) की ओर खिसकेंगी और जब मन्दाकिनी हमसे दूर जा रही होगी तो उसकी ये रेखाएँ लम्बी तरंग लम्बाइयों (लाल) की ओर सरकेंगी (**देखें चित्र-4**)।

बॉक्स-2 : हबल का नियम

देखा जाए तो आज हम जिसे हबल के नियम के नाम से जानते हैं, शायद उसे लेमैत्रे-हबल नियम कहना ज़्यादा उपयुक्त होता। जॉर्ज लेमैत्रे एक बेल्जियन पादरी और भौतिकशास्त्री थे जिन्होंने यह नियम हबल से दो साल पहले 1927 में ही प्रकाशित कर दिया था (**चित्र-5**)।

चित्र-5 : जॉर्ज लेमैत्रे
Credits: Adapted from Orion Blog, ESA. URL: http://blogs.esa.int/orion/2014/03/20/over-13-billion-years-after-the-big-bang-georges-lemaitre-heads-to-space/.

देखा जाए तो, लेमैत्रे ने न केवल यह भविष्यवाणी की थी कि ब्रह्माण्ड फैल रहा है बल्कि यह भी सुझाया था कि मन्दाकिनियों के लाल विस्थापनों की मदद से इस विस्तार की दर की गणना भी की जा सकती है। अब चूँकि ये परिणाम एक अल्प ज्ञात बेल्जियन जर्नल में छपे थे सो कुछ सालों बाद ही ये सबकी नज़रों में आ पाए।

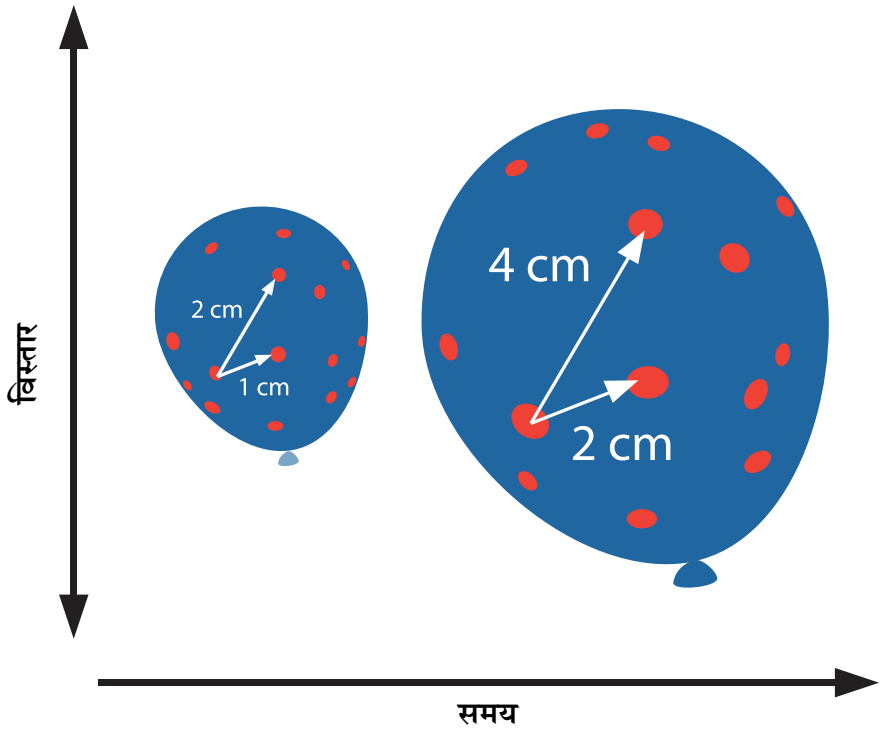

चित्र-6 : किसी फूलते गुब्बारे की सतह पर बने चित्र अपने बीच की दूरी की समानुपाती दर से एक-दूसरे से दूर जाते हैं।

Credits: Adapted from an illustration by Yuen Pui-ho (translation by Wong Ka-lei) on Hong-Kong Physics World. URL: http://www.hk-phy.org/articles/univexpand/univexpand_e.html.

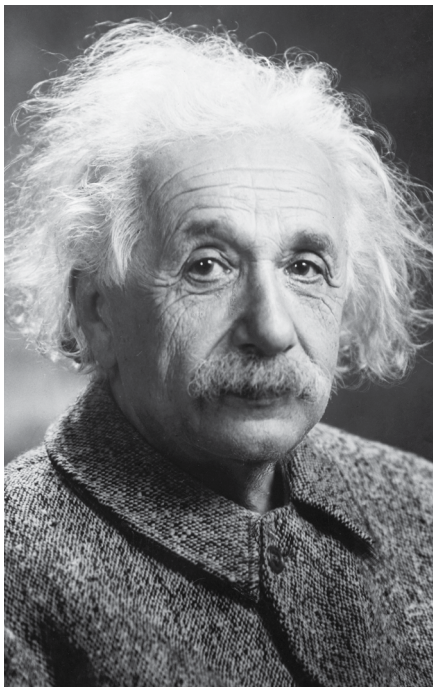

चित्र-7 : अल्बर्ट आइंस्टाइन

Credits: Photograph by Orren Jack Turner, Princeton, N.J.; modified with Photoshop by PM_Poon and later by Dantadd; uploaded on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Albert_Einstein_Head.jpg. License: Public Domain.

समूचे ब्रह्माण्ड की खरबों मन्दाकिनियों में से महज़ एक है। हम यह भी मानते हैं कि समूचा ब्रह्माण्ड सभी प्रेक्षकों को एक-जैसा दिखता है – फिर चाहे वे कहीं भी स्थित हों। यह गूढ़ दार्शनिक कथन 'ब्रह्माण्डीय सिद्धान्त' (कॉस्मॉजिकल प्रिंसिपल) कहलाता है। दूसरे शब्दों में, 'हबल के नियम' के अनुसार किसी अन्य मन्दाकिनी के बुद्धिमान प्राणी भी अन्य मन्दाकिनियों को अपने से दूर जाता हुआ देखेंगे। यानी, ब्रह्माण्ड की तमाम मन्दाकिनियाँ एक-दूसरे से दूर होती जा रही हैं और उनके इस दूर होने की गतियाँ उनकी परस्पर दूरियों के अनुपात में होती हैं। एक उपमा का सहारा लें तो एक ऐसे गुब्बारे की कल्पना करें जिस पर कुछ चित्र बने हों। जैसे ही हम इस गुब्बारे में हवा फूँकते हैं, यह फूलता है और उस पर बना हर चित्र बाक़ी सबसे दूर होता जाता है (**देखें चित्र-6**)। हालाँकि तकनीकी लिहाज़ से यह तुलना पूरी तरह ठीक नहीं है, लेकिन इससे हमें हबल के नियम के भौतिक अर्थ की कल्पना

बॉक्स-3 : सापेक्षता का सामान्य सिद्धान्त

1905 में आइंस्टाइन ने सापेक्षता का (विशेष) सिद्धान्त प्रस्तुत किया था। यह इस सोच पर आधारित था कि भौतिकशास्त्र के नियम सभी निश्चल (ग़ैर-त्वरणशील) प्रेक्षकों के लिए समान हैं और निर्वात में प्रकाश की गति एक-समान होती है; फिर स्रोत या प्रेक्षक की गति चाहे जो हो।

इसके चलते, दिक्-काल (स्पेस-टाइम) की अवधारणा बनी जिसमें दिक् व काल परस्पर जुड़ते थे।

आगे चलकर, त्वरणशील प्रेक्षकों के मद्देनज़र, उन्होंने अपने इस सिद्धान्त का सामान्यीकरण किया। उन्होंने कहा कि गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव प्रेक्षक के त्वरण के तुल्य होता है और विशालकाय पिण्ड दिक्-काल को विकृत कर देते हैं। दूसरे शब्दों में, गुरुत्वाकर्षण महज़ विकृत दिक्-काल का एक प्रभाव है। 1915 में, आइंस्टाइन अपने इन विचारों को एक गणितीय रूप दे सके। सामान्य सापेक्षता के समीकरण दिक्-काल की वक्रता का सम्बन्ध उसमें उपस्थित पदार्थ (की मात्रा) से जोड़ते हैं। इसे 'मौजूद तमाम भौतिक सिद्धान्तों में सम्भवतः सबसे ख़ूबसूरत सिद्धान्त' कहा गया है।

सामान्य सापेक्षता का पहला प्रेक्षणी परीक्षण 1919 में हुआ जब एक पूर्ण सूर्यग्रहण के दौरान एक विशालकाय पिण्ड के चलते प्रकाश का मुड़ना देखा गया। तब से, सामान्य सापेक्षता अनेक खगोल-भौतिकीय परिस्थितियों में परखा जा चुका है। सबसे हालिया है, सामान्य सापेक्षता सिद्धान्त के शताब्दी वर्ष, 2015, में गुरुत्व तरंगों की खोज।

बॉक्स-4 : सुपरनोवा

जब-तब हमारी गैलेक्सी का कोई तारा भभक सकता है और भभककर पहले से ज़्यादा चमकदार होकर कई दिनों तक उतना चमकदार बना रह सकता है। इस तरह बना 'नया' तारा नोवा कहलाता है। 1885 में, एंड्रोमेडा मन्दाकिनी में एक नोवा-सरीखी घटना देखी गई थी। एकबारगी जब यह स्पष्ट हो गया कि यह मन्दाकिनी हमसे बहुत दूर है, तब यह समझ में आया कि यह घटना तो एक सामान्य नोवा की तुलना में कहीं बहुत ज़्यादा चमकदार थी। सो, इसका विवरण देने के लिए एक नया शब्द 'सुपरनोवा' गढ़ा गया। यूँ तो सुपरनोवाओं की बहुतेरी क़िस्में हैं, परन्तु एक क़िस्म (टाइप 1ए सुपरनोवा) ब्रह्माण्ड विज्ञान में ख़ास महत्त्व रखती है। यह क़िस्म तभी बनती है जब कोई श्वेत बौना तारा किसी दूसरे तारे में जा मिलता है। इसके नतीजतन, एक बहुत तेज़ प्रतिक्रिया होती है जिसमें वह श्वेत बौना तारा छिन्न-भिन्न हो जाता है (**चित्र-8**)। चूँकि जो अधिकतम चमक ये घटनाएँ अर्जित करती हैं वह उल्लेखनीय रूप से नियत रहती है (सूर्य से कोई 5 अरब गुना चमकदार), उनकी अवलोकित दीप्ति उनकी हमसे दूरी की गणना करने में हमारी मदद करती है।

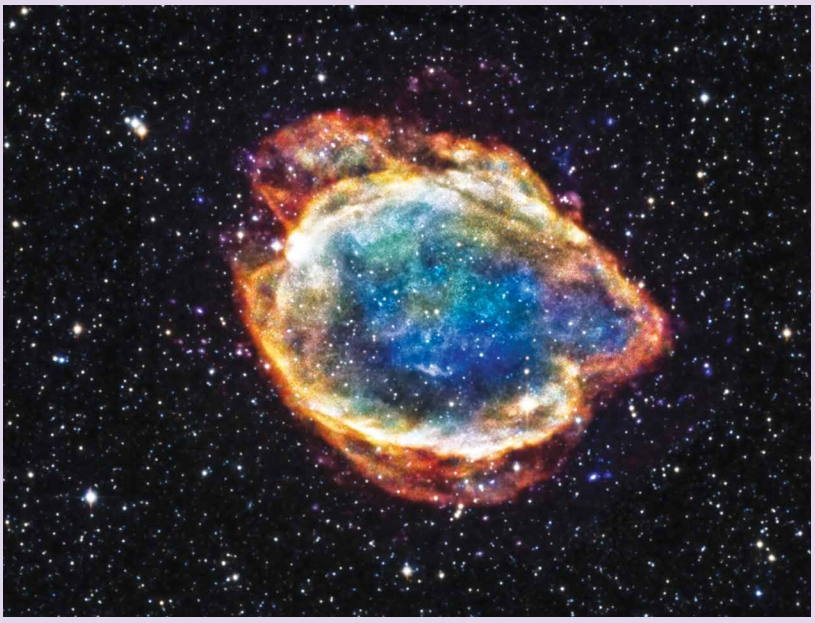

चित्र-8 : एक टाइप 1ए सुपरनोवा का अवशेष।
Credits: NASA/CXC/U.Texas (https://www.nasa.gov/sites/default/files/thumbnails/image/g299.jpg), Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:G299-Remnants-SuperNova-Type1a-20150218.jpg. License: CC-BY.

करने में मदद मिलती है – समूचा ब्रह्माण्ड फैल रहा है।

हबल के नियम का सैद्धान्तिक आधार एक जर्मन सैद्धान्तिक भौतिकशास्त्री, अल्बर्ट आइंस्टाइन के काम से मिला (**देखें चित्र-7**)। ब्रह्माण्ड की संरचना (**सन्दर्भ बॉक्स-3**) का गणितीय मॉडल पाने के लिए 1917 में आइंस्टाइन ने सापेक्षता के अपने सामान्य सिद्धान्त के समीकरण हल कर दिए थे। मूल सिद्धान्त के द्वारा ऐसे हल मिले थे जो संकेत देते थे कि ब्रह्माण्ड की हर चीज़ समय के साथ बदली है। इससे आशय यह निकलता था कि ब्रह्माण्ड या तो फैल रहा है या सिकुड़ रहा है, लेकिन उस समय इन दोनों परिघटनाओं का कोई प्रेक्षणीय साक्ष्य नहीं था। नतीजतन, आइंस्टाइन को अपने समीकरणों में एक नया स्थिरांक (ब्रह्माण्डीय स्थिरांक) जोड़ना पड़ा – जिसका प्रभाव यह

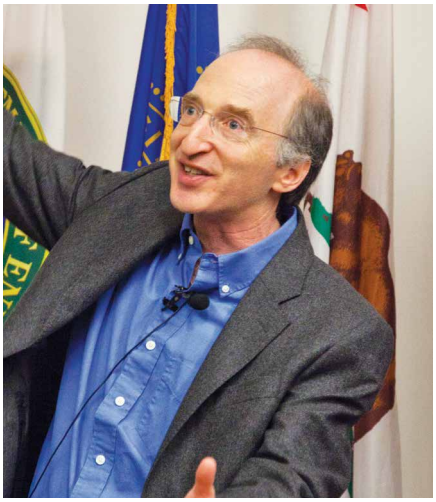

चित्र-9 क : सॉल पर्लमटर
Credits: Berkeley Lab. URL: https://www.flickr.com/photos/berkeleylab/6211910121/. License: CC-BY-NC-ND.

चित्र-9 ख : ब्रायन श्मिट
Credits: Markus Pössel (User name: Mapos), Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Brian_Schmidt.jpg. License: CC-BY-SA.

चित्र-9 ग : ऍडम रीस
Credits: Adam.riess, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Agr_cover.png. License: CC-BY-SA.

पड़ा कि ब्रह्माण्ड अचल हो गया। कालान्तर में, यह पर्चा इतना प्रतिष्ठित हो गया कि माना जाता है कि इसके चलते समग्र ब्रह्माण्ड का अध्ययन करने वाले आधुनिक ब्रह्माण्ड विज्ञान की नींव पड़ी। लेकिन सालों बाद जब आइंस्टाइन ने हबल के लाल विस्थापनों के बारे में सुना तो उन्होंने इसे एक फैलते ब्रह्माण्ड के विचार का एक साक्ष्य माना। इसलिए उन्होंने अपने द्वारा प्रस्तावित ब्रह्माण्डीय स्थिरांक को अपने जीवन की 'सबसे बड़ी चूक' बताया था।

फैलाव तेज़ होता जा रहा है

भौतिक हिसाब से, हबल के ग्राफ़ का एक सीधी रेखा होना दर्शाता है कि समय के साथ ब्रह्माण्ड के फैलाव की गति स्थिर रहती है। लेकिन, 1930 के दशक में यह समझ आया कि किसी मन्दाकिनी की दूरी और उसके दूर जाने की गति का परस्पर रिश्ता इससे भी कहीं ज़्यादा जटिल हो सकता है। सो, ग्राफ़ का 'वास्तविक' आकार, ब्रह्माण्ड के गणितीय मॉडल पर निर्भर करेगा।

ब्रह्माण्ड के अधिकांश मॉडलों में फैलने की दर समय के साथ कमतर होती जाती है क्योंकि गुरुत्वाकर्षण बल तमाम पदार्थ को पास-पास लाता है। यहाँ तक कि ब्रह्माण्ड-विज्ञानियों ने गति में इस गिरावट को नापने के हिसाब से एक मन्दन मानक भी परिभाषित कर दिया। लेकिन, अगले कोई पचास सालों तक किए गए अवलोकन इस मन्दन-मानक का मान निर्धारित करने में विफल रहे। क्या यह शून्य था – जिसका मतलब होगा कि हबल ग्राफ़ सटीक सरल रेखा होगी? क्या यह धनात्मक था जैसा कि अधिकांश सैद्धान्तिक तर्कों से लगता है? या फिर, शायद यह एक ऋणात्मक संख्या हो? सालों तक, इस क्षेत्र में आने वाले विद्यार्थियों को कहा जाता रहा कि अवलोकन इन तीनों सम्भावनाओं के अनुकूल हैं।

साल 1998 में एक उल्लेखनीय सफलता मिली। सुपरनोवा **(देखें बॉक्स-4)** कहलाने वाले विस्फोटशील तारों पर स्वतंत्र रूप से काम करने वाले दो समूह एक आश्चर्यजनक निष्कर्ष पर पहुँचे – मन्दन मानक एक ऋणात्मक संख्या लगता है। उनके अवलोकनों में ऊँचे लाल विस्थापन वाले सुपरनोवाओं की दूरियाँ अपेक्षा से 10-15% ज़्यादा थीं। यह सम्भव है यदि आज के मुक़ाबले, अतीत में ब्रह्माण्ड अपेक्षाकृत धीमी गति से फैला हो। ऐसे में चूँकि प्रकाश को हम तक पहुँचने के लिए ज़्यादा लम्बी दूरी तय करना पड़ेगी, सुपरनोवा हमें अपेक्षाकृत धुँधले नज़र आएँगे। दूसरे शब्दों में, अपेक्षा के विपरीत, लगता है कि ब्रह्माण्ड के फैलने की गति बढ़ती जा रही है।

बॉक्स-5 : निर्वात ऊर्जा का ऋणात्मक दबाव

गैस से भरे एक ऐसे सिलेंडर की कल्पना करें जिसमें एक सरकता पिस्टन लगा है। गैस को दबाने लिए हमें पिस्टन को अन्दर को धकेलना होगा। हमारे द्वारा लगाई गई ऊर्जा का परिमाण गैस के दाब p X उसके आयतन में हुए बदलाव के बराबर होगा। अब इसी सिलेंडर की कल्पना करें जिसमें निर्वात है, जिसकी ऊर्जा का स्थिर घनत्व ρ है। जब हम पिस्टन को अन्दर की ओर दबाते हैं तो कुल ऊर्जा के परिमाण में होने वाली कमी आयतन में बदलाव X ρ जितनी होती है। अगर हम निर्वात का दबाव ऋणात्मक यानी $p = -\rho$ मानें तो ये दो समीकरण परस्पर तुल्य हैं।

तीन दशकों में ब्रह्माण्ड विज्ञान के क्षेत्र में यह सबसे बड़ी खोज थी। इस सन्दर्भ में उनके योगदान के लिए अमरीकी खगोल विज्ञानियों सॉल पर्लमटर, ब्रायन श्मिट और ऍडम रीस को संयुक्त रूप से 2011 में भौतिकी का नोबेल पुरस्कार दिया गया (**देखें चित्र-9**)। उस समय तक अनेक अवलोकनों से, जो सुपरनोवाओं से सम्बन्धित नहीं थे, ब्रह्माण्ड के तेज़ होते विस्तार की पुष्टि हो चुकी थी।

त्वरित विस्तार की गुत्थी

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, किसी भी क़िस्म के पदार्थ द्वारा ब्रह्माण्ड के विस्तार की दर को कमतर करने की अपेक्षा रहती है। सो, विस्तार की गति के त्वरित होने का आभास देने वाले अवलोकन उलझाने वाले हैं – आख़िर सामान्य पदार्थ एवं विकिरण से भरे ब्रह्माण्ड में यह परिघटना कैसे सम्भव है? यहाँ तक कि बड़ी मात्रा में अदृश्य पदार्थ की उपस्थिति (देखें 'डार्क मैटर पर प्रकाश', आई वंडर..., फरवरी 2017 https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/3534/) भी इस घटना की व्याख्या में मददगार नहीं होती।

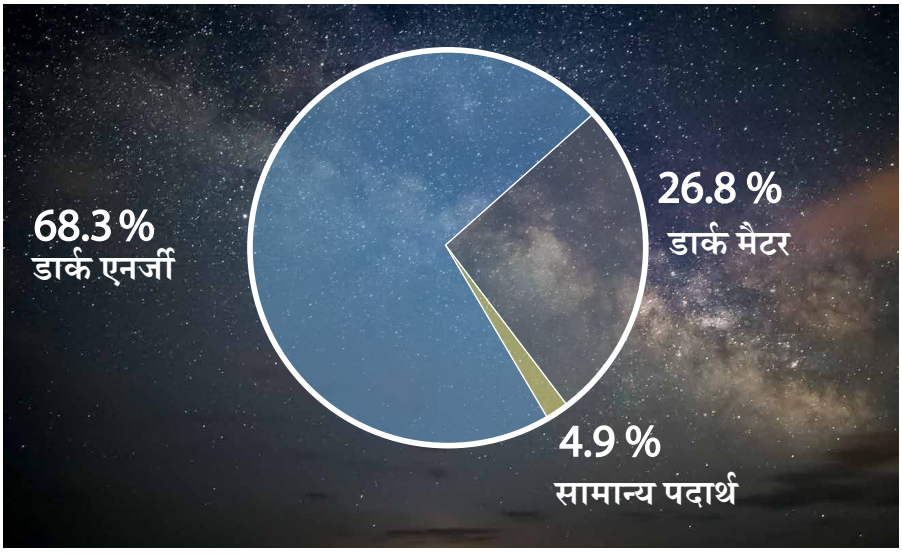

चित्र-10 : प्लैंक प्रोब मापन के अनुसार ब्रह्माण्ड में ऊर्जा का वितरण, मार्च 2013।

Credits: Adapted from an image by Szczureq, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:DMPie_2013.svg. License: CC-BY-SA.

सिद्धान्तकारों ने परिकल्पना विकसित की कि यह तेज़ होता प्रसार, ऊर्जा के किसी तब तक अज्ञात रूप की उस मौजूदगी की वजह से होता है, जो मन्दाकिनियों को दूर धकेलती है। अदृश्य पदार्थ (डार्क मैटर – डीएम) की तरह ऊर्जा के उस 'रहस्यमयी' रूप के लिए 'अदृश्य ऊर्जा' (डार्क एनर्जी – डीई) का शब्द गढ़ा गया। देखा जाए तो यह एक भ्रामक नाम है। डीएम और डीई के बीच बस एक ही चीज़ समान है, वह है कि इन दोनों को ही दूरदर्शी के द्वारा देखा नहीं जा सकता। गुरुत्व बल के प्रभाव में अदृश्य पदार्थ साधारण पदार्थ की तरह ही काम करता है – यह साथ आकर ब्रह्माण्ड के फैलने की गति को धीमा करता है। जबकि इसके उलट, अदृश्य ऊर्जा तो बस उस चीज़ का एक संक्षिप्त नाम है जो 'ब्रह्माण्ड के विस्तार की गति को बढ़ा रही है।' इससे कोई व्याख्या तो नहीं होती।

अदृश्य ऊर्जा की प्रकृति पिछले बीस सालों से अटकलों का विषय रही है। इस 'समस्या' के प्रति एक दृष्टिकोण यह तो मानता है कि आइंस्टाइन का सापेक्षता का सामान्य सिद्धान्त सही है, लेकिन यह भी मानता है कि ब्रह्माण्ड में ऐसी कोई चीज़ व्याप्त है जो पदार्थ की भाँति व्यवहार नहीं करती। इस समूह में फिट बैठने वाले मॉडल्स, जिन्हें सामूहिक रूप से डीई मॉडल्स कहते हैं, में इस समय सबसे प्रचलित मॉडल ब्रह्माण्डीय स्थिरांक सम्बन्धी आइंस्टाइन के सिद्धान्त पर आधारित है। इस मॉडल के मुताबिक़ यह कल्पना की जा सकती है कि पूरे ब्रह्माण्ड के रिक्त स्थान की पूर्ति अदृश्य ऊर्जा के द्वारा होती है। इसलिए इसे निर्वात ऊर्जा कहते हैं जिसका घनत्व, दिक् और काल के हिसाब से बदलता नहीं है। ऊष्मागतिकी के आधार पर यह देखना आसान है कि अगर एक ख़ाली स्थान या निर्वात में ऊर्जा है तो निश्चित ही उस जगह का दबाव ऋणात्मक होगा (**देखें बॉक्स-5**)। सो अगर ब्रह्माण्ड का थोड़ा भी विस्तार हुआ तो ख़ाली स्थान भी फैलेगा। नतीजतन, अदृश्य ऊर्जा की मात्रा बढ़ेगी, जिसके चलते और फैलाव होगा। सुनने में अजीब लगता है लेकिन यह ब्रह्माण्ड के तेज़ होते विस्तार की सरलतम व्याख्या करता है (**देखें चित्र-10**)। अन्य डीई मॉडल्स, जिनमें अदृश्य ऊर्जा का नाम 'क्विंटएसेंस' या 'फैंटम' होता है, की कल्पना निर्वात ऊर्जा के गतिशील मॉडलों के बतौर की जा सकती है। वैसे तो हम यहाँ पर इन मॉडलों के वर्णन में नहीं जाएँगे, लेकिन इन सिद्धान्तविदों के अनुसार अदृश्य ऊर्जा का घनत्व स्थिर नहीं है बल्कि दिक् व काल के हिसाब से बदलता है।

इसका दूसरा दृष्टिकोण इस सम्भावना पर आधारित है कि गुरुत्व का वर्णन करने वाला आइंस्टाइन का सामान्य सापेक्षता सिद्धान्त अधूरा भी हो सकता है। तेज़ होते ब्रह्माण्ड विस्तार का कोई वैकल्पिक विवरण हो सकता है जो अदृश्य ऊर्जा के अस्तित्व को सिरे से ख़ारिज कर दे। और अगर यह सही निकले तो हमें इस महत्त्वपूर्ण सवाल पर विचार करना होगा – क्या ऐसा वैकल्पिक मॉडल अवलोकन सम्बन्धी उन तमाम परीक्षणों पर भी खरा उतरेगा जिन्हें आइंस्टाइन का सिद्धान्त सन्तुष्ट करता है? वैसे तो गुरुत्वाकर्षण को लेकर अनेक वैकल्पिक सिद्धान्त हैं, पर अब तक तो इनमें से एक भी पर्याप्त विश्वसनीय नहीं लगता।

ऐसे में सहज ही यह सवाल उठता है – ब्रह्माण्ड की ख़ाली जगह में ऐसी कितनी ऊर्जा होनी चाहिए कि वह उसके तेज़ होते विस्तार की व्याख्या कर सके? प्लैंक उपग्रह से मिले आँकड़े बताते हैं कि ब्रह्माण्ड की कुल ऊर्जा में 68 प्रतिशत से भी ज़्यादा का योगदान इस अदृश्य ऊर्जा का है। सामान्य पदार्थ – हम ख़ुद, पृथ्वी का अन्य जीवन, पृथ्वी, सौर मण्डल और मन्दाकिनियों के दृश्य हिस्सों में मौजूद सारे तारे – सब मिलकर 5% से भी कम है।

भविष्य में

हालाँकि ब्रह्माण्ड सम्बन्धी सारे अवलोकन ब्रह्माण्डीय स्थिरांक पर आधारित मॉडल की पुष्टि करते हैं, लेकिन पिक्चर अभी बाक़ी है दोस्त! मूलभूत कणों और उनके पारस्परिक बलों से जुड़ी हमारी समझ क्वान्टम फ़ील्ड थ्योरी नामक ढाँचे पर आधारित है। इस ढाँचे का उपयोग करके यह गणना की गई है कि इस ख़ाली जगह में कितनी ऊर्जा होनी चाहिए। इसका अनुमानित मान, त्वरणशील ब्रह्माण्डीय विस्तार सम्बन्धी अवलोकनों से निष्कर्षित ब्रह्माण्डीय स्थिरांक से कई गुना ज़्यादा ($\sim 10^{120}$) है। सो, वर्तमान चुनौती सिर्फ़ निर्वात ऊर्जा के अस्तित्व की व्याख्या ही नहीं बल्कि यह भी है कि इसका प्रेक्षित परिमाण इतना क्यों है। भविष्य के लिए यह एक रोमांचक विषय है जिसमें वर्तमान अवलोकनों को बेहतर बनाने और मौजूदा सिद्धान्तों का परिष्कार करने की असीम सम्भावनाएँ हैं।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Dark Energy Survey – distant galaxies by UCL Mathematical and Physical Sciences, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/uclmaps/14958324522. License: CC-BY.

अमिताभ मुखर्जी दिल्ली विश्वविद्यालय के भौतिकशास्त्र व खगोल-भौतिकी विभाग से प्रोफ़ेसर के पद से सेवा-निवृत्त हुए। उनसे amimukh@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

डॉप्लर प्रभाव को खोजना

रामगोपाल (रामजी) वल्लत

क्या हमारे पास से गुज़रती हुई एक मोटरसाइकिल की ध्वनि की पिच में होने वाले बदलाव और हमसे दूर जाते समय दूरस्थ सितारों द्वारा उत्सर्जित प्रकाश के बीच कुछ समानता हो सकती है? हाँ! यह दोनों ही डॉप्लर प्रभाव पर निर्भर होते हैं।

ध्वनि तब संचरण करती है जब उसका स्रोत अपने आस-पास के माध्यम में दाब तरंगें उत्पन्न करता है। यह तरंगें स्रोत से बाहर की ओर उच्च और निम्न दाब के विभिन्न क्षेत्रों– जिन्हें **सम्पीड़न (compression)** और **विरलन (rarefaction)** कहा जाता है –के बारी-बारी से दोहराए जाने वाले पैटर्नों में चलती हैं। दो क्रमागत संपीड़न या विरलन के शिखरों के बीच की दूरी को तरंग की **तरंगदैर्ध्य** कहा जाता है। किसी बिन्दु से एक सेकंड में गुज़रने वाले संपीड़न या विरलन शिखरों की संख्या को उसकी **आवृत्ति** कहा जाता है।

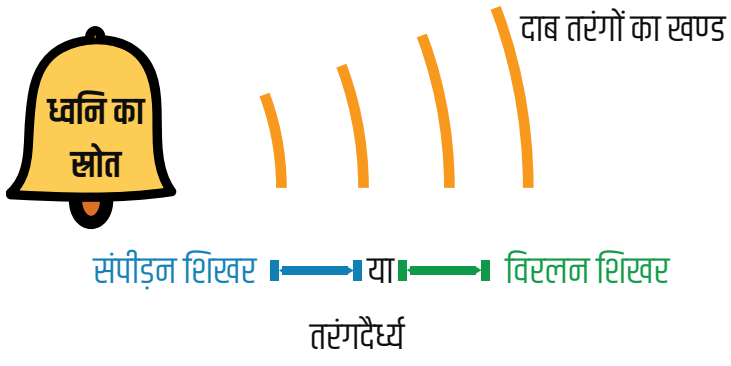

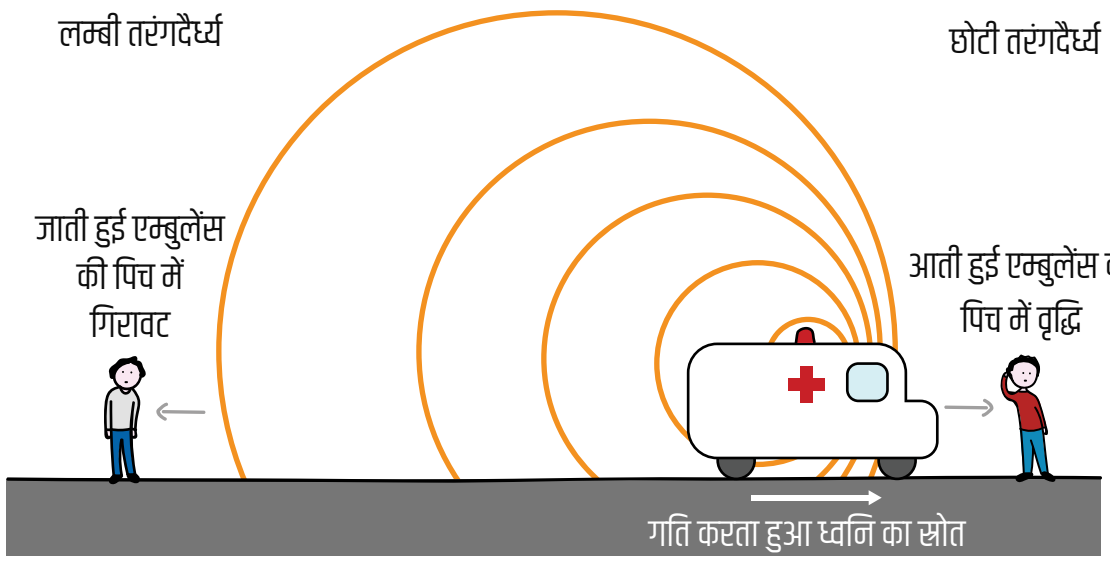

जब ध्वनि का स्रोत (जैसे कि एम्बुलेंस) किसी प्रेक्षक की ओर बढ़ता है, तो प्रत्येक क्रमागत सम्पीड़न या विरलन शिखर प्रेक्षक के और क़रीब होते जाते हैं। फलस्वरूप, तरंग सम्पीड़ित हो जाती है, जिससे इसकी आवृत्ति बढ़ जाती है और तरंगदैर्ध्य घट जाती है। यह प्रभाव तब भी देखा जाता है जब प्रेक्षक स्रोत की ओर बढ़ता है। इस स्थिति में प्रत्येक क्रमागत शिखर उसके कान के पर्दों से जल्दी-जल्दी टकराता है। इससे उलट, जब स्रोत प्रेक्षक से दूर जाता है या प्रेक्षक स्रोत से दूर जाता है, तो तरंग लम्बी हो जाती है और उसकी आवृत्ति घट जाती है।

जब कोई वाहन तेज़ी-से हमारी ओर आता है, हमारे पास से गुज़रता है, और हमसे दूर चला जाता है, तो उस वाहन की ध्वनि की पिच में अचानक से होने वाली गिरावट में इसे देखा जा सकता है। इस परिघटना को डॉप्लर प्रभाव कहा जाता है। इसका नाम भौतिक विज्ञानी क्रिश्चियन डॉप्लर के नाम पर रखा गया है। उन्होंने ही इसे सबसे पहले 1842 में प्रस्तावित किया था।

यदि हमें ध्वनि का वेग (हवा में स्थिर 343 मीटर/सेकंड), वह आवृत्ति जिससे ध्वनि उत्सर्जित हो रही है और प्रेक्षित आवृत्ति पता हो तो हम इस प्रभाव का उपयोग करके यह गणना कर सकते हैं कि स्रोत किस गति से प्रेक्षक की ओर आ रहा है या उससे दूर जा रहा है। वास्तव में, यही वह तरीक़ा है जो पुलिस को स्पीडगन का उपयोग करके यह निर्धारित करने में मदद करता है कि कोई वाहन तयशुदा गति सीमा से तेज़ चल रहा है या नहीं। इसके विपरीत, यदि हमें तरंग का वेग, ध्वनि के स्रोत का वेग और प्रेक्षक का वेग पता हो तो हम ध्वनि की प्रेक्षित आवृत्ति की गणना कर सकते हैं।

यह बात सभी विद्युतचुम्बकीय विकिरणों जैसे दृश्य प्रकाश, एक्स-रे, गामा किरणों, अवरक्त किरणों, पराबैंगनी किरणों और रेडियो तरंगों के लिए भी सही है। हम तारों द्वारा उत्सर्जित विकिरणों की विशिष्ट आवृत्तियों को जानते हैं। हम यह भी जानते हैं कि इनमें से कुछ आवृत्तियाँ तारों की बाहरी परतों में रासायनिक तत्वों द्वारा अवशोषित हो जाती हैं। यह अवशोषित आवृत्तियाँ तारों के विकिरण पैटर्न (जिसे **स्पेक्ट्रम** कहते हैं) में अन्तराल (जिसे **अवशोषित रेखाएँ** कहते हैं) के रूप में दिखाई देती हैं।

यदि हम किसी तारे के स्पेक्ट्रम की अवशोषित रेखाओं में उच्च आवृत्तियों की ओर विस्थापन, जिसे नीला विस्थापन **(blueshift)** कहा जाता है, देखते हैं तो यह संकेत देता है कि तारा हमारी ओर आ रहा है। इससे उलट, निम्न आवृत्तियों की ओर विस्थापन, जिसे **अभिरक्त विस्थापन (redshift)** कहा जाता है, यह इंगित करता है कि तारा हमसे दूर जा रहा है। इस विस्थापन की मात्रा से हमें उस गति की गणना करने में मदद मिलती है जिस गति से यह गतिविधि होती है।

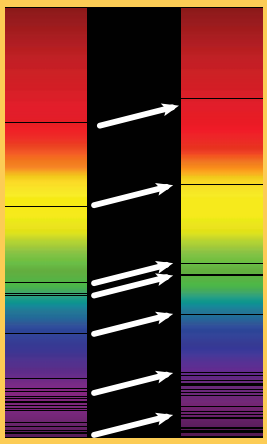

सूर्य के प्रकाशीय स्पेक्ट्रम (बाईं ओर) की तुलना में, दूरस्थ आकाशगंगाओं (BAS11) (दाईं ओर) के एक सुपरक्लस्टर के प्रकाशीय स्पेक्ट्रम में अवशोषित रेखाएँ। तीर अभिरक्त विस्थापन (redshift) को दर्शा रहे हैं।

रामगोपाल (रामजी) वल्लत एक प्रेरक वक्ता हैं। वह बच्चों की विज्ञान कथा की किताब *ऊप्स दि माइटी गर्गल* के बेस्टसेलिंग लेखक भी हैं। वह स्कूलों में प्रेरक बातचीत करते हैं और विज्ञान कार्यशालाएँ भी आयोजित करते हैं। उनसे ramgopal.vallath@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** कविता तिवारी

Azim Premji University
i wonder...
Rediscovering school science

धरती पर (मानव) जीवन को ऊर्जा देना

राधा गोपालन

हमारी ऊर्जा-ज़रूरतें उस आबोहवा के लिए ख़तरा बन गई हैं जिसमें ज़िन्दगी न सिर्फ़ अब तक बनी रही है बल्कि फलती-फूलती भी आई है। ऊर्जा के स्रोत क्या-क्या हैं? और हम उसका इस्तेमाल कैसे करते हैं? क्या ऊर्जा को लेकर हम अपने विकल्प ऐसे चुन सकते हैं जिनके चलते जलवायु पर हमारा प्रभाव कम-से-कम हो? यह लेख इन्हीं सब सवालों को खँगालने की दिशा में एक क़दम है।

वैसे तो सारे जीवों का जीवन-आधार ऊर्जा है लेकिन हमारी ऊर्जा ज़रूरतों और उन्हें पूरा करने के तरीक़ों ने मानव-सभ्यता को आकार देने में एक महती भूमिका निभाई है। आग से पैदा हुई गर्मी के इस्तेमाल से शुरू करके हमने ऊर्जा के अन्य स्रोतों की एक सामूहिक समझ विकसित की और ऊर्जा के एक रूप को दूसरे रूप में बदलने के तरीक़े तथा हरेक के तमाम विशिष्ट उपयोग खोजे हैं। अपने इस ज्ञान के बूते हमने महज़ अपने बुनियादी गुज़र-बसर (भोजन, पानी, घर) से परे जाकर उस बन्द ऊर्जा की नकेल खोली है – गतिशीलता व परिवहन, स्वास्थ्य सेवाओं, मनोरंजन, संचार-व्यवस्था, अपशिष्ट-प्रबन्धन, अनुसन्धान आदि। इस प्रकार शिकारी और संग्रही समाज पहले तो कृषक समाज बना और फिर औद्योगिक समाज (**चित्र-1**)।

1750 की औद्योगिक क्रान्ति मानव-सभ्यता की दिशा और धरती के साथ हमारे रिश्ते के सन्दर्भ में एक निर्णायक मुक़ाम थी। हम एक ऐसी सभ्यता बन गए जिसकी ऊर्जा आवश्यकताएँ बहुत ज़्यादा थीं और कमोबेश जीवाश्म–ईंधनों पर टिकी थीं (**बॉक्स-1**)। तब से हमारे द्वारा प्रयुक्त हर ऊर्जा रूप ने पृथ्वी ग्रह को प्रभावित किया है – स्थानीय तौर पर ज़मीन साफ़ करने से लेकर निर्वनीकरण तक वायुमण्डलीय संरचना में आए विश्वव्यापी बदलाव। अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए जब हम जीवाश्म-ईंधन जलाते हैं तो कार्बन, सल्फ़र और नाइट्रोजन गैसीय रूप में वातावरण में जा घुलते हैं (**चित्र-2**)। इसलिए, रहन-सहन, खाद्य-उत्पादन और परिवहन में ऊर्जा-प्रबल शैली की ओर हर क़दम के चलते वायुमण्डल में उतनी ही तीव्रता से कार्बन डाईऑक्साइड, मीथेन, सल्फ़र और नाइट्रोजन के ऑक्साइडों का स्तर बढ़ता जाता है।

यह बढ़ोतरी धरती पर मौजूद जीवन को विविध प्रकार से प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए, बरसात के पानी में सल्फ़र और नाइट्रोजन के ऑक्साइडों में घुलने से अम्लीय वर्षा हो सकती है (**चित्र-3**)। कार्बन डाईऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड के कारण उत्पन्न हुए 'ग्रीनहाउस

चित्र-1 : हमारी ऊर्जा ज़रूरतों ने मानव सभ्यताओं के विकास को गढ़ा है।

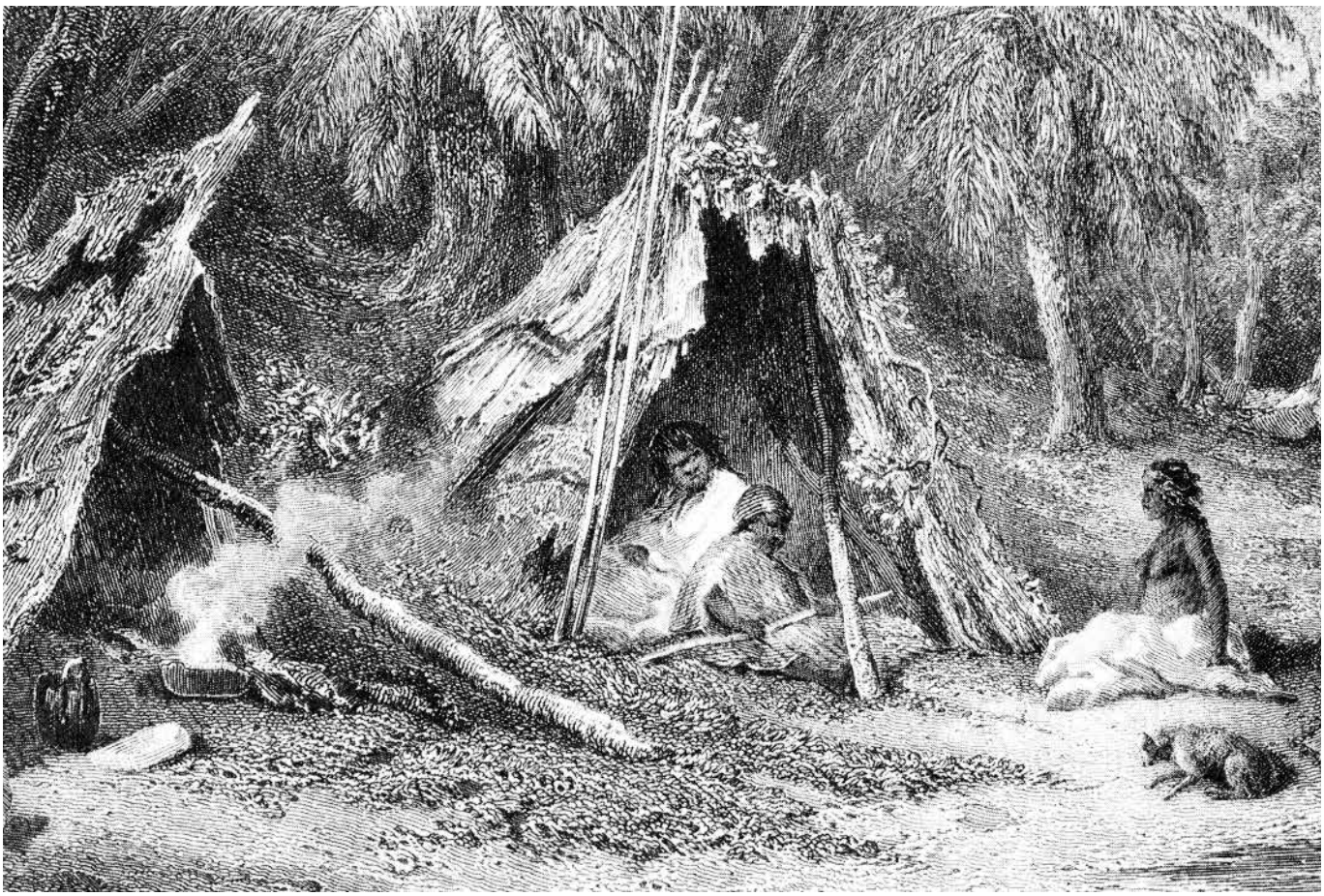

(क) शिकारी-संग्राहक

Credits: Skinner Prout, Uploaded by Quibik, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Native_Encampment_by_Skinner_Prout,_from_Australia_(1876,_vol_II).jpg. License: CC-BY.

(ख) खेतिहर

Credits: Pieter Bruegel the Elder, Uploaded by Dcoetzee, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Pieter_Bruegel_the_Elder-_The_Harvesters_-_Google_Art_Project.jpg. License: CC-BY.

(ग) औद्योगिक

Credits: William Bell Scott, Uploaded by Hohum, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:William_Bell_Scott_-_Iron_and_Coal.jpg. License: CC-BY.

चित्र-2 : जीवाश्म-ईंधनों के जलने से कार्बन, सल्फ़र व नाइट्रोजन के ऑक्साइड बनते हैं। (क) विद्युत संयंत्र (ख) गाड़ियाँ

Credits: Pixabay. URL: https://www.pexels.com/photo/air-air-pollution-climate-change-dawn-221012/. License: CC0.

Credits: Ruben de Rijcke, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Automobile_exhaust_gas.jpg. License: CC-BY-SA.

चित्र-3 : वातावरण में मौजूद पानी के अणुओं के साथ सल्फ़र व नाइट्रोजन के ऑक्साइडों की अभिक्रिया के चलते अम्लीय वर्षा होती है।

(क) क्युरसाओ द्वीप की रिफाइनरी से निकले उत्सर्जनों के चलते अम्लीय बादलों का बनना।
Credits: HdeK, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Cloud_formation_from_refinery_in_Curacao.jpg. License: CC-BY-SA.

(ख) यूएस के ग्रेट स्मोकी माउंटेन नेशनल पार्क की वनस्पतियों पर अम्लीय वर्षा का कहर

Credits: The Shared Experience, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/numbphoto/6221399095/in/photostream/. License: CC-BY-NC-ND.

बॉक्स-1 : जीवाश्म ईंधन क्या होते हैं?

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, जीवाश्म ईंधन, जैविक पदार्थ के अश्मीभूत होने से बनते हैं। ऐसा माना जाता है कि यह प्रक्रिया आज से कोई चार से ढाई अरब बरस पहले शुरू हुई थी। इस प्रक्रिया में गर्मी, दबाव और भूगर्भीय प्रक्रियाओं के द्वारा नाशवान और अपघटनशील वनस्पति एवं जन्तु पदार्थ का एक घने ज्वलनशील पदार्थ में क्रमिक रूपान्तरण होता चला गया। मसलन कोयला, कच्चा तेल (पेट्रोल), प्राकृतिक गैस, बिटुमॅन (डामर), शेल ऑइल, टार सैंड्स, भारी तेल। इन्हें जलाकर ऊर्जा पाने से पहले, इनका दोहन कर परिष्कृत करके और जगह-जगह ले जाया जाता है।

हमारी मौजूदा ऊर्जा ज़रूरतें मुख्यतः तेल के दहन से पूरी होती हैं और फिर कोयले और प्राकृतिक गैस का नम्बर आता है। सम्भवतः भविष्य में भी यही हमारे पसन्दीदा ईंधन बने रहेंगे (**चित्र-4**)।

चित्र-4 : जीवाश्म ईंधनों से हमारी **(क)** वर्तमान और **(ख)** भविष्य की अनुमानित अधिकांश ज़रूरतों की पूर्ति होती है।

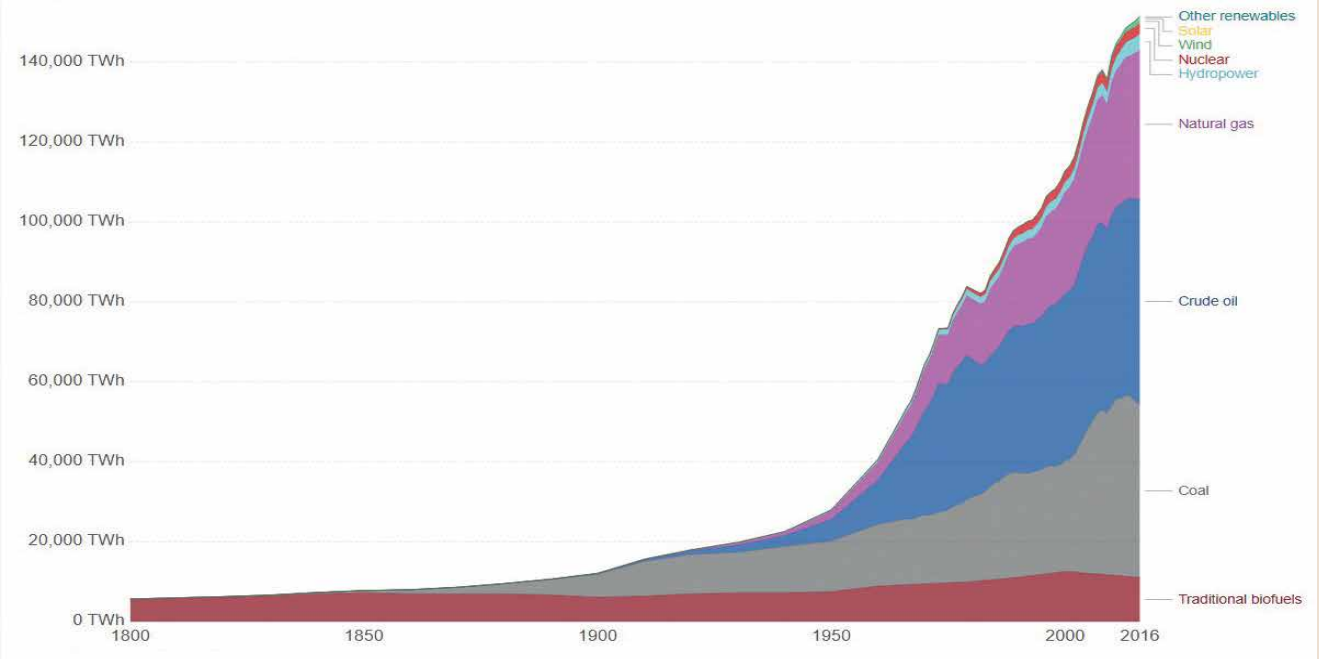

(क) प्राथमिक ऊर्जा की वैश्विक खपत (टेरावॉट-घण्टों में)। 'अन्य नवीकरणीय' के अन्तर्गत सौर, पवन, जल-विद्युत और पारम्परिक जैव-ईंधन के अलावा अन्य नवीकरणीय टेक्नोलॉजी आती हैं।

Credits: Vaclav Smil (2017). Energy Transitions: Global and National Perspectives & BP Statistical Review of World Energy. URL: https://ourworldindata.org/grapher/global-primary-energy. License: CC-BY-SA.

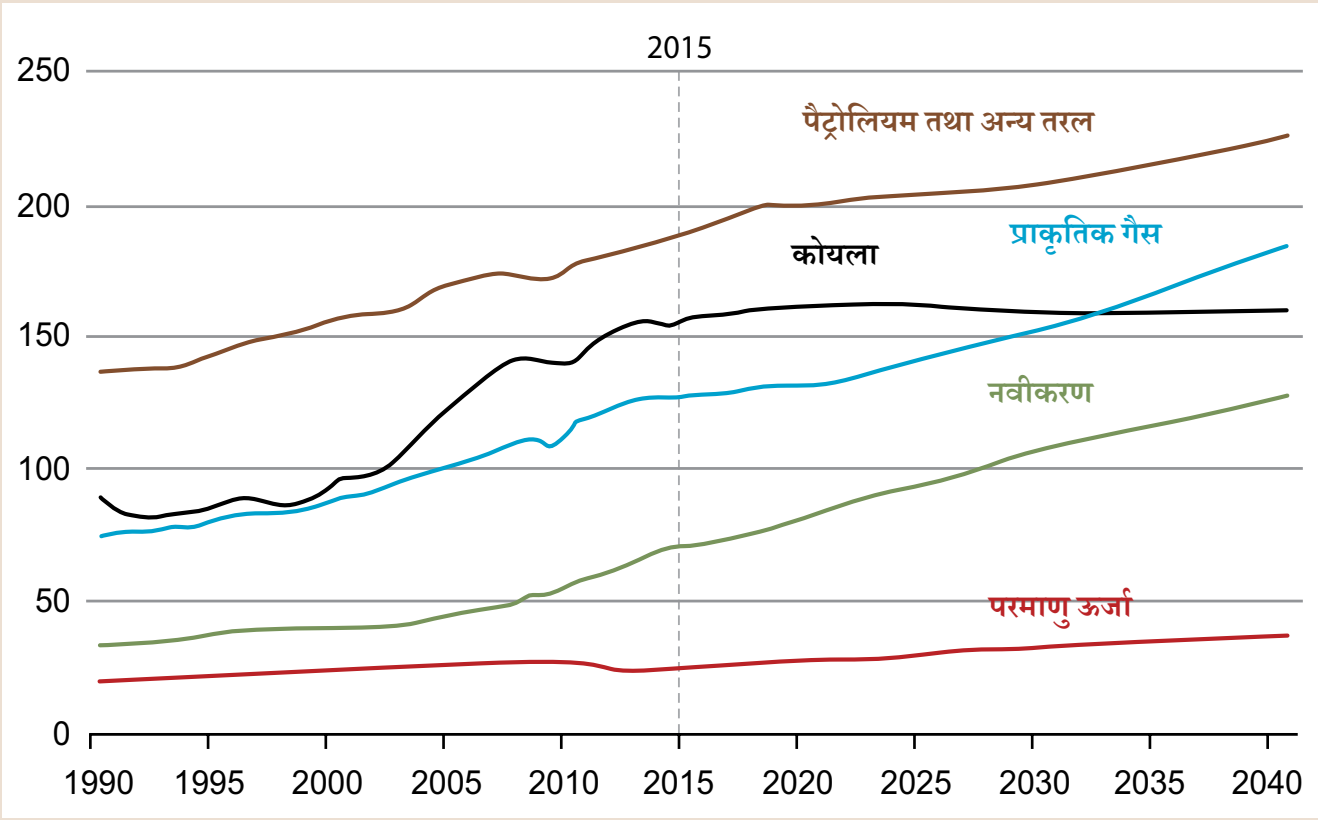

(ख) ऊर्जा स्रोत के अनुसार विश्व ऊर्जा खपत।

Credits: Created by EIA, International Energy Outlook, U.S. DOE Energy Information Administration 2017, and uploaded by Delphi234 on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:World_energy_consumption_outlook.png. License: CC-BY.

प्रभाव' के चलते औसत वैश्विक तापमानों में वृद्धि भी हो सकती है। चार दशकों से भी ज़्यादा के जलवायु आँकड़ों के आधार पर अब हम जानते हैं कि पृथ्वी के इतिहास में पहली बार मानव क्रियाकलाप पृथ्वी की जलवायुगत परिस्थितियों को प्रभावित करने में एक प्रधान कारक बन गए हैं (**बॉक्स-2**)।

क्या हम ऐसे ऊर्जा विकल्प चुन सकते हैं जिनसे हमारी धरती पर मानवीय क्रियाकलापों का असर कम-से-कम हो? क्या हम जीवाश्म-ईंधन रहित दुनिया की कल्पना कर सकते हैं? क्या हवा, पानी और सूरज जैसे 'नवीकरणीय' स्रोतों से ऊर्जित दुनिया सम्भव है (**बॉक्स-3**)? और सबसे ज़्यादा महत्त्वपूर्ण सवाल यह है कि क्या ऐसी दुनिया सम्भव है जिसमें हम कम-से-कम उपभोग करें, सो कम-से-कम ऊर्जा ख़र्च करें?

ऊर्जा के नए रूपों की ओर क़दम बढ़ाते हुए, कुछ सोचने को!

"...ऊर्जा आपूर्ति के किसी भी नए रूप की ओर परिवर्तन के लिए ज़रूरी है कि वर्तमान ऊर्जाओं और प्राथमिक चालकों को सघन रूप से तैनात किया जाए : लकड़ी से कोयले की ओर संक्रमण को मनुष्य की मांसपेशियों ने ऊर्जा दी थी, कोयले के दहन ने तेल के विकास को ऊर्जा दी और...सौर फ़ोटोवोल्टइक सेल तथा पवन चक्कियाँ उस जीवाश्म ऊर्जा का साकार रूप हैं जिसकी ज़रूरत धातुओं को गलाने, ज़रूरी प्लास्टिक के संश्लेषण तथा अन्य अत्यधिक ऊर्जा की माँग करने वाले पदार्थों के प्रसंस्करण में होती है..." – वॅस्लेव स्मिल, एनर्जी ऍन्ड सिविलाइज़ेशन, एमआइटी प्रेस, 2017, पृष्ठ 230.

जो भी ऊर्जा विकल्प हम चुनते हैं, उनका सम्बन्ध सिर्फ़ टेक्नोलॉजी से नहीं होता – वे हमारे सामाजिक, आर्थिक, पारिस्थितिक व राजनैतिक चुनाव होते हैं जो मनुष्यों के साथ-साथ अन्य जीवों की जीवन-गुणवत्ता को भी प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं। औद्योगिक-पूर्व समय में ऊर्जा का प्रमुख स्रोत सौर ऊर्जा थी! हालाँकि आज के विपरीत, यह शक्ति उस रूप में थी जिस रूप में पौधे इसे क़ैद करते थे – जैव-पदार्थ के रूप में। आज भी भारत समेत अनेक एशियाई, अफ़्रीक़ी व लैटिन अमरीकी देशों में गर्म करने व पकाने के लिए जैव-पदार्थों (लकड़ी, कृषि-अवशेष, गोबर-कण्डे आदि) का इस्तेमाल होता है (**चित्र-7**)। जैव-पदार्थों की कुछ क़िस्में अन्य ज़रूरतें पूरी करने के लिए भी उपयोग में लाई जाती हैं। उदाहरण के लिए, तैरते लट्ठों का उपयोग नदी में सामान व लोगों को यहाँ से वहाँ ले

बॉक्स-2 : जीवाश्म ईंधन और जलवायु परिवर्तन

ऊर्जा के लिए जीवाश्म ईंधनों को जलाने से ईंधन में मौजूद कार्बन और हवा में मौजूद ऑक्सीजन आपस में मिलकर कार्बन डाईऑक्साइड बनाते हैं। कार्बन डाईऑक्साइड एक ग्रीनहाउस गैस है जो अपनी गर्मी को इतनी मात्रा में क़ैद कर लेती है जो हमारी पृथ्वी के औसत वैश्विक सतही तापमान को उस स्तर पर बनाए रखने के लिए काफ़ी होती है कि जीवन चल सके। लेकिन वातावरण में इस गैस की अत्यधिक सान्द्रता के नतीजतन वैश्विक तापमान वृद्धि (ग्लोबल वॉर्मिंग) हो सकती है (**चित्र-5**)।

जलवायु परिवर्तन पर अन्तर-सरकारी पैनल (आइपीसीसी) के अनुसार वातावरण में कार्बन-डाईऑक्साइड की सान्द्रता औद्योगिक युग से पहले के मुक़ाबले 30% से भी ज़्यादा बढ़ी है। हमारी वर्तमान ऊर्जा ज़रूरतों के मद्देनज़र वायुमण्डलीय कार्बन-डाईऑक्साइड अभी भी लगभग 0.4% प्रति वर्ष की औसत दर से बढ़ रही है। इसके चलते, वैश्विक स्तर पर औसत सतही तापमानों में उसी हिसाब से बढ़ोतरी हुई है (**चित्र-6**)। फलस्वरूप, वैश्विक जलवायु और जलवायु के पैटर्न पर बुरे प्रभाव पड़े हैं।

मानव समाज और जीवन के अन्य रूपों के लिए इस सबका मतलब क्या है? उच्चतर सतही तापमान से ग्लेशियरों (हिमनदों) के पिघलने की रफ़्तार तेज़ हुई है (जैसा कि आर्कटिक व अंटार्कटिक क्षेत्रों तथा अपने नज़दीक के हिमालय से मिले वैज्ञानिक आँकड़े दर्शाते हैं)। परिणामतः समुद्र तल चढ़ा है और तटीय इलाक़े डूबे हैं। बदलते जलवायु पैटर्न से चरम मौसमी परिस्थितियाँ (औसत से ज़्यादा तापमान, लगातार बदलता वर्षा व्यवहार, तूफ़ानों व चक्रवातों की बढ़ती संख्या) बनतीं हैं जिनका जीवन व संसाधनों पर असर पड़ता है।

चित्र-5 : वायुमण्डल में कार्बन डाईऑक्साइड जैसी ग्रीनहाउस गैसों की अत्यधिक सान्द्रता के चलते दुनियावी तापमान में बढ़ोतरी होती है।

Credits: Skeptical Science Graphics by Skeptical Science. URL: https://www.skepticalscience.com/graphics.php?g=89. License: CC-BY.

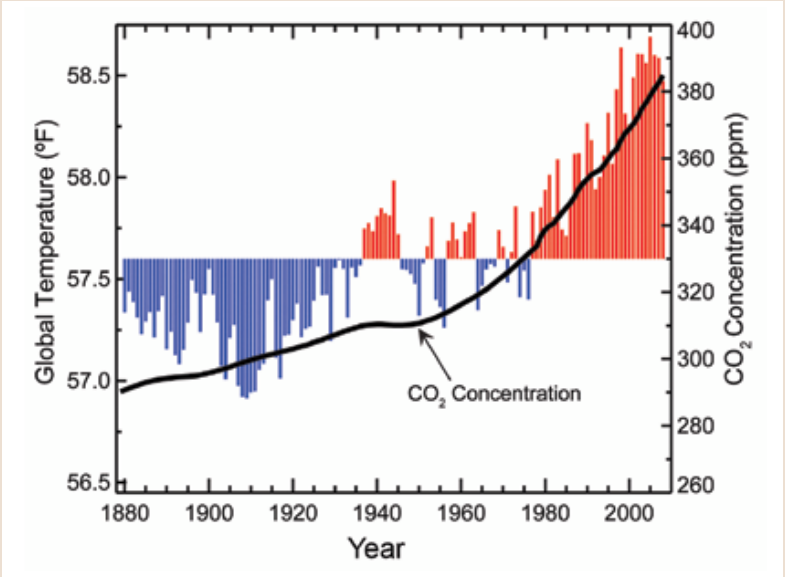

चित्र-6 : 1880-2009 की अवधि में वायुमण्डलीय कार्बन डाईऑक्साइड की सान्द्रता और वैश्विक वार्षिक औसत तापमान। वैश्विक सालाना औसत तापमान ज़मीन और समुद्र, दोनों पर मापा जाता है। चित्र में लाल पट्टियाँ 1901-2000 के दौरान औसत तापमान के ऊपर के तापमान दर्शाती हैं, जबकि नीली पट्टियाँ उससे नीचे के तापमान दर्शाती हैं। काली रेखा वायुमण्डलीय कार्बन डाईऑक्साइड की सान्द्रता पार्ट्स पर मिलिअन (पीपीएम – अंश प्रति दस लाख) इकाई में दर्शाती है।

Credits: Created by NOAA/NCDC in Global Climate Change Impacts in the United States, Cambridge University Press; and uploaded by Enescot on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Atmospheric_carbon_dioxide_concentrations_and_global_annual_average_temperatures_over_the_years_1880_to_2009.png. License: Public Domain.

बॉक्स-3 : नवीकरणीय व अनवीकरणीय ऊर्जा स्रोत

उत्पत्ति के हिसाब से ऊर्जा स्रोतों को दो प्रकार में वर्गीकृत किया जा सकता है – नवीकरणीय व अनवीकरणीय। नवीकरणीय ऊर्जा वह है जिसकी भरपाई करने की दर उसके उपभोग की दर से तेज़ होती है। मसलन सौर, पवन, भू-तापीय, जलीय (पनबिजली) और जैव-पदार्थ की कुछ क़िस्में। अन्तरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (आइईए) के मुताबिक़ 2012 में दुनिया भर की कुल प्राथमिक ऊर्जा आपूर्ति का 12% नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों से आया, जबकि 2013 में यही योगदान बढ़कर 22% हो गया था। अनुमान है कि 2020 तक यह आँकड़ा 26% हो जाएगा। इसके उलट, अनवीकरणीय ऊर्जा स्रोत जैविक पदार्थ पर लम्बे समय में हुई भूगर्भीय प्रक्रियाओं के चलते बनता है। वे चाहे दशकों चले या सदियों तक, उनकी खपत की रफ़्तार उनके बनने की रफ़्तार से बहुत ज़्यादा होगी। मिसाल के लिए कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस।

दिलचस्प बात तो यह है कि नवीकरणीय और अनवीकरणीय, दोनों तरह के ऊर्जा-स्रोत अन्ततः मिलते तो सूरज से ही हैं। प्रकाश-संश्लेषण की प्रक्रिया के चलते सौर ऊर्जा का रूपान्तरण जैविक पदार्थ में होता है जो उच्च दाब की परिस्थितियों में जीवाश्म-ईंधन बनाते हैं। फ़ोटोवोल्टेइक बैटरियाँ सीधे-सीधे सूर्यप्रकाश से सौर ऊर्जा बनाती हैं, जबकि सूरज की गर्मी से पवन चक्र व जल चक्र चलते हैं जिनसे हमें नवीकरणीय ऊर्जा मिलती है।

चित्र-7 : भारत में आज भी पकाने व गर्माने के लिए ज़रूरी ऊर्जा, जैव-पदार्थ की विभिन्न क़िस्मों से मिलती है।

(क) जलाऊ
Credits: Adam Jones, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/adam_jones/3774533682. License: CC-BY-SA.

(ख) कृषि अवशेष
URL: https://www.maxpixel.net/Summer-Sunset-Landscape-Autumn-Field-Straw-Farm-1677853. License: CC0.

(ग) गोबर-कण्डे
Credits: The International Livestock Research Institute (ILRI), Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/ilri/4574444944. License: CC-BY-SA.

चित्र-8 : सौर एवं पवन ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना के प्रभाव भूमि-उपयोग पर पड़ते हैं।

(क) सौर ऊर्जा संयंत्र

Credits: Brahma Kumaris, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/brahmakumaris/13993984261. License: CC-BY-NC.

(ख) पवन चक्कियाँ

Credits: sarangib, Pixabay. URL: https://pixabay.com/en/wind-mill-energy-alternative-2251810/. License: CC0.

बॉक्स-4 : क्या पानी नवीकरणीय है?

निम्नलिखित के चलते पानी के संसाधनों की बढ़ते अभाव के ब्योरे साझा करें –

i. वर्षण के पैटर्न में बदलाव
ii. धरातल और भूजल स्रोतों की बढ़ती मलिनता
iii. भूजल स्रोतों का अत्यधिक दोहन और
iv. सतही पानी की अत्यधिक निचुड़ाई

यह जानकारी देते हुए अपने विद्यार्थियों को इस बात पर बातचीत करने को प्रेरित करें कि आज क्या पानी को वाक़ई एक नवीकरणीय स्रोत के बतौर बरता जा सकता है।

जाने के लिए किया जाता है (इस उदाहरण में ऊर्जा का स्रोत आप किसे मानते हैं – जैव-पदार्थ या पानी?)। शुरुआती 19वीं शताब्दी तक पवन-चालित पाल वाली नावों के द्वारा व्यापार होता रहा। कम-से-कम 2000 सालों तक धरती पर हवा और पानी के द्वारा अनाज की कुटाई और पिसाई की जाती रही, तिलहनों से तेल निकाला जाता रहा और उद्योगों को ऊर्जा दी जाती रही। 1820 में इनकी जगह कोयला-ऊर्जित भाप इंजनों ने ले ली।

ऊर्जा के अनवीकरणीय स्रोतों से नवीकरणीय संसाधनों को अपनाने के चलते वातावरण में छोड़ी जाने वाली कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा कम तो हो सकती है, लेकिन यह कोई जादुई छड़ी नहीं है – सौर ऊर्जा संयंत्रों और पवन-चक्कियों के लिए ज़मीन चाहिए (**चित्र-8**);

बॉक्स-5 : विद्यार्थियों के लिए प्रश्न और गतिविधियाँ

1. क्या आप ऐसी किसी गतिविधि के बारे में सोच सकते हैं जिसमें किसी भी प्रकार की ऊर्जा प्रयुक्त न होती हो?
2. क्या आप कोई ऐसा काम देख सकते हैं जिसमें केवल मानव ऊर्जा लगती हो?
3. अपनी दिनचर्या में से ऐसे कामों की सूची बनाएँ जिसमें बिजली न लगती हो?
4. अपने घर और नगर में बिजली के प्राथमिक स्रोत का पता लगाएँ और फिर यह पता करें कि बिजली के इस स्रोत का कच्चा माल कहाँ से आता है। मसलन अगर हमारे घर की बिजली का प्राथमिक स्रोत कोयला या गैस-आधारित ताप बिजलीघर है तो उसका कोयला या गैस कहाँ से आते हैं?
5. आपके दैनिक जीवन में आप कहाँ-कहाँ जीवाश्म-ईंधन ऊर्जा की जगह नवीकरणीय स्रोतों का इस्तेमाल कर सकते हैं? यह काम आप कैसे करेंगे?

और इन दोनों के लिए ज़रूरी उपकरण बनाने में जीवाश्म ईंधन ख़र्च होते हैं (**बॉक्स-5**)। ऐसे में वास्तविक सवाल यह बनता है – क्या हम अपने उपभोग को कम कर सकते हैं ताकि हमें कम ऊर्जा ख़र्च करनी पड़े?

चलते-चलते

कल्पना करें कि अगर कोयले और तेल की खोज न हुई होती तो क्या ऊर्जा के स्रोतों के बतौर हवा, पानी और जैव पदार्थ के इस्तेमाल के चलते हमारा जीवन, आज के जीवन से अलग होता? कैसे?

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Energy current poles by Gemjan, Pixabay. URL: https://pixabay.com/en/energy-current-poles-1530694/. License: CC-0.

राधा गोपालन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुम्बई से पीएचडी प्राप्त एक पर्यावरण वैज्ञानिक हैं। 18 साल तक पर्यावरण सलाहकार के बतौर काम करने के बाद, राधा ने ऋषि वैली स्कूल में पर्यावरण विज्ञान पढ़ाया। वे अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ़ डेवलपमेंट की एक विज़िटिंग फैकल्टी हैं और फूड सॉवरेन्टी अलाअंस (खाद्य सम्प्रभुता गठबन्धन), भारत की सदस्य हैं।

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

स्वच्छ ऊर्जा

ए.क्यू.कॉन्ट्रैक्टर

हमारे शहरों में होने वाले वायु प्रदूषण का एक उल्लेखनीय और नज़र आने वाला स्रोत है मोटर गाड़ियों से निकलने वाला धुआँ। इस लेख में परिवहन के एक स्वच्छ-ऊर्जा तरीक़े पर बात की गई है। सौर ऊर्जा का दोहन करके हाइड्रोजन पैदा की जा सकती है और फिर माँग अनुसार उससे बिजली बनाकर विद्युत-वाहन चलाए जा सकते हैं।

सम्भवतः मनुष्यों ने सबसे पहले ऊर्जा का नियंत्रित उपयोग (संयोगवश खोजी गई) आग को जलाए रखना सीखकर किया था। इस आग के लिए ज़रूरी ईंधन शुरू-शुरू में तो जंगल में पड़ी बेजान पत्तियाँ, टहनियाँ और डालियाँ रही होंगी। फिर इसके बाद, आवश्यक औज़ारों की टेक्नोलॉजी उपलब्ध होने पर मनुष्यों ने ईंधन के लिए पेड़ों को काटना शुरू कर दिया होगा। इसके बाद कोयले और पीट (एक क़िस्म का दलदली कोयला) का पता लगने के बाद हमें ऐसे ईंधन उपलब्ध हो गए जिनका ऊर्जा-घनत्व (किसी भी पदार्थ के प्रति इकाई द्रव्यमान में निहित ऊर्जा का परिमाण) कहीं ज़्यादा था और जो असीम मात्रा में मौजूद लगते थे। कोयले के बूते ही 18वीं सदी के यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति आई। शुरुआती मोटर-गाड़ियाँ भाप इंजनों से चलतीं थीं जिनमें ईंधन के रूप में कोयले का इस्तेमाल होता था। इसके बाद, आन्तरिक दहन इंजन के आविष्कार के चलते गैसोलिन या पेट्रोल जैसे तरल ईंधन महत्त्वपूर्ण बन गए। तेल के विशाल भण्डारों की खोज ने आधुनिक जीवन के कमोबेश हर पहलू को इतना प्रभावित किया है कि हमें इसका चस्का लग गया है। हमारी ऊर्जा खपत उल्लेखनीय रूप से बढ़ी है। और-तो-और, प्रति व्यक्ति ऊर्जा खपत को 'विकास' का एक मापदण्ड माना जाता है। लेकिन, इस ज़्यादती के कुपरिणामों को हम वायु गुणवत्ता, वैश्विक गर्मी और 'मौसम परिवर्तन' के बतौर भुगत रहे हैं। लिहाज़ा, हमें 'स्वच्छ' ईंधनों की तलाश करनी होगी।

हाइड्रोजन से ऊर्जा

आदर्श रूप से एक ईंधन में दो गुण होने चाहिए – उच्च ऊर्जा घनत्व और स्वच्छ और दक्ष तरीक़े से जलने की क्षमता। वैसे 'आदर्श' ईंधन जैसी कोई चीज़ नहीं हो सकती। हालाँकि कोयला, तेल और गैस जैसे कार्बनमय ईंधन उच्च ऊर्जा-

बॉक्स-1 : जीएचजी और एसपीएम

ग्रीनहाउस गैसों (जीएचजी) से आशय पृथ्वी के वायुमण्डल में मौजूद उन गैसों से है जो उसकी सतह से परावर्तित होने वाली अवरक्त किरणों को सोख लेती हैं और इस तरह उन्हें अन्तरिक्ष में जाने से रोकती हैं। ऊष्मा को क़ैद करने की उनकी क्षमता सतह के व वायुमण्डल के तापमानों में वृद्धि का कारण बनती है। जीएचजी के उदाहरण हैं – जल वाष्प, कार्बन डाईऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड और मीथेन।

निलम्बित कण पदार्थ (एसपीएम) वायुमण्डल में निलम्बित द्रव और ठोस पदार्थों का एक अघुलनशील मिश्रण होते हैं। धूल, राख, परागकणों और धुएँ से बने एसपीएम वायु प्रदूषण के लिए सबसे ज़्यादा ज़िम्मेदार होते हैं।

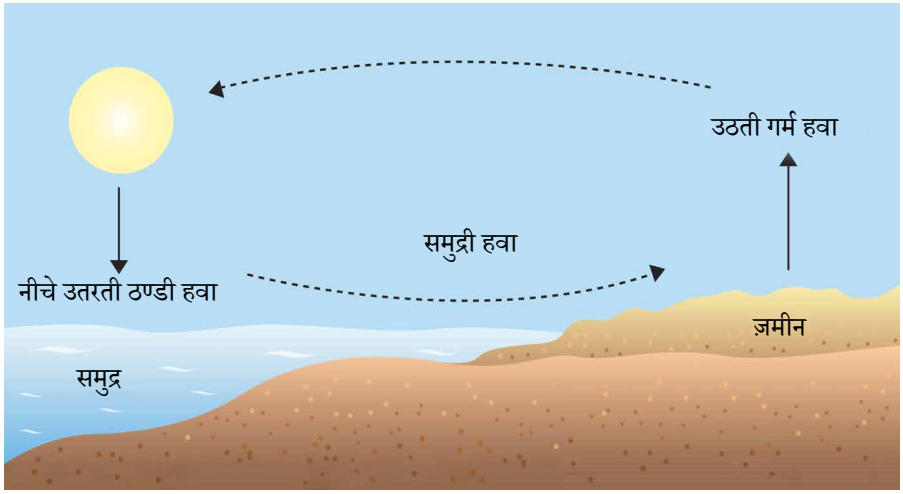

चित्र-1 : सूरज द्वारा ज़मीन और समुद्र की असमान तपाई के चलते स्थानीय हवाएँ बहती हैं।
Credits: Adapted from an image by Crystal Wicker on Weather Wiz Kids. URL: http://www.weatherwizkids.com/weather-wind.htm.

घनत्व वाले ईंधन होते हैं; 'स्वच्छ' ईंधन ग्रीनहाउस गैसें (जीएचजी), निलम्बितकण पदार्थ (एसपीएम) या सल्फ़र व नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स पैदा नहीं करते (**बॉक्स-1**)। आज हमारे द्वारा तलाशे जा रहे अनेक विकल्पों में हाइड्रोजन एक सम्भावनापूर्ण स्वच्छ ईंधन नज़र आता है। इसका ऊर्जा घनत्व काफ़ी अधिक है – तेल की तुलना में, प्रति इकाई भार, कोई तीन गुना। इसके अलावा, हवा में जलने पर यह पानी उत्पन्न करती है, न कि जीएचजी या एसपीएम। ऊर्जा के स्रोत के बतौर, हाइड्रोजन के इस्तेमाल का प्रस्ताव सबसे पहले जेबीएस हाल्डेन ने 1923 में रखा था। फिर 1970 में, जॉन बोक्रिस ने 'हाइड्रोजन अर्थव्यवस्था' शब्द का इस्तेमाल किया जो कार्बनमय ईंधनों के बूते नहीं, बल्कि हाइड्रोजन के बल पर ऊर्जित होगी। इसके लिए, एक ईंधन के बतौर हाइड्रोजन के उत्पादन, भण्डारण और इस्तेमाल हेतु नई प्रौद्योगिकियों की ज़रूरत होगी। बदक़िस्मती से, प्रकृति में आणविक हाइड्रोजन स्वतंत्र रूप से उपलब्ध नहीं होती। पानी के विद्युत अपघटन द्वारा इसका उत्पादन तो किया जा सकता है, लेकिन इससे बिजली कैसे प्राप्त की जाए कि पर्यावरण को कोई नुक़सान न पहुँचे?

जैसा कि ज़्यादातर मामलों में होता आया है, यहाँ भी क़ुदरत का ही इशारा हमें मिला — पृथ्वी पर मौजूद तमाम जीवन के लिए ज़रूरी ऊर्जा अन्ततः सूरज से ही मिलती है। सो, या तो फ़ोटोवोल्टेइक सेलों की मदद से सीधे-सीधे सूरज से ऊर्जा का दोहन किया जा सकता है या फिर सूरज की गर्मी के चलते असमान ढंग से तपती धरती की सतह के नतीजतन पैदा हुई पवनशक्ति से परोक्ष ढंग से यह ऊर्जा पाई जा सकती है (**चित्र-1**)।

इन दोनों तरीक़ों से प्राप्त ऊर्जा से बिजली बनाई जा सकती है (**चित्र-2**)। सौर ऊर्जा को भण्डारित करने की ज़रूरत पड़ सकती है ताकि उसका उपयोग रात में या कम धूप वाले दिनों में किया जा सके।

हाइड्रोजन के रूप में रासायनिक भण्डारण इसका एक सबसे टिकाऊ तरीक़ा है। एक और विकल्प है फ़ोटोवोल्टेइक सेलों से प्राप्त विद्युत ऊर्जा की मदद से मोटर-गाड़ियों में प्रयुक्त होने वाली लेड-ऍसिड बैटरियों को या फिर पोर्टेबल उपकरणों (मोबाइल फ़ोन, लैपटॉप आदि) के लिथियम सेलों को चार्ज करना।

बिजली को री-चार्जेबल बैटरियों में संग्रहित किया जा सकता है या इससे पानी का विद्युत-अपघटन करके हाइड्रोजन व ऑक्सीजन बनाई जा सकती है (**चित्र-3**)। दहन-इंजन में हाइड्रोजन जलाना तो ख़ैर बहुत ख़तरनाक होगा, लेकिन ज़रूरत पड़ने पर किसी 'ईंधन सेल' में हाइड्रोजन का 'दहन' कर ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है।

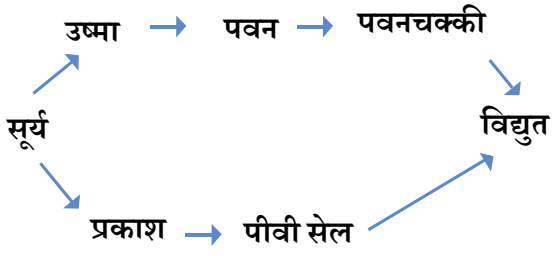

चित्र-2 : विद्युत उत्पादन के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग करना।
Credits: A. Q. Contractor. License: CC-BY.

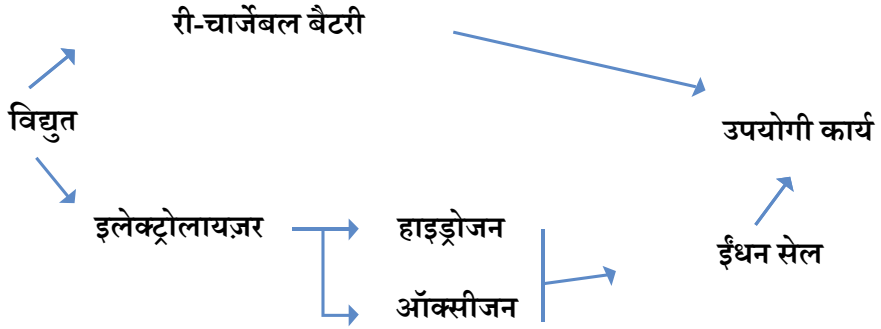

चित्र-3 : हाइड्रोजन के उत्पादन के लिए विद्युत का उपयोग।
Credits: A. Q. Contractor. License: CC-BY.

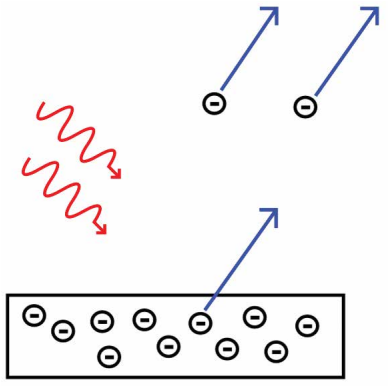

चित्र-4: प्रकाश-विद्युत प्रभाव।
Credits: Wolfmankurd, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Photoelectric_effect.svg. License: CC-BY-SA.

फ़ोटोवोल्टेइक सेल (बैटरियाँ)

ये बैटरियाँ ऐसे उपकरण होते हैं जिनमें प्रकाश-विद्युत प्रभाव से सूर्य प्रकाश (~फ़ोटो) को विद्युत ऊर्जा (~वोल्टेइक) में बदला जाता है (**चित्र-4**)। इस परिघटना में, कुछ ख़ास प्रकार के पदार्थों पर जब विद्युत-चुम्बकीय विकिरण (दृश्य प्रकाश, पराबैंगनी, अवरक्त किरणें आदि) डाला जाता है तो वे आवेश-वाहक (इलेक्ट्रॉन या आयन) छोड़ते हैं। इन मुक्त आवेशित कणों को क़ैद करके बिजली पैदा की जा सकती है। चूँकि सिलिकॉन में फ़ोटॉनों को अवशोषित करने के हिसाब से लगभग इष्टतम

बॉक्स-2 : बैंड-अन्तराल और प्रकाश-विद्युत प्रभाव

कोई पदार्थ प्रकाश-विद्युत प्रभाव तभी दिखाता है जब उत्तेजित इलेक्ट्रॉनों को उसके संयोजकता बैंड (कम ऊर्जा वाला इलेक्ट्रॉन कक्षक) व चालन बैंड (उच्चतर ऊर्जा का इलेक्ट्रॉन कक्षक) के ऊर्जा अन्तराल को पार करने के लिए आवश्यक ऊर्जा एक फ़ोटॉन की ऊर्जा के बराबर हो जाए (**चित्र-5**)। चालन बैंड में जितने ज़्यादा इलेक्ट्रॉन होंगे पदार्थ की विद्युत चालकता उतनी ही ज़्यादा होगी। बिजली के कुचालकों का बैंड-अन्तराल काफ़ी ज़्यादा होता है, जबकि सुचालकों के स्वतंत्र इलेक्ट्रॉन इतनी अधिक बेतरतीबी से भटकते रहते हैं कि विद्युत धारा नहीं बना पाते हैं। लिहाज़ा, मध्यवर्ती बैंड अन्तराल वाले सेमीकंडक्टरों में ही आवेश-वाहकों को सबसे ज़्यादा प्रभावी ढंग से उत्तेजित किया जा सकता है (**चित्र-6**)।

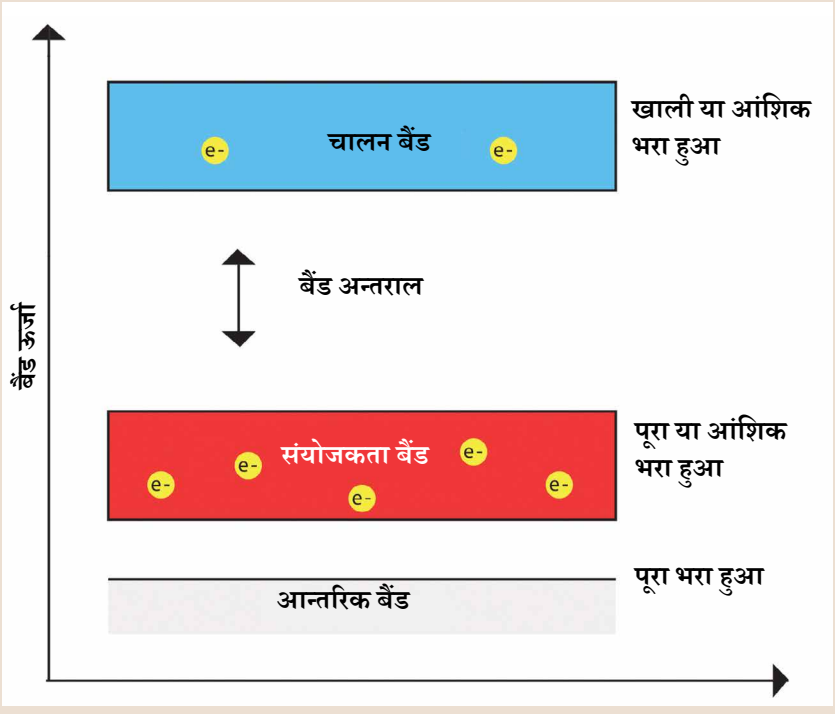

चित्र-5 : संयोजकता और चालन बैंड्स में ऊर्जा-अन्तराल।
Credits: Adapted from an image on Physics and Radio Electronics. URL: http://www.physics-and-radio-electronics.com/electronic-devices-and-circuits/semiconductor/hole.html.

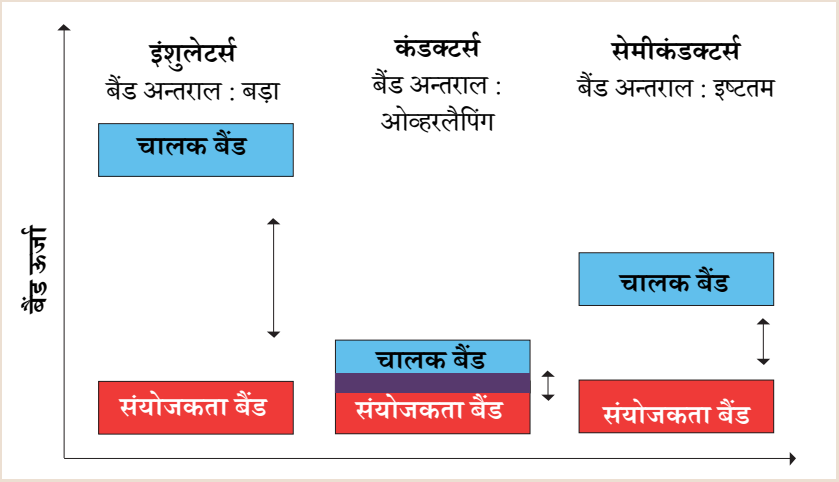

चित्र-6 : सेमीकंडक्टर में ऊर्जा का अन्तराल उसे पीवी सेल में सबसे प्रभावी पदार्थ बनाता है।

Credits: Adapted from an image by Pieter Kuiper, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Isolator-metal.svg.

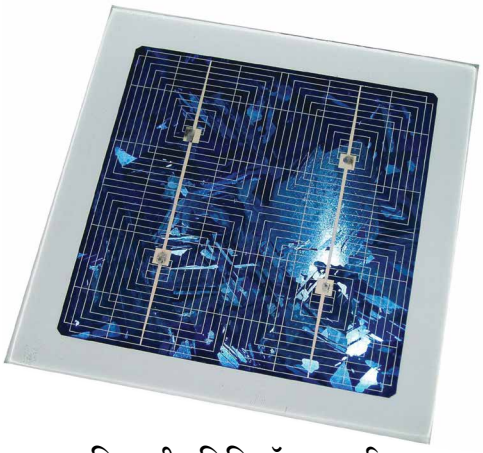

चित्र-7 : बहुक्रिस्टलीय सिलिकॉन-आधारित सोलर सेल।

Credits: Nosferatu it (modified by Rogilbert) Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:4inch_poly_solar_cell.jpg. License: CC-BY-SA.

बैंड-गैप होता है (**बॉक्स-2**), व्यावसायिक रूप से उपलब्ध लगभग सारी फ़ोटोवोल्टेइक (पीवी) बैटरियाँ क्रिस्टलीय सिलिकॉन आधारित होती हैं। सिलिकॉन आधारित पीवी सेल (Si-PV **चित्र-7**) में सिलिकॉन परमाणु एक फ़ोटॉन अवशोषित कर एक इलेक्ट्रॉन छोड़ते हैं। इसके बाद, यह इलेक्ट्रॉन सतह की ओर गति करता है और उसे चाँदी के सम्पर्क बिन्दु के द्वारा संचारित किया जाता है और वह अपने पीछे धनावेशित इलेक्ट्रॉन रिक्ति छोड़ जाता है (**चित्र-8**)। यह इलेक्ट्रॉन रिक्ति एल्यूमिनियम सम्पर्क बिन्दु की ओर जाती है। नतीजतन ऍल्यूमिनियम से चाँदी की ओर एक विद्युत धारा बहने लगती है (**चित्र-9**)। अब चूँकि एक सिलिकॉन पीवी बैटरी 1 वोल्ट से कम का विद्युत विभव उत्पन्न करती है, इसलिए ऐसे बहुत सारे सेल एक-दूसरे के साथ मॉड्यूलर शैली में जोड़ दिए जाते हैं ताकि ज़्यादा वोल्टेज पैदा हो।

सोलर फ़ोटोवोल्टेइक सेल अब एक आम नज़ारा हो गए हैं, ख़ासकर सड़क किनारे की

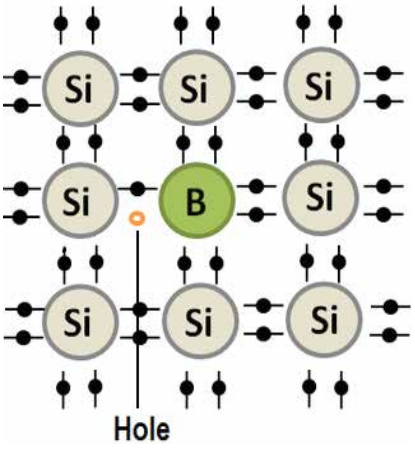

चित्र-8 : सिलिकॉन क्रिस्टल की एक जालक (लैटिस) से एक इलेक्ट्रॉन निकल जाने से उसमें एक छेद बन जाता है।

Credits: J.M.K.C. Donev et al. (2018). Energy Education - Electron hole [adapted from HyperPhysics, (August 20, 2015): P and N-Type Semiconductors (http://hyperphysics.phy-astr.gsu.edu/hbase/solids/dope.html)]. URL: https://energyeducation.ca/encyclopedia/Electron_hole. [Accessed: August 28, 2018] License: CC-BY-SA.

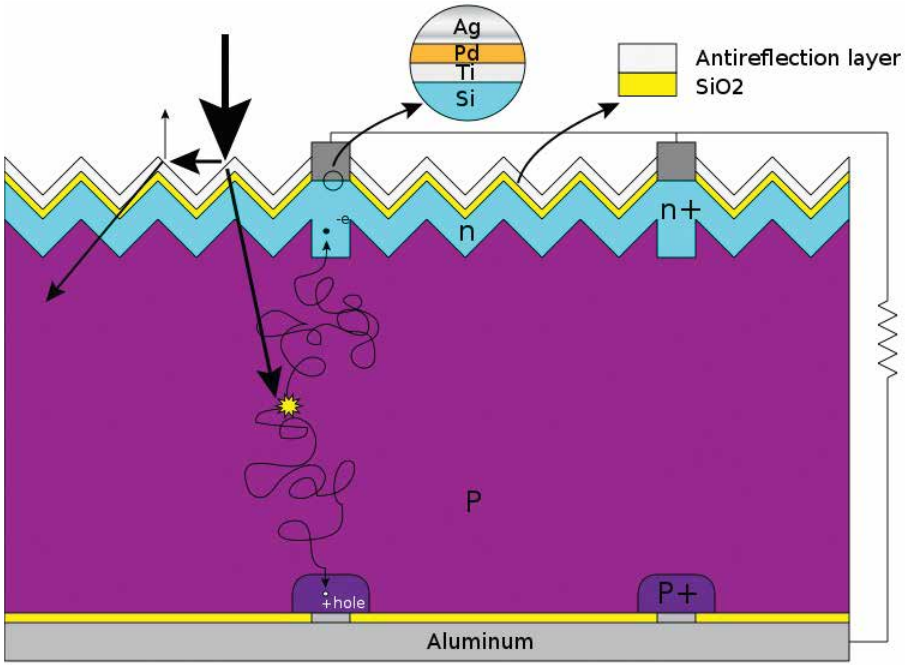

चित्र-9 : एक सिलिकॉन पीवी सेल की एक अनुप्रस्थ काट।

Credits: Cyferz, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/w/index.php?curid=17902127. License: CC-BY.

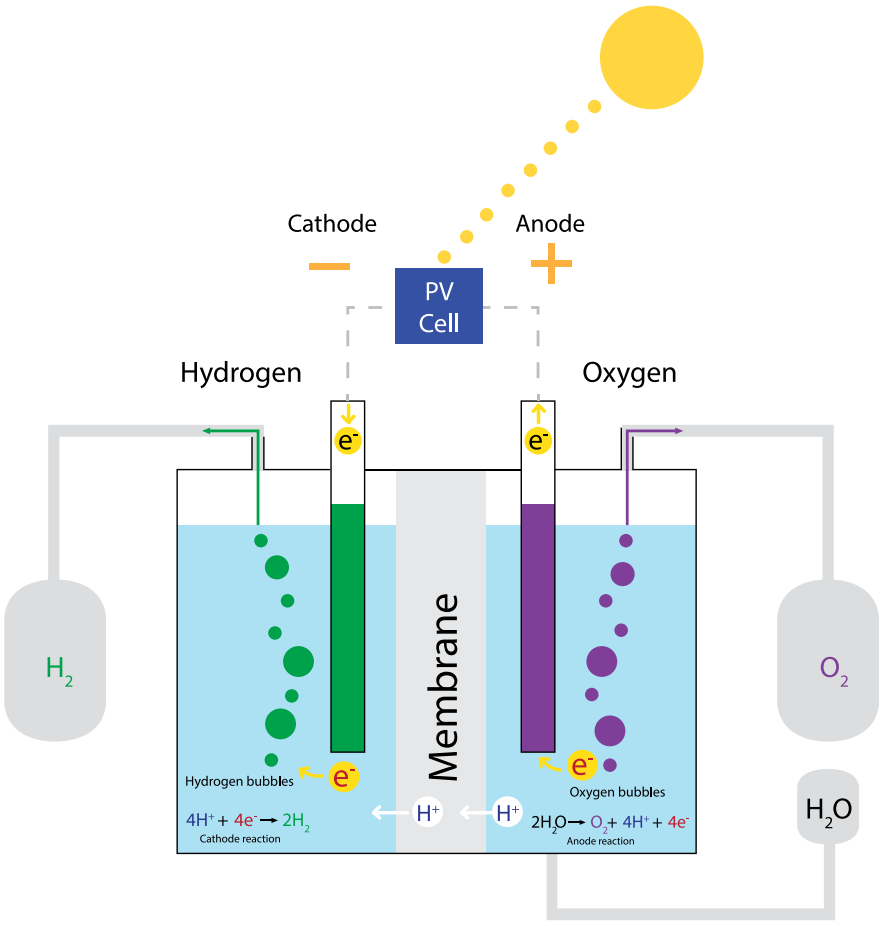

चित्र-10 : पीवी मॉड्यूल द्वारा उत्पन्न डी.सी. धारा पर काम करने वाले एक विशिष्ट जल इलेक्ट्रोलाइजर का योजना आरेख।

Credits: Adapted from images by The Office of Energy Efficiency & Renewable Energy, The U.S Department of Energy (URL: https://www.energy.gov/eere/fuelcells/hydrogen-production-electrolysis) and DavidIfritz, Wikimedia Commons (URL: https://commons.wikimedia.org/w/index.php?curid=26251918).

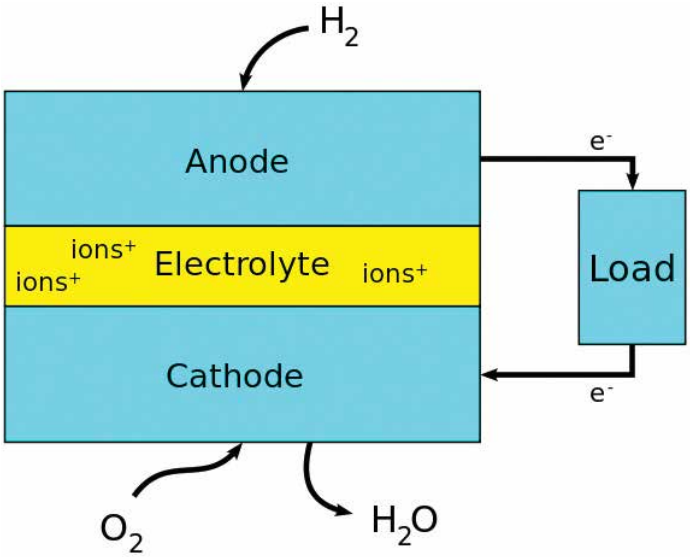

चित्र-11 : एक ईंधन-सेल के घटक।

Credits: Paulsmith99, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Fuel_Cell_Block_Diagram.svg. License: CC-BY.

रोशनी में। पॉवर ग्रिड से नहीं जुड़े दूर-दराज़ के क्षेत्रों में रोशनी के लिए सिलिकॉन पीवी सेल तेज़ी से एक लोकप्रिय विकल्प बन रहे हैं।

इलेक्ट्रोलाइज़र

18वीं सदी के उत्तरार्ध में दर्शाया गया कि पानी के अपघटन के द्वारा उसे 2:1 के अनुपात में गैसीय हाइड्रोजन और ऑक्सीजन में विघटित किया जा सकता है। आधुनिक इलेक्ट्रोलाइज़र्स का आधार यही अभिक्रिया है।

एक सामान्य वॉटर इलेक्ट्रोलाइज़र (**चित्र-10**) में एक प्रोटॉन-संचारी झिल्ली, कैथोड और ऍनोड हिस्सों को एक-दूसरे से अलग रखती है। ऍनोड पर इलेक्ट्रॉन रिक्तियाँ पानी को प्रोटॉन्स और ऑक्सीजन गैस में ऑक्सीकृत करती हैं, जबकि उनके इलेक्ट्रॉन अम्लीकृत पानी के प्रोटॉनों के द्वारा ग्रहण कर लिए जाते हैं और कैथोड वाले हिस्से में हाइड्रोजन बनाते हैं। ख़र्च हुए आयतन का सन्तुलन बनाए रखने के लिए इलेक्ट्रोलाइज़र में लगातार पानी डाला जाता है। इन दोनों गैसों को उच्च दाब पर सिलेंडरों में या भण्डारण के लिए उपयुक्त पदार्थ के जालक (लैटिस) में संग्रहित किया जा सकता है।

ईंधन सेल

ये उपकरण रासायनिक अभिक्रियाओं से मुक्त ऊर्जा से विद्युत और ऊष्मा पैदा करते हैं। किसी भी ईंधन सेल में तीन सटे हुए हिस्से होते हैं – ऍनोड, इलेक्ट्रोलाइट और कैथोड (**चित्र-11**)। इस असेंबली की दोनों सम्पर्क सतहों पर रासायनिक अभिक्रियाएँ होती हैं। इलेक्ट्रोलाइट की प्रकृति के अनुसार ईंधन सेल अलग-अलग हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, प्रोटॉन एक्सचेंज मेंब्रेन (पीईएम) ईंधन सेल में प्रयुक्त इलेक्ट्रोलाइट एक अम्लीय, पानी-आधारित बहुलक झिल्ली (**चित्र-12**) के रूप में होता है। हवा की ऑक्सीजन और एक सिलेंडर या टैंक में भण्डारित सम्पीड़ित आणविक हाइड्रोजन के संयोजन से मुक्त ऊर्जा से बिजली बनती

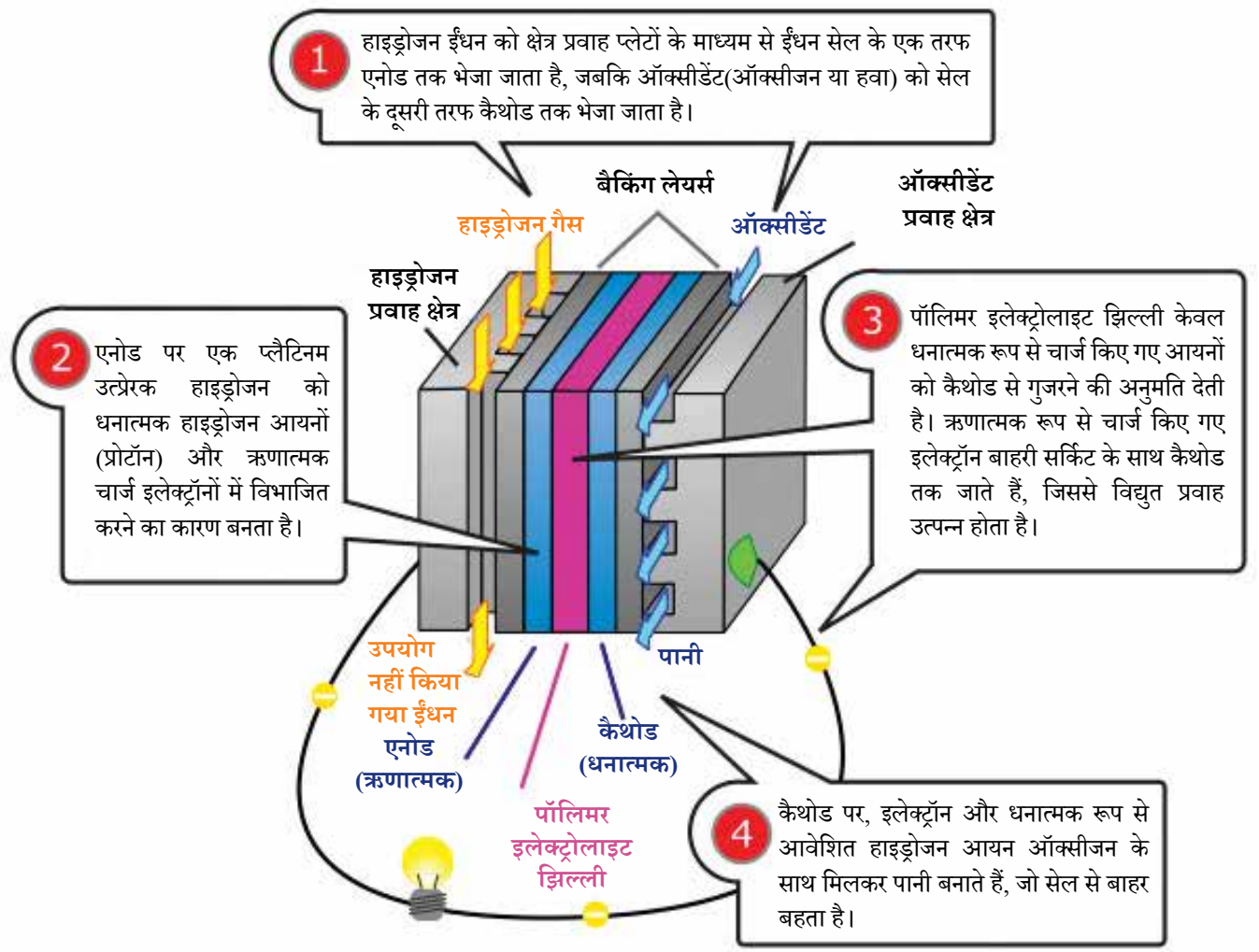

चित्र-12 : एक प्रोटॉन एक्सचेंज मेंब्रेन (पीईएम) ईंधन-सेल।
Credits: Jafet, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File%3APEM_fuelcell.svg. License: Public Domain.

चित्र-13 : ईंधन-सेल से चलने वाली एक बस।
Credits: Gnsin, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:TOYOTA_FCHV_Bus.jpg. License: CC-BY-SA.

चित्र-14 : बाज़ार में आई ईंधन-सेल से चलने वाली पहली कार।
Credits: Turbo-myu-z (modified by Mariordo), Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Toyota_mirai_trimmed.jpg. License: CC-BY-SA.

है। चूँकि इस अभिक्रिया से कैथोड व ऍनोड के बीच मात्र 1.23 वोल्ट का विभवान्तर उत्पन्न होता है, सो पीवी सेलों की तर्ज पर अनेक ईंधन बैटरियों को एक मॉड्यूलर शैली में जोड़कर उच्च विभवान्तर प्राप्त किए जाते हैं।

$2H2 + O2 = 2H2O; \Delta G = - 237$ kJ mol-1; 1.23 V

परिवहन के लिए साफ़ ऊर्जा

पर्यावरण प्रदूषण में परिवहन उद्योग का बहुत बड़ा योगदान है, ख़ासकर शहरी क्षेत्रों में। चीन और भारत के शहरों में वाहनों से निकलने वाले उत्सर्जन अकसर सुर्ख़ियों छाए रहते हैं!

वाहन उत्सर्जनों में कमी लाने की व्यापक रणनीति में सार्वजनिक यातायात व्यवस्थाओं में सुधार लाना शामिल है और इसके तहत विद्युत वाहनों पर विचार किया जा रहा है। 1895 में थॉमस पार्कर मॉडल जैसी कुछ प्रारम्भिक कारें असल में बिजली से चलने वाली कारें ही थीं! सैद्धान्तिक रूप से विद्युत कारों के ये शुरुआती मॉडल वर्तमान में बनाई जा रही कारों से बहुत अलग नहीं हैं। दोनों ही री-चार्जेबल बैटरियों पर चलती हैं। बेशक़, आज की कारें हल्के वज़न वाले पदार्थों से बनी होती हैं और उनकी बैटरियाँ भी उच्च ऊर्जा घनत्व और दक्षता वाली होती हैं। विद्युत वाहनों में री-चार्जेबल बैटरियों की जगह ईंधन सेल का इस्तेमाल सम्भव है।

2011 तक ईंधन बैटरियों से चलने वाली कोई 100 बसें दुनिया भर में चल रही थीं। प्राकृतिक गैस या डीज़ल से चलने वाली बसों की तुलना में इनकी ईंधन कुशलता 39-141% अधिक थी (**चित्र-13**)। ऑटोमोबाइल क्षेत्र में ईंधन सेलों का प्रयोग अभी हाल की बात है – बाज़ार में पहला मॉडल 2015 में लाया गया था (**चित्र-14**)। वैसे ईंधन ख़र्च के मामले में ईंधन बैटरियों से चलने वाली कारें री-चार्जेबल बैटरियों से चलने वाली कारों जितनी ही किफ़ायती लगती हैं लेकिन री-चार्जेबल बैटरियों वाली कारों की रेंज थोड़ी कम होती है। मसलन, ईंधन-सेलों वाली 2016 मॉडल की एक कार की ईंधन कुशलता 28 किमी प्रति लीटर से ज़्यादा थी और उसकी रेंज कोई 500 किमी तक थी।

निष्कर्ष

ईंधन के बतौर हाइड्रोजन के इस्तेमाल का ख़्याल अभी नया-नया है। अन्य प्रौद्योगिकियों के समान, वास्तविकता बनने से पहले इसे अभी कई बाधाएँ पार करनी होंगी। मसलन, पूरी तरह से विद्युत-चालित या हाइब्रिड (मिली-जुली) कारों में ईंधन बैटरियों का प्रयोग अभी शुरू ही हो रहा है। इसके कई फ़ायदे हैं : ईंधन सेलों में ज़्यादा कार्यकुशल ऊर्जा-परिवर्तन, निशब्द परिचालन और शून्य जीएचजी उत्सर्जन। लेकिन अभी ये वाहन बहुत महँगे हैं। हालाँकि बड़े पैमाने पर उत्पादन के चलते प्रति इकाई लागत में कमी आएगी, साथ ही ज़्यादा सख़्त उत्सर्जन मानकों के अमल में आने के चलते, स्वच्छ ऊर्जा वाहनों के उत्पादन में लगने वाली अतिरिक्त लागत उचित ठहराई जा सकेगी।

बेशक़, हमारी ऊर्जा अर्थव्यवस्था का यह केवल एक क्षेत्र है। वायु प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए अन्य क्षेत्रों में भी ऐसे ही नवाचारों की ज़रूरत पड़ेगी।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Automobile exhaust by Ruben de Rijcke, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Automobile_exhaust_gas.jpg. License: CC-BY-SA.

ए.क्यू.कॉन्ट्रैक्टर आईआईटी मुम्बई के रसायनशास्त्र के भूतपूर्व प्रोफ़ेसर और ओमान की डोफ़र यूनिवर्सिटी के डीन हैं। उनसे aqcontractor@iitb.ac.inपर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

सर्पिल सीढ़ियों की खोज

रोहिणी चिन्ता

मिट्टू उस फ़ोटो को लेकर अभिभूत है जो उसके दादाजी की स्क्रेप बुक में आकृति X सरीखा दिखता है। उसके सवालों की झड़ी के जवाब में दादाजी एक कथा सुनाते हैं – कथा, 'जीवन के अणु' की खोज की। क्या X का रहस्य जानने के अपने अभियान में मिट्टू सफल हो पाता है? चलिए, देखते हैं।

मिट्टू अपनी अटरिया से जी भर जिज्ञासा लिए नीचे उतरा। उसका प्रोजेक्ट शुरू होने को था – 'जब आज जैसे गैजेट्स नहीं होते थे तब ये दादा-नाना लोग अपनी छुट्टियाँ भला कैसे बिताते थे।' मिट्टू को अभी-अभी दादाजी की स्क्रेप बुक से **'X'** जैसी दिखने वाली एक चीज़ के एक रहस्यमयी श्वेत-श्याम फ़ोटो का एक स्क्रेच मिला था। वह दादाजी से इसके बारे में जानने को उत्सुक था।

दादाजी बाहर बग़ीचे में बैठे अपना अख़बार पढ़ रहे थे। मिट्टू दौड़कर दादाजी के पास गया और उन्हें वह **X** दिखाया और कहा, "यहाँ से शुरू करते हैं।"

दादाजी ने तस्वीर को बड़े ध्यान से देखा। "यह प्रसिद्ध फ़ोटोग्राफ़ 51 की एक कॉपी है। यह जीवन के अणु – डीऑक्सीराइबोन्यूक्लिक एसिड या डीएनए की खोज का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रमाण है।"

"डीएनए जीवन का अणु है कैसे?"

"अच्छा मुझे यह बताओ कि तुम कोशिकाओं के बारे में क्या जानते हो? कोशिकाएँ जिनसे मिलकर पौधे और प्राणी बनते हैं?" दादाजी ने पूछा।

"कोशिका..." मिट्टू ने याद करने की कोशिश की, "जीवन की मूलभूत इकाई होती है। यह प्लाज़्मा झिल्ली नामक एक बाहरी रक्षक आवरण और एक जेली (लूआब) जैसे पदार्थ, कोशिकाद्रव्य (सायटोप्लाज़्मा) से बनी होती है। कोशिकाद्रव्य में अनेक कोशिका अंगक होते हैं जो कोशिका को जीवित रखने में मददगार होते हैं?"

"हाँ-हाँ, बोलते जाओ," दादाजी बोले।

"कोशिका के नाभिक में डीएनए होता है..." मिट्टू की गाड़ी रुक गई।

दादाजी ने मिट्टू की पीठ थपथपाई। "वाह! तुमने तो अपना पाठ अच्छे से समझ लिया है। क्या तुम्हें पता है कि डीएनए, अमीनो अम्लों का कोड होता है?"

"मुझे अमीनो अम्ल पता हैं!" मिट्टू जोश में लग रहा था। "अमीनो अम्लों से प्रोटीन बनते हैं। प्रोटीनों से कोशिका और सम्पूर्ण जीव बनते हैं।"

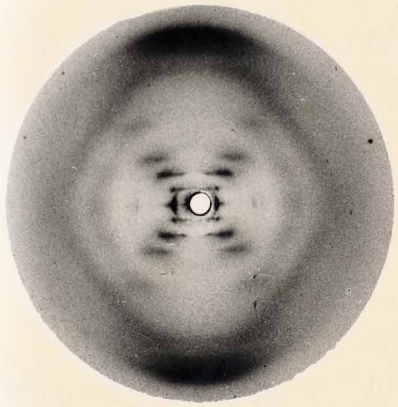

रहस्यमयी तस्वीर

Credits: From the 'Linus Pauling and the Race for DNA' website, OSU Libraries Special Collections & Archives Research Center, Oregon State University Libraries and Press (scarc@oregonstate.edu). URL: http://scarc.library.oregonstate.edu/coll/pauling/dna/pictures/sci9.001.5.html. License: Used with permission of the rights owner.

दादाजी मुस्करा दिए। "हाँ। और कुछ प्रोटीन ऐसे किण्वकों (एन्ज़ाइमों) की तरह काम करते हैं जो कार्बोहाइड्रेट्स और लिपिड्स के उत्पादन में मदद करते हैं। कार्बोहाइड्रेट्स, लिपिड्स और प्रोटीनों से मिलकर ही जीवन की रचनाएँ बनती हैं। इसी कारण, डीएनए को 'जीवन के अणु' के नाम से जाना जाता है।"

मिट्टू उल्लसित होकर बोला, "डीएनए माता-पिता के गुणधर्मों (~लक्षणों) को सन्तानों तक पहुँचाता है।"

"हाँ! इसीलिए यह 'आनुवंशिकता अणु' – आनुवंशिक तत्व भी है।" दादाजी एक मिनट को तो चुप रहे और फिर तपाक से मिट्टू पर एक सवाल उछाल दिया। "लेकिन मिट्टू क्या तुमने यह कहानी सुनी है कि हमें डीएनए के बारे में यह सब कैसे पता है?" तो मिट्टू ने अपना सिर हिला दिया।

"आनुवंशिकता को समझने की चाह सदियों पहले शुरू हो गई थी," दादाजी ने समझाया। "पायथागोरस, एम्पेडोकल्स, हिप्पॉक्रिटीस, अरस्तू, लियोनार्डो दा विंची और मॉपर्टुइस जैसे लोग इसे लेकर अपनी-अपनी व्याख्याएँ लेकर आए, लेकिन पहली असल क़ामयाबी 1866 में ग्रेगर जोहान मेंडेल के आनुवंशिकता सिद्धान्त से मिली। पादप विविधताओं में रुचि रखने वाले ऑस्ट्रियाई पादरी मेंडेल, खाने योग्य मटर के पौधे में गुणों के संचरण को समझने के लिहाज़ से प्रयोग करते आ रहे थे। अपने इन्हीं प्रयोगों के नतीजों के आधार पर उनकी प्रस्तावना थी कि माता-पिता अपने 'गुणधर्म' अपनी सन्तानों को सौंपते हैं।"

ग्रेगर मेंडेल को आधुनिक जेनेटिक्स / आनुवंशिकी का जनक माना जाता है।

Credits: Uploaded by Dominikmatus, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Gregor_Mendel_2.jpg. License: CC-BY.

फ्रेडरिक माइशर ने 'न्यूक्लीन' की खोज की थी।

Credits: Uploaded by MaxSem, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Friedrich_Miescher.jpg. License: CC-BY.

आश्चर्यचकित मिट्टू ने पूछा, "तो क्या 1866 में मेंडेल को डीएनए की जानकारी थी?"

"नहीं!" दादाजी मुस्कराए, "माता-पिता द्वारा अपनी सन्तानों को गुणधर्मों या लक्षणों के हस्तान्तरण की इकाइयों को मेंडेल ने 'फैक्टर्स/ कारक' नाम दिया था। उनके अनुसार कारक दो प्रकार के होते थे। कुछ को उन्होंने 'रिसेसिव/ अप्रभावी' कहा, जिनका नाता ऐसे लक्षणों से था जो हर पीढ़ी में नहीं दिखते थे। अन्य कारकों को उन्होंने 'प्रभावी' की संज्ञा दी जो कि उन लक्षणों से सम्बद्ध थे जो सारी पीढ़ियों में दिखाई पड़ते थे।"

"आपकी सुतवाँ नाक एक अप्रभावी लक्षण है, है ना दादाजी?" उत्सुक हो मिट्टू बोला। "क्योंकि पिताजी (आपकी पहली पीढ़ी की सन्तान) की नाक सुतवाँ नहीं है, पर मेरी (आपकी दूसरी पीढ़ी का बच्चा) तो है?"

"हाँ", दादाजी मुस्कराकर बोले। "लेकिन, यह भी सही है कि सारे-के-सारे लक्षणों को अप्रभावी और प्रभावी के खाँचों में बाँटा नहीं जा सकता। कुछेक तो इनके बीच (मध्यवर्ती) भी होते हैं।"

दादाजी ने अपना चश्मा उतारकर पोंछा। मिट्टू ने दादाजी की स्क्रैप बुक से चिपका मकड़ी का जाला हटाकर दादाजी से पूछा, "तो फिर यह **X** वाला फ़ोटो कहाँ से आ गया?"

"अरे, इतनी जल्दी नहीं," दादाजी ने चेताया। "इसकी बारी तो मेंडेल के कोई सौ साल बाद आती है। हमारी कहानी को आगे बढ़ाएँ तो अगली बड़ी खोज 1869

में हुई। मवाद की श्वेत रक्त कोशिकाओं में मौजूद प्रोटीनों का अध्ययन करने के दौरान फ्रेड्रिक माइशर नामक स्विस जीवविज्ञानी को अचानक एक नया अणु मिल गया। वे यह तो जानते थे कि यह अणु प्रोटीन से अलहदा है क्योंकि अम्लों के साथ यह एक अवक्षेप बनाता था, क्षारीय विलयनों में यह घुल जाता था और प्रोटिएस (प्रोटीनों को हज़म करने वाले एन्ज़ाइम्स) के द्वारा पचाया नहीं जा सकता था। यह मानते हुए कि यह उन कोशिकाओं के नाभिक से आया था, जिनका कि वे अध्ययन कर रहे थे, माइशर ने इस नए अणु को नाम दिया 'न्यूक्लीन'।"

मिट्टू ने जानना चाहा, "इस न्यूक्लीन का मेंडेल के कारक से क्या रिश्ता बनता है?"

दादाजी ने समझाया, "माइशर तो न्यूक्लीन की रासायनिक प्रकृति या संरचना को समझने की कोशिश कर रहे थे; जबकि मेंडेल ने न्यूक्लीन के कामकाज पर नज़र डाली थी यानी माता-पिता के गुणधर्मों को यह उनकी सन्तानों तक कैसे पहुँचाता है।"

"ओह!" मिट्टू ऐसे बोला जैसे सब समझ गया हो।

दादाजी ने बात आगे बढ़ाई, "इसके कोई एक दशक बाद, जर्मन जैव रसायनज्ञ,

जर्मन जैव-रसायनज्ञ, अलब्रेख़्त कोसल को 1910 में न्यूक्लिओबेसेस की खोज के लिए मेडिसिन का नोबेल पुरस्कार मिला।
Credits: Owned by George Grantham Bain Collection (Library of Congress), and uploaded by Materialscientist, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Friedrich_Miescher.jpg. License: CC-BY.

अलब्रेख़्त कोसल ने खोज निकाला कि माइशर का न्यूक्लीन दरअसल पाँच अणुओं से मिलकर बना था – ऍडेनीन (A), गुआनीन (G), साइटोसीन (C), थाएमीन (T) और यूरेसिल (U)। उन्होंने इन उप-अणुओं को 'न्यूक्लिओबेसेस' (न्यूक्लीय क्षार) का नाम

तीन वैज्ञानिकों ने स्वतंत्र रूप से मेंडल के प्रयोगों की पुष्टि की :

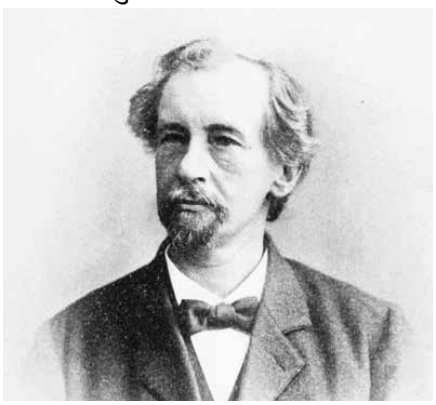

ह्यूगो डी राइस
Credits: Uploaded by Ineuw, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:PSM_V67_D338_Hugo_de_Vries.png\. License: CC-BY.

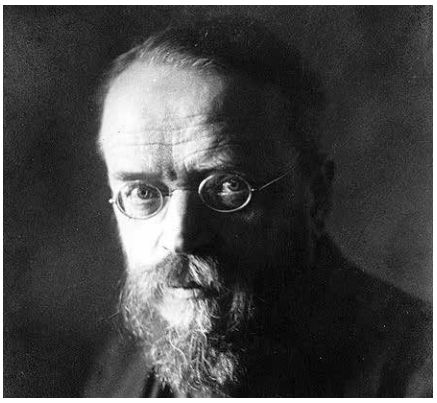

एरिक कोरेंस
Credits: Owned by Mondadori Publishers & uploaded by Materialscientist, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Carl_Correns_1910s.jpg. License: CC-BY.

एरिक शेमार्क वॉन साइसेनेग
Credits: Acta horti bergiani bd. III, no.3 (1905), Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Acta_Horti_berg._-_1905_-_tafl._124._-_Erich_Tschermak.jpg. License: CC-BY.

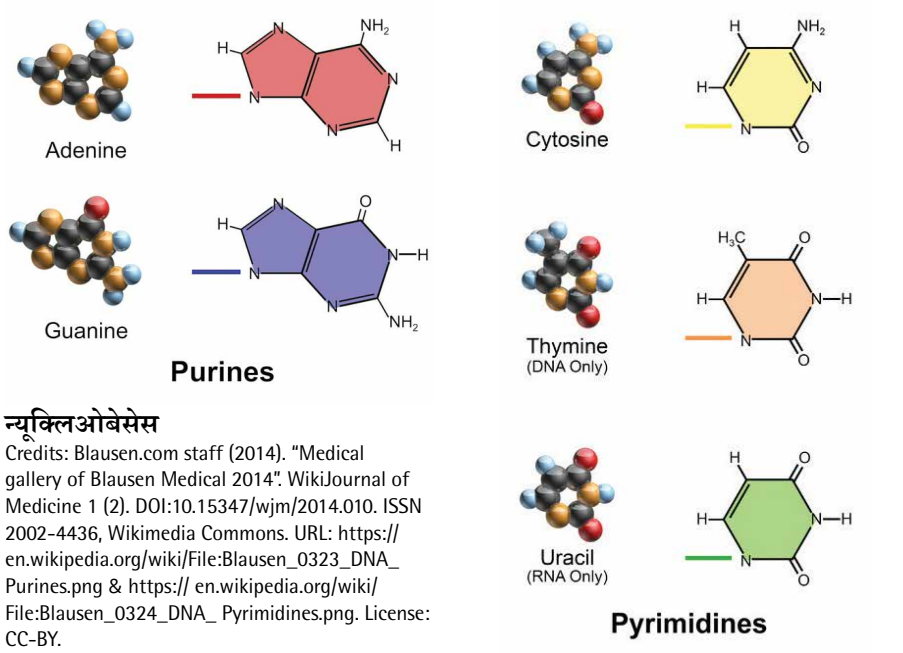

न्यूक्लिओबेसेस
Credits: Blausen.com staff (2014). "Medical gallery of Blausen Medical 2014". WikiJournal of Medicine 1 (2). DOI:10.15347/wjm/2014.010. ISSN 2002-4436, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Blausen_0323_DNA_Purines.png & https:// en.wikipedia.org/wiki/File:Blausen_0324_DNA_ Pyrimidines.png. License: CC-BY.

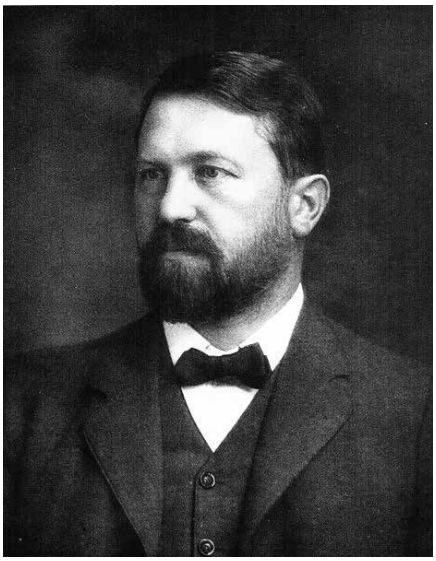

थिओडोर बॉवेरी ने सुझाया कि क्रोमोसोम या न्यूक्लीन जीन्स के वाहक होते हैं।

Credits: Theodor Boveri. In: Hugo Freund und Alexander Berg (Hrsg.): Geschichte der Mikroskopie. Leben und Werk großer Forscher. Bd. 1, Biologie, Umschau Verlag, Frankfurt am Main 1963, S. 121-132, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Theodor_Boveri_high_res-2.jpg. License: CC-BY.

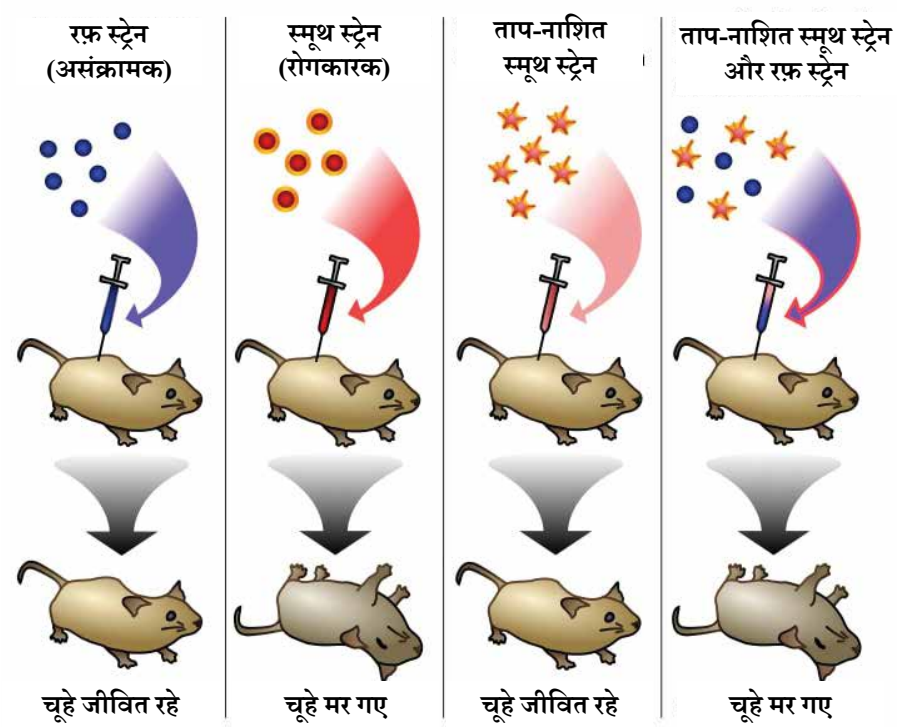

ग्रिफ़िथ ने *स्ट्रेप्टोकॉकस न्यूमोनिए* बैक्टीरिया की दो स्ट्रेन्स को लिया – एक असंक्रामक टाइप II आर (रफ़) स्ट्रेन और दूसरा रोगकारक टाइप III एस (स्मूथ) स्ट्रेन। पैनल 1 : जब ग्रिफिथ ने रफ़ स्ट्रेन चूहों में इंजेक्ट किया, वे ज़िन्दा रहे। पैनल 2 : जब ग्रिफिथ ने स्मूथ स्ट्रेन चूहों में इंजेक्ट किया, वे मर गए। पैनल 3 : जब ग्रिफिथ ने स्मूथ स्ट्रेन की ताप-नाशित कोशिकाओं को चूहों में इंजेक्ट किया, वे ज़िन्दा रहे। पैनल 4 : हैरानी की बात है कि जब उसने स्मूथ स्ट्रेन की ताप-नाशित कोशिकाओं और रफ़ स्ट्रेन की जीवित कोशिकाओं के मिश्रण से चूहों को इंजेक्ट किया तो वे मर गए।
ग्रिफ़िथ ने दावा किया कि रफ़ स्ट्रेन संक्रामक स्ट्रेन में 'रूपान्तरित' हो गया क्योंकि उसने ताप-नाशित स्मूथ स्ट्रेन से न्यूक्लिक एसिड ले लिया।

Credits: Uploaded by Madprime, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Griffith_experiment.svg. License: CC-BY.

दिया। उनकी इस खोज के लिए कोसल को 1910 में मेडिसिन का नोबेल पुरस्कार मिला।"

मिट्टू सब चीज़ों को जोड़ने लगा था, सो बोल उठा, "यानी न्यूक्लीन न्यूक्लिओबेसेस से मिलकर बनता है?"

दादाजी ने सिर हिलाकर जताया कि मिट्टू सही रास्ते पर है और बोलना जारी रखा, "न्यूक्लीन को न्यूक्लीक अम्ल, क्रोमेटिन, क्रोमोसोम या डीएनए भी कहते हैं।"

मिट्टू उत्साह से उछल पड़ा, "आहा! तो डीएनए को सबसे पहले देखने वाले माइशर ही थे!"

दादाजी ने अपनी कथा जारी रखी। "थोड़ा पीछे जाएँ तो 1900 में ह्यूगो डी राइस, कार्ल एरिक कोरेंस तथा एरिक शेमार्क वॉन साइसेनेग ये तीन वैज्ञानिक स्वतंत्र रूप से मेंडेल के प्रयोगों की पुष्टि कर चुके थे। ह्यूगो डी राइस ने मेंडेल के कारकों को पैन्जीन्स नाम दिया था। आज हम पैन्जीन्स को जीन्स के नाम से जानते हैं। सो जीन्स कुछ और नहीं मेंडेल के 'कारक' ही हैं।"

"बढ़िया!"

"फिर 1902 में जर्मन जीवविज्ञानी थिओडोर बॉवेरी ने सुझाया कि क्रोमोसोम (गुणसूत्र) या न्यूक्लीन, जीन्स या कारकों के वाहक होते हैं।"

"वाह!" मिट्टू जोश में था। "यानी बॉवेरी ने मेंडेल के आनुवंशिकता के कारकों को माइशर के अणुओं से सम्बन्धित काम से जोड़ा। क्रोमोसोम्स या डीएनए पर सवार जीन्स, माता-पिता के गुणधर्म उनकी सन्तान तक न्यूक्लिओबेसों (केन्द्रिक/ नाभिक क्षारों) A, T, G, C के ज़रिए पहुँचाते हैं!"

"उत्कृष्ट सिद्धान्त!" मिट्टू की पीठ थपथपाते हुए दादाजी बोले।

मिट्टू ख़ुश नज़र आया। "और क्या यह सही है?"

"हाँ यह सही है। और इसकी पुष्टि 1928 में फ्रेड्रिक ग्रिफिथ द्वारा; 1944 में ऍवरी, मॅक्लिऑड व मॅकार्टी द्वारा; तथा 1952 में हर्शी व चेज़ द्वारा की गई।"

मिट्टू ने दादाजी को टोकते हुए कहा, "अरे दादाजी, थोड़ा-सा धीमे, प्लीज़।"

"बिल्कुल। तो चलो 1928 से शुरू करते हैं।"

"पर दादाजी, क्या 1902 और 1928 के

तीन वैज्ञानिकों ने पुष्टि की कि ग्रिफिथ का 'रुपान्तरकारी अणु' दरअसल डीएनए था।

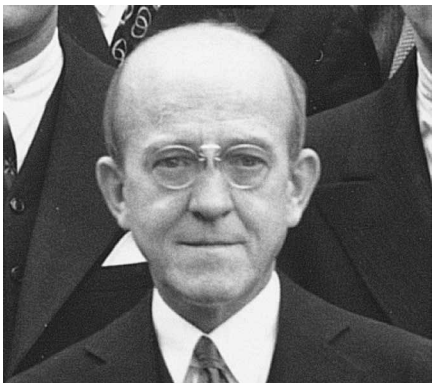

ऑस्वॉल्ड एवरी
Credits: Owned by Rockefeller Archive Center (http://profiles.nlm.nih.gov/CC/A/A/L/P/_/ccaalp_.jpg) and uploaded by Jacopo Werther on Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Oswald_T._Avery_portrait_1937.jpg. License: CC-0.

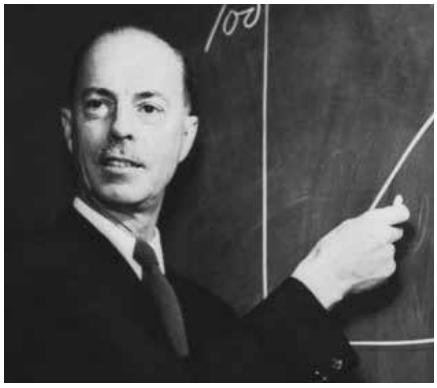

कॉलिन मॅक्लिऑड
Credits: Owned by National Institute of Health (https://history.nih.gov/exhibits/nirenberg/popup_htm/03_macleod.htm) and uploaded by Giac83 on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:ColinMacCleod.jpg. License: CC-0.

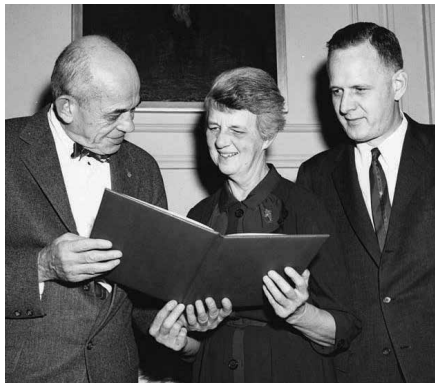

मॅक्लिन मॅकार्टी (एकदम दाहिने)
Credits: Owned by Acc. 90-105 - Science Service, Records, 1920s-1970s, Smithsonian Institution Archives, and uploaded by Giac83 on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Maclyn_McCarty_(5493933573).jpg. License: CC-0.

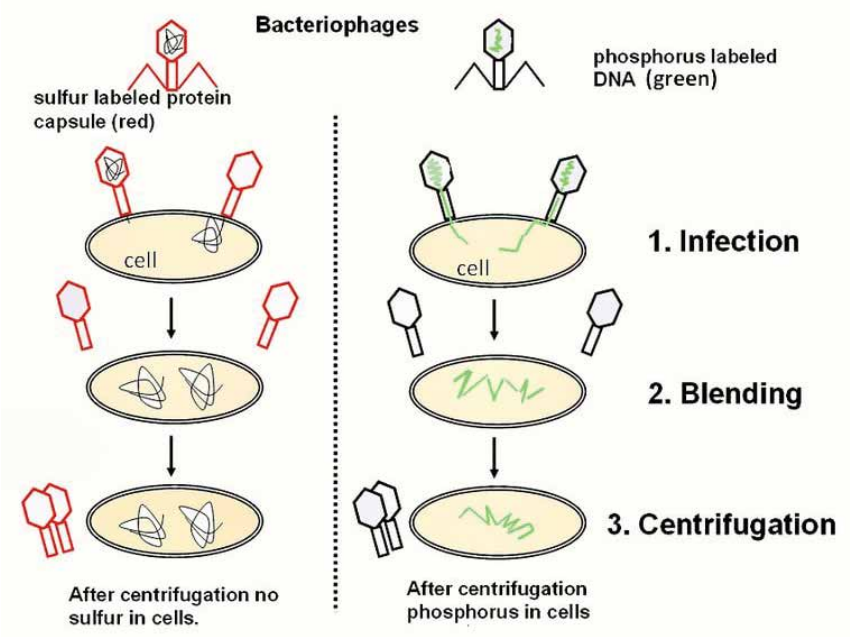

हर्शी और चेज़ का पारक्रमण (ट्रांसडक्शन)

टी2 फ़ेग एक वायरस है जो एस्केरिचिया कोली (ई कोली) बैक्टीरिया को संक्रमित करता है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि ग्रिफ़िथ के प्रयोग में डीएनए ही रूपान्तरण अणु था, हर्शी और चेज़ ने भक्षी (वायरस) के डीएनए को रेडियोधर्मी फ़ॉस्फ़ोरस और उसके प्रोटीन कैप्सीड (पेटिका) को रेडियोधर्मी सल्फ़र से लेबल किया। जब रेडियोधर्मी लेबलयुक्त वायरस का इस्तेमाल ई कोली को संक्रमित करने के लिए किया गया, हर्शी और चेज़ ने फ़ॉस्फ़ोरस लेबल वाला डीएनए संक्रमित कोशिकाओं में पाया। इससे यह साबित हो गया कि वह डीएनए था ना कि प्रोटीन, जो 'जीवन का अणु' है।
Credits: Graham Beards, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Hershey_Chase_experiment.png. License: CC-BY-SA.

बीच कुछ भी महत्त्वपूर्ण नहीं हुआ?" मिट्टू ने पूछा।

"बिल्कुल, 1902 और 1910 के बीच उत्परिवर्तन पहचाने गए थे। उत्परिवर्तन, ए, टी, जी और सी के अनुपयुक्त संयोजन होते हैं, नतीजा होता है ग़लत अमीनो अम्ल।"

"जैसे कि ग़लत हिज्जे वाले शब्द?" मिट्टू उतावला हुआ जा रहा था।

"हाँ। गैरॉड जान गए थे कि डीएनए में उत्परिवर्तनों के चलते क्रियात्मक दोष और मानव रोग होते हैं। लगभग उसी दौरान, टीएच मॉर्गन ने फल मक्खी ड्रॉसोफिला में पहले उत्परिवर्ती (म्यूटंट) की पहचान की थी। फिर 1928 में एक ब्रिटिश जीवाणु विज्ञानी, फ्रेड्रिक ग्रिफिथ ने प्रायोगिक प्रमाणों के द्वारा दर्शाया कि न्यूक्लिक अम्ल वास्तव में रूपान्तरण की प्रक्रिया के द्वारा एक व्यक्ति के गुणधर्म दूसरे व्यक्ति तक अन्तरित करते हैं।"

"यह उन्होंने कैसे दर्शाया?"

"ग्रिफिथ ने स्ट्रेप्टोकॉकस न्यूमोनिए बैक्टीरिया की दो स्ट्रेन्स (क़िस्मों/ वंश-शृंखलाओं) का उपयोग किया। 'एस स्ट्रेन' नाम की क़िस्म ने चूहों को रोगी बनाया; जबकि 'आर स्ट्रेन' नाम वाली दूसरी क़िस्म ने चूहों में कोई रोग नहीं फैलाया। जब उन्होंने एस स्ट्रेन की ताप-नाशित कोशिकाओं (जिसके बारे में उन्हें पता था कि वे असंक्रामक हैं) और आर स्ट्रेन की जीवित कोशिकाओं के मिश्रण से चूहों को संक्रमित किया तो चूहों में बीमारी के लक्षण दिखे।

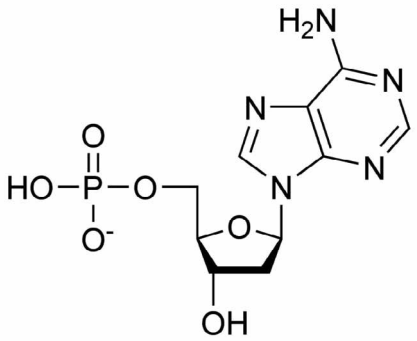

एक न्यूक्लिओटाइड में एक न्यूक्लिओबेस (ऊपर दाहिने), एक शर्करा (बीच में) और एक फ़ॉस्फ़ेट समूह (बाएँ) होते हैं।

Credits: Cacycle, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:DAMP_chemical_structure.png. License: CC-0.

नतीजतन, ग्रिफिथ ने माना कि एस स्ट्रेन ने अपने डीएनए के द्वारा अपने रोगकारक गुणधर्म को अविषाक्त आर स्ट्रेन तक पहुँचा दिया।" यह कहकर दादाजी रुके।

"लेकिन हम यह कैसे जानते हैं कि रोगकारी गुणधर्म डीएनए के माध्यम से अन्तरित हुआ था?"

"क्योंकि एवरी-मॅक्लिऑड-मॅकार्टी व हर्शी-चेज़ ने ग्रिफिथ के प्रयोग के किंचित परिवर्तित संस्करण इस्तेमाल किए थे। तीन अमरीकी आनुवंशिक विज्ञानियों – ऑस्वॉल्ड एवरी, कॉलिन मॅक्लिऑड और मॅक्लिन मॅकार्टी – ने दर्शाया कि स्ट्रेप्टोकॉकस न्यूमोनिए के एस स्ट्रेन के डीएनए को आर स्ट्रेन की जीवित कोशिकाओं के साथ मिश्रित करने से आर स्ट्रेन रोगकारक क़िस्म में बदल सकता है।

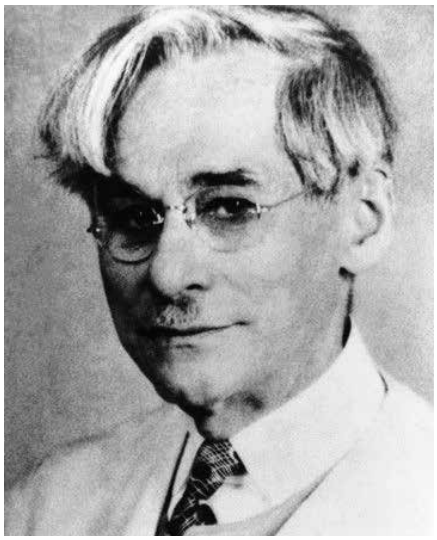

फीबस लेवीन ने न्यूक्लिओटाइड्स की रासायनिक संरचना को पहचाना।

Credits: Uploaded by Materialscientist, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Levene.jpg. License: CC-0.

लेकिन एस स्ट्रेन के प्रोटीन, आर स्ट्रेन की कोशिकाओं को इस तरह से बदलने में नाक़ामयाब रहे। एल्फ्रेड हर्शी और मार्था चेज़ नामक दो आनुवंशिकी वैज्ञानिकों ने इसी प्रकार के एक प्रयोग के द्वारा यह दिखाया कि रेडियोधर्मी लेबल वाला भक्षी (वायरस) डीएनए बैक्टीरिया कोशिकाओं को संक्रमित करने में सक्षम होता है। इस प्रक्रिया को उन्होंने नाम दिया पारक्रमण (ट्रांसडक्शन)।"

"तो क्या फ़ोटोग्राफ़ 51 अगला सुराग़ था?"

दादाजी हँस पड़े। "नहीं। पहले हम थोड़ा पीछे लौटकर डीएनए की संरचना और प्रकृति के इर्द-गिर्द हुई खोजों को देखेंगे।"

"लेकिन क्यों?" मिट्टू उतावला था।

"क्योंकि फ़ोटोग्राफ़ 51 डीएनए की रासायनिक प्रकृति का एक महत्त्वपूर्ण सुराग़ है। तो आगे बढ़ते हैं। 1929 में अमरीकी जैव रसायनज्ञ, फीबस लेवीन ने दिखाया कि कोसल के न्यूक्लिओबेसेस के अलावा, न्यूक्लीन में एक शर्करा अणु और एक फ़ॉस्फ़ेट समूह भी होता है। एक न्यूक्लिओबेस, एक शर्करा अणु और फ़ॉस्फ़ेट के इस संयोजन को उन्होंने 'न्यूक्लिओटाइड' कहा। लेकिन लेवीन यहीं नहीं रुके। उन्होंने आगे जाकर प्रस्तावित किया कि प्रत्येक डीएनए अणु की एक टेट्रान्यूक्लिओटाइड संरचना होती है यानी वह A, T, G और C के एक समुच्चय से मिलकर बनता है। समझ आया?" दादाजी का सवाल था।

"हाँ।"

1934 में टॉरब्योर्न कैस्पर्सन और आइनार हैमरस्टेन नामक दो स्विस वैज्ञानिकों ने दिखाया कि डीएनए एक ऐसा बहुलक अणु है जिसमें न्यूक्लिओटाइड्स की लम्बी लड़ियाँ होती हैं और ज़रूरी नहीं कि ये न्यूक्लिओटाइड्स चार के गुणकों में हों। सो, इस तरह टेट्रान्यूक्लिओटाइड संरचना

इरविन चार्गफ की बेस जोड़ी।

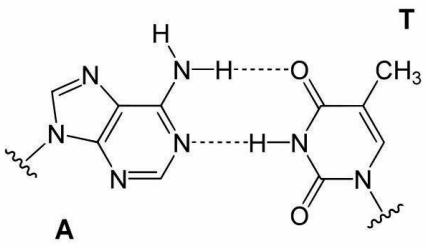

(a) Adenine-Thymine.

URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Base_pair_AT.svg. Credits: Yikrazuul, Wikimedia Commons. License: CC-0.

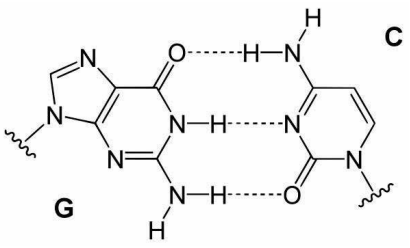

(b) Guanine-Cytosine.

URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Base_pair_GC.svg.

रोजालिंड फ्रैंकलिन ने एक्स-रे की मदद से डीएनए की फोटो खींची।

Credits: National Portrait Gallery, London. URL: https://www.flickr.com/photos/retusj/29075235396. License: CC-BY-NC-ND.

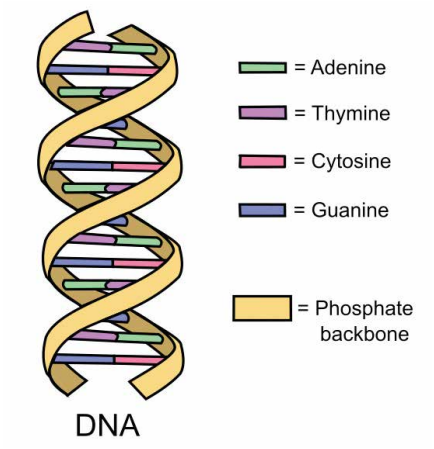

दोहरी कुण्डली।
Credits: Forluvoft, Wikimedia Commons. URL: https://pa.wikipedia.org/wiki/%E0%A8%A4%E0%A8%B8%E0%A8%B5%E0%A9%80%E0%A8%B0:DNA_simple2.svg. License: CC-0.

खारिज की गई। फिर 1937 में, कैस्पर्सन द्वारा भेजे गए सैम्पल पर विलियम ऍस्टबरी ने एक्स-रे क्रिस्टलोग्राफ़ी से डीएनए का पहला फ़ोटोग्राफ़ लिया।"

मिट्टू ने आह भरी, "क्या अब तस्वीर 51 की बारी है?"

दादाजी ने उसकी इस टोक को अनदेखा करके अपनी बात जारी रखी, "1950 में, अर्विन शर्जाफ़ ने पाया कि समस्त जीवों की कोशिकाओं में प्यूरिन (ऍडनीन व गुआनिन) और पाइरिमिडीन (थाइमिन और साइटोसीन) क्षारों का 1:1 अनुपात दिखता है। उन्होंने यह भी प्रमाणित किया कि A हमेशा T के साथ जोड़ी बनाता है और G हमेशा C के साथ जुड़ता है।"

"लेकिन A-T ही क्यों, A-C क्यों नहीं?"

"मज़बूत हायड्रोजन आबन्ध सिर्फ़ A-T और G-C और के बीच ही बन सकता है, अन्यथा नहीं। 1951 में एड्वर्ड रोनिन का सुझाव था कि सम्भवतः फ़ॉस्फ़ेट समूह डीएनए के केन्द्र में होते हैं और न्यूक्लिओबेसेस बाहर की ओर उभरे होते हैं। इसके बाद आई 1952 की खोज।"

"इतनी सारी बातें! क्या हम इन सब ब्योरों को छोड़ सकते हैं?" मिट्टू ने टोका।

"बिल्कुल," दादाजी मन्द-मन्द मुस्कराते हुए बोले, "फ़ोटोग्राफ़ 51 साल 1952 में लिया गया था, लेकिन छोड़ो यह बात।"

मिट्टू भुनभुनाया।

दादाजी मुस्कराकर बोले, "यह फ़ोटोग्राफ़ रोज़ालिंड फ़्रैंकलिन ने एक्स-रे से लिया था।"

"1952 में एक महिला वैज्ञानिक?"

"हाँ। अत्यन्त निपुण पर उतनी ही कम प्रतिष्ठित वैज्ञानिक।"

"कम प्रतिष्ठित?"

"हाँ। तुम अगर अपनी पाठ्यपुस्तक देखोगे तो काफ़ी सम्भावना है कि उसमें तुम्हें फ़ोटोग्राफ़ 51 की एक प्रति तो मिले, लेकिन बिना इस तथ्य के कि यह चित्र फ़्रैंकलिन ने लिया था।"

"लेकिन क्यों?"

"क्योंकि उस समय डीएनए की रचना जानने के लिए वैज्ञानिकों में एक होड़ लगी थी। फ़्रैंकलिन तो महज़ उनमें एक थीं। देखा जाए तो, सम्भव है कि उन्होंने इस फ़ोटोग्राफ़ के द्वारा डीएनए की संरचना को लगभग तोड़ ही लिया था। इसे देखते ही उन्होंने पहचान लिया था कि डीएनए एक दोहरी कुण्डली है – वही है तुम्हारा रहस्यमयी **X**," दादाजी ने बताया।

"तो क्या यह डीएनए अणु का चित्र है?!" मिट्टू ने दोबारा उस चित्र को देखा और फिर पूछा, "डबल हेलिक्स क्या चीज़ है, दादाजी?"

डीएनए की संरचना की खोज के लिए तीन वैज्ञानिकों को मेडिसिन का नोबेल संयुक्त रूप से दिया गया था।

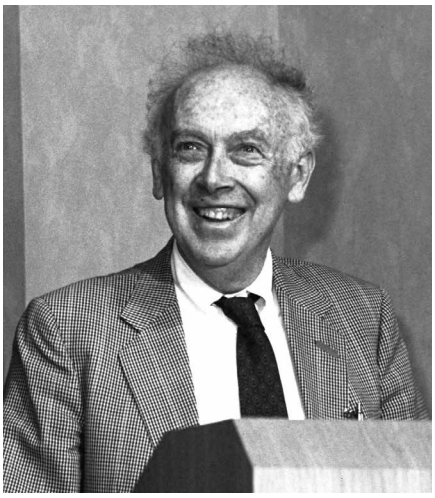

जेम्स वॉट्सन
Credits: Owned by National Cancer Institute (NCI) & uploaded by Jan Arkesteijn, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:James_Dewey_Watson.jpg. License: CC-0.

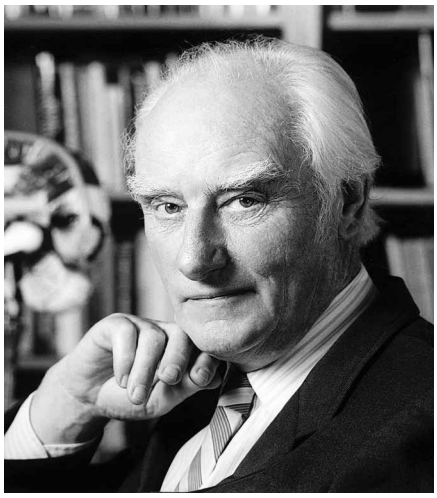

फ़्रांसिस क्रिक
Credits: Photo by Marc Lieberman, uploaded by Materialscientist on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Francis_Crick_crop.jpg. License: CC-BY.

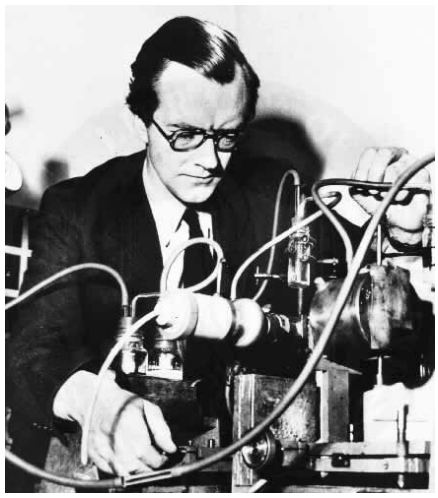

मॉरिस विल्किंस
Credits: Owned by the National Institutes of Health and uploaded on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Maurice_H_F_Wilkins.jpg. License: CC-0.

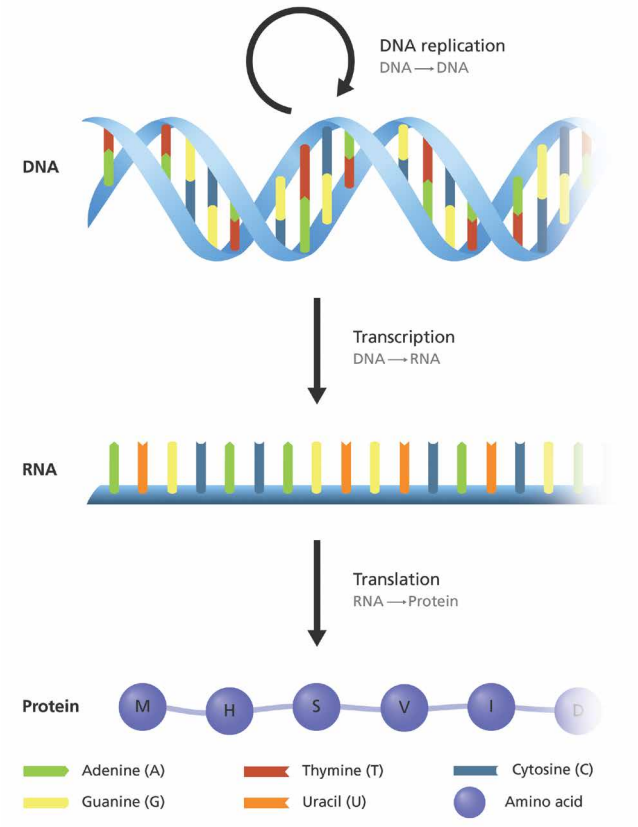

केन्द्रीय सिद्धान्त

Credits: Owned by Genome Research Limited & uploaded on Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/yourgenome/26344048984. License: CC-BY-NC-SA.

"देखो, डीएनए का हर अणु न्यूक्लिओटाइड्स (क्षार-शर्करा-फ़ॉस्फ़ेट) की दो लड़ियों से मिलकर बना होता है जो एक-दूसरे के परस्पर प्रतिसमान्तर होती हैं। फ्रैंकलिन, शार्गफ़ का नियम जानती थीं। इस फ़ोटो में **X** के आधार पर उन्होंने एकदम सही-सही अनुमान लगा लिया था कि न्यूक्लिओबेसेस हेलिक्स के भीतर और फ़ॉस्फ़ेट समूह (पहले वाले मॉडल के विपरीत) बाहर की ओर थे। और इन लड़ियों के न्यूक्लिओबेसेस हाइड्रोजन आबन्धों द्वारा जोड़ों में रखे जाते हैं। यह भी माना जाता है कि उन्होंने यह निष्कर्ष भी निकाल लिया था कि प्रत्येक क्षार जोड़ा 3.4 आन्गास्ट्रॉम दूरी पर बना रहता है।"

"क्या उन्होंने इसके बारे में लिखा था?" मिट्टू का सवाल था।

"वह लिखना तो चाहती थीं, लेकिन उन्हें कुछ और प्रमाणों की प्रतीक्षा थी। इसी बीच, उन्होंने यह फ़ोटो अपने एक सहकर्मी मॉरिस विल्किंस को दिखाया। विल्किंस डीएनए की संरचना पता करने को बहुत उत्सुक थे। इस क़दर उत्सुक कि उनकी शिकायतों ने कैम्ब्रिज की आणविक जैविकी प्रयोगशाला के प्रमुख सर ब्रैग्स को इतना आश्वस्त कर दिया था कि उन्होंने अपने यहाँ कार्यरत दो अन्य वैज्ञानिकों – जेम्स वॉट्सन और फ्रांसिस क्रिक – को डीएनए संरचना पर उनका शोध रोक देने को कहा। लायनस पॉलिंग फ़ोटोग्राफ़ 51 को एक नज़र देखना चाहते थे लेकिन विल्किंस ने तो उनके इस अनुरोध को भी अस्वीकार कर दिया। प्रोटीन केमिस्ट्री में नोबेल पुरस्कार प्राप्त, पॉलिंग को अपने द्वारा प्रस्तावित डीएनए की 'तिहरी कुण्डली संरचना' की पुष्टि के लिए इस प्रमाण की ज़रूरत थी। अब चूँकि विल्किंस ने उनके इस अनुरोध को अस्वीकार कर दिया था, सो पॉलिंग ने अपने मॉडल का आधार ऍस्टबरी की तस्वीरों को बनाया। बहरहाल, प्रतिस्पर्धा और कड़ी हुई। सर ब्रैग्स ने वॉट्सन और क्रिक को फिर से इस होड़ में शामिल होने को कहा। किंग्स कॉलेज में हुई भेंट के दौरान, वॉट्सन ने विल्किंस को फोटाग्राफ़ 51 दिखाने के लिए फुसला लिया। विल्किंस ने बिना फ्रैंकलिन की जानकारी या सहमति के वॉट्सन को वह फ़ोटो दिखा दिया। देखते ही, वॉट्सन को उस चित्र की महत्ता समझ में आ गई। पॉलिंग की प्रोटीन संरचना और उस फ़ोटोग्राफ़ से मिली जानकारी को मिलाकर वॉट्सन और क्रिक ने 1953 में डीएनए का पहला सही मॉडल बनाया। वॉट्सन, क्रिक और विल्किंस को इस उपलब्धि के लिए 1962 में चिकित्सा/ मेडिसिन का नोबेल पुरस्कार संयुक्त रूप से दिया गया।"

"और, रोज़ालिंड फ्रैंकलिन?"

"वे 'डीएनए की बेनाम महिला' रह गईं।"

मिट्टू ने फ़ोटोग्राफ़ को देख एक लम्बी साँस भरते हुए कहा, "बहुत नाइंसाफ़ी है ये!"

दोनों जन कुछ देर मौन रहे। फिर, मिट्टू ने पूछा, "इस सारी खोज का मतलब क्या है आख़िर?"

"यह हमें डीएनए प्रतिलिपिकरण, डीएनए से प्रोटीन संश्लेषण, बीमारी में डीएनए की भूमिका, रोगोपचार में डीएनए के उपयोग और साथ ही अपराधों की गुत्थी सुलझाने में भी मददगार होता है।"

मिट्टू दादाजी को सवाली निगाहों से देखने लगा।

"1957 में फ्रांसिस क्रिक ने 'केन्द्रीय सिद्धान्त' प्रस्तावित किया। मूल सिद्धान्त आरएनए के ज़रिए डीएनए से प्रोटीन तक सूचना के प्रवाह की व्याख्या करता है। इस सिद्धान्त के अनुसार, डीएनए पहले सूचना को एक मध्यवर्ती अणु, आरएनए को देता है। इसके बाद, आरएनए का अनुवाद अमीनो अम्लों में हो जाता है जिसके नतीजतन प्रोटीन बनते हैं। क्रिक ने यह भी प्रस्तावित किया कि हरेक अमीनो अम्ल की जानकारी डीएनए के प्रत्येक तन्तु पर स्थित तीन क्रमिक क्षारों के अनुक्रम में कूटबद्ध होती है। और इसे ही 'जेनेटिक कोड/ आनुवंशिक कूट' कहते हैं।"

"और क्या उनकी यह प्रस्तावना सही थी?"

"हाँ" दादाजी ने कहा। "आनुवंशिक कोड डीएनए के शब्दों का द्योतक है, जो न्यूक्लिओटाइड्स की तिकड़ियों (जैसे ATC, GAG, GTT, CCC…) से मिलकर बने होते हैं, जो एक-एक अमीनो अम्ल का कोड

होते हैं। इसकी खोज 1953 में गॅमाफ़ ने और 1965-68 में निरेनबर्ग, खुराना, हॉली और लेडर ने की थी। देखा किस तरह से डीएनए को समझने के उपक्रम ने विज्ञान की दुनिया में क्रान्ति ला दी," दादाजी मुस्कराए।

"कैसे?"

"1973 में हर्बर्ट बॉयर ने पुन:संयोजी डीएनए टेक्नॉलॉजी (री-कॉम्बिनंट डीएनए टेक्नॉलॉजी - rDNA) विकसित की। rDNA का इस्तेमाल करते हुए हम पौधों व बैक्टीरिया, मानव व बैक्टीरिया या बैक्टीरिया व वायरस आदि जैसी अलग-अलग प्रजातियों के डीएनए एक-दूसरे में मिला सकते हैं ताकि हमारी पसन्द का संश्लिष्ट/ कृत्रिम डीएनए बन सके।"

"जैसे कि यूनानी शिमेरा (मिश्रित जीव)?" मिट्टू सोच में पड़ गया।

"कुछ-कुछ ऐसा ही। rDNA से अनेक नई दवाएँ और वैक्सीनें बनाई जाती हैं और मधुमेह जैसी बीमारियों को नियंत्रित किया जाता है। मसलन, मानव इंसुलिन का जीन बैक्टीरिया में प्रविष्ट करवाकर डाइबिटीज़ के इलाज के लिए बड़ी मात्रा में 'ह्यूमूलिन' बनाई जा सकती है। बैक्टीरिया को विकसित करना आसान होता है और उनके उत्पाद आसानी से प्राप्त भी किए जा सकते हैं।"

"डीएनए की मदद से अपराधों की गुत्थियाँ कैसे सुलझाई जाती हैं?" मिट्टू ने कौतुकवश पूछा।

"1977 में, सैंगर मैक्सम और गिल्बर्ट ने डीएनए का अनुक्रम पता करने का एक तरीक़ा विकसित किया। डीएनए अनुक्रमण से हम डीएनए के प्रत्येक तन्तु में न्यूक्लिओटाइड्स का क्रम पता कर सकते हैं। उसी साल, ऍलेक जेफ़्री ने 'डीएनए फिंगरप्रिंटिंग' नाम की एक तकनीक विकसित की जिसके द्वारा अपराधों की गुत्थियाँ सुलझाई जाने लगीं। यह तकनीक इस सिद्धान्त पर काम करती है कि प्रत्येक व्यक्ति का अपना एक अनन्य न्यूक्लिओटाइड-अनुक्रम होता है। इसीलिए हमारे डीएनए के अनुक्रमण के द्वारा हमारी शिनाख़्त की जा सकती है," दादाजी ने समझाया।

"यानी एलेक जेफ़्री डीएनए विज्ञान के शरलॉक होम्स हैं?"

दादाजी ने मुस्कराकर अपना सिर हिलाया।

"तो डीएनए ज्ञान के चलते हमारा जीवन बेहतर हुआ?" मिट्टू ने अपनी विशेष टिप्पणी दी।

"उह-हुह!"

"ठीक है!" कहकर मिट्टू एक पल को तो अपने ख़्यालों में खो गया, लेकिन अगले ही पल फिर चिहुँक उठा। "यानी आप अपनी छुट्टियाँ चीज़ें जमा करके बिताते थे, है ना?"

"ऐसा किसने कहा?" दादाजी ने पूछा।

"मुझे लगा आपकी स्क्रैप बुक इस बात का सबूत है!" मिट्टू कुछ हैरान नज़र आया।

"नहीं", कहकर दादाजी हँस दिए। "मैं तो केवल कुछ पुरानी तस्वीरें खोज रहा था। बहरहाल, मेरी स्क्रैप बुक ऊपर टांड से उतार लाने के लिए शुक्रिया। और अब अगर तुम चाहो तो 'उन दिनों जब गैजेट्स नहीं होते थे तब मैं अपनी छुट्टियाँ किस तरह बिताता था,' इस विषय पर बात करते हैं।"

मिट्टू का मुँह खुला-का-खुला ही रहा आया। "गररर ..." गोया वह दादाजी को काटने दौड़ रहा हो।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: DNA, Max Pixel. URL: https://www.maxpixel.net/Microbiology-Biology-Gene-Dna-Analysis-Medicine-163466. License: CC-0.

रोहिणी चिन्ता हैदराबाद के यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ़ वीमेन के जेनेटिक्स व बायोटेक्नॉलॉजी विभाग में असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हैं। बच्चों के लिए लिखने में उन्हें बहुत मज़ा आता है और वे मानती हैं कि 'प्रसन्न बचपन यानी प्रसन्न समाज'। विभिन्न पत्रिकाओं में अब तक उनकी कोई 85 बाल-कहानियाँ छप चुकी हैं।

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

फूलों का ख़ुशबू ऑर्केस्ट्रा

वी. एस. प्रगाधीश और शैनन ओल्सन

एक ख़ूबसूरत बगिया में टहलते-टहलते आपकी मुलाकात, बगिया के तमाम फूलों से आ रही सुगंधों के एक प्यारे गुलदस्ते से होती है। ये ख़ुशबुएँ इतनी दिलकश होती हैं कि हम उनका इस्तेमाल अपने घरों, भोजन, और-तो-और अपने शरीर पर भी करते हैं। आपने कभी सोचा है कि आख़िर इन फूलों की ख़ुशबू इतनी मीठी क्यों होती है? और इन ख़ुशबुओं से पौधों का भला क्या भला हो सकता है?

शेक्सपिअर ने कहा है,

"...चाहे किसी नाम से बुलाओ, गुलाब की ख़ुशबू ऐसी ही मधुर रहेगी...।"

– (रोमिओ और जूलिअट, अंक 2, दृश्य 2)

फूल किसी पुष्पी पौधे का जननांग होता है जिसमें उसके नर व/या मादा युग्मक (गैमीट्स) होते हैं (**चित्र-1**)। नर युग्मक परागकण होते हैं। पराग फूल के परागकोश में पाया जाता है। निषेचन के लिए इन कणों को वर्तिकाग्र (पौधे का मादा जननांग) तक पहुँचाना ज़रूरी होता है। निषेचन के बाद, पौधा बीज बनाता है जो अंकुरित होकर नए पौधे बना सकते हैं। वह प्रक्रिया जिसके ज़रिए पराग नर से मादा अंगों तक ले जाए जाते हैं, परागण कहलाती है।

उसी फूल के अन्दर होने वाला परागकणों का स्थानान्तरण, स्व–परागण कहलाता है, और अलग-अलग फूलों के बीच हो तो इसे पर-परागण कहते हैं। परागण अजैविक ढंग से हवा, पानी, और यहाँ तक कि गुरुत्वाकर्षण बल से भी हो सकता है; और कीड़ों, चमगादड़ों, परिन्दों और अन्य कई जानवरों के द्वारा जैविक ढंग से हो सकता है।

लगभग 90% पुष्पी पौधों का परागण जन्तुओं द्वारा होता है (**चित्र-2**)।[1] आपके बग़ीचे में उड़ रहीं रंग-बिरंगी तितलियाँ,

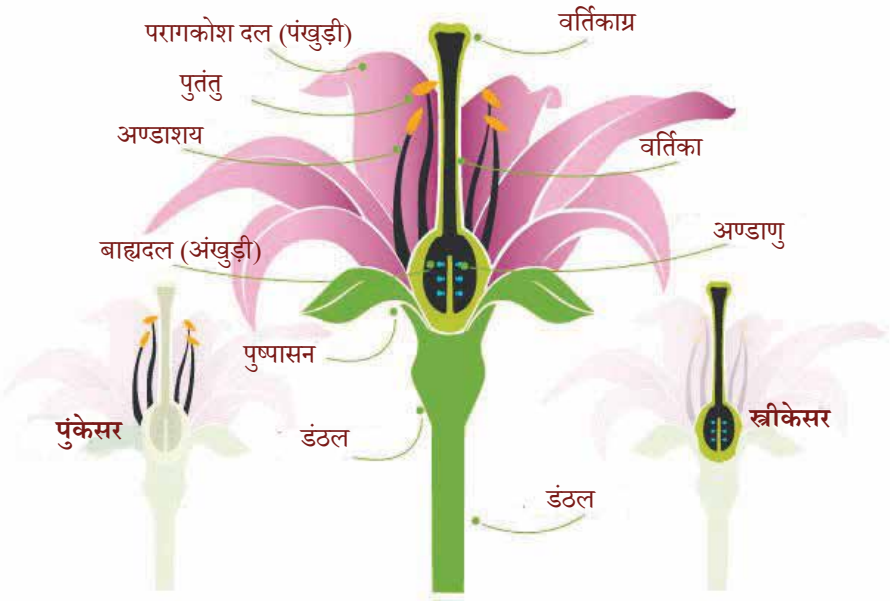

चित्र-1 : एक फूल के प्रजनन अंग।
Credits: ProFlowers, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/proflowers/15099656846. License: CC-BY.

और विकास के लिए आवश्यक ग्लूकोज़, प्रोटीन्स व लिपिड्स प्राथमिक उपापचयज हैं। इन उपापचयजों के उपोत्पादों की तरह पैदा हुए यौगिक जैसे कि टर्पेनॉइड्स, फ्लैवोनॉइड्स, स्टेरॉइड्स, ऍल्कलॉइड्स आदि, जिनका सम्बन्ध वृद्धि व विकास के साथ नहीं होता, द्वितीयक उपापचयज कहलाते हैं। द्वितीयक उपापचयज रंजकों, अनिष्टकर स्वाद, पानी धारण करने वाले मोम आदि के द्वारा बीमारियों, सूखे, धूप, और शाकाहारी पशुओं से पौधों की रक्षा करते हैं।

फूलों की ख़ुशबुएँ पौधों में ग्लूकोज़ संश्लेषण की प्रक्रिया के उपोत्पादों के बतौर पैदा होती हैं और इसीलिए उन्हें द्वितीयक उपापचयज माना जाता है। फूलों की सुगंधों का अद्भुत वैविध्य मुख्यत: रासायनिक यौगिकों के तीन

भिनभिनातीं मधुमक्खियाँ, यहाँ-वहाँ मंडरातीं मक्खियाँ, पतंगे, चमगादड़ और पक्षी, सब-के-सब, पराग को यहाँ से वहाँ छितराने का यही महत्त्वपूर्ण काम दिन-रात कर रहे हैं (**चित्र-3**)। इसीलिए परागण को हम अनिवार्य 'पारिस्थितिक सेवा' कहते हैं यानी, यह पारिस्थितिक तंत्र की वह प्राकृतिक प्रक्रिया है जिससे मनुष्य लाभान्वित होते हैं। बिना परागण, पुष्पी पेड़-पौधे नहीं होंगे, न होंगे फल, न सब्ज़ियाँ। बल्कि हमारे जाने-पहचाने जीवन का वजूद ही न होगा! पर क्या आपने कभी ग़ौर किया है कि अव्वल तो पौधे किस तरह इन तमाम जीवों को परागण के लिए अपनी ओर खींचते हैं?

महक फूलों की

पौधे अपनी ख़ुशबू और अपने रंगबिरंगे फूलों से परागणकर्ताओं को अपनी तरफ आकर्षित करते हैं। गंध हवा में कई मीटर तक फैल सकती है। सो, ख़ुशबू परागणकर्ताओं को दूर से फूलों की ओर आकर्षित करने का एक महत्त्वपूर्ण संकेत होती है।

पौधों द्वारा उत्पादित सारे रसायन दो वर्गों में बाँटे जा सकते हैं – प्राथमिक व द्वितीयक उपापचयज (प्राइमरी एंड सेकंडरी मेटाबोलाइट्स)। पौधों की वृद्धि

चित्र-2 : वे सामान्य फ़सलें जिनके लिए जन्तु-परागण महत्त्वपूर्ण है। आंशिक रूप से जन्तु-परागण पर निर्भर करने वाली फ़सलों का प्रतिशत (75%) दर्शाने वाला एक पाइ चार्ट (एफओए)।
Credits: Shannon Olsson.

समूहों के द्वारा जनित होता है – टर्पेनॉइड्स, फिनाइलप्रोपेनॉइड्स और फैटी ऍसिड से व्युत्पन्न पदार्थ।[2] लैवेंडर और रोज़मैरी के फूलों की ख़ुशबुएँ ज़्यादातर टर्पेनॉइड यौगिकों के चलते बनती हैं; जबकि गुलाब, चमेली और लिली की ख़ुशबुएँ तीनों गंध समूहों द्वारा पैदा होती हैं। फिनाइल प्रोपेनॉइड्स, फूलों के रंगों के उत्पादन में भी अपनी भूमिका निभाते हैं। वहीं, टर्पेनॉइड पत्तियों और तने में शाकभक्षियों के खिलाफ रक्षकों का काम करते हैं।[3]

फूलों की ख़ुशबुओं के और भी काम होते हैं, मसलन परागण न करने वाले (जैसे मकरन्द के लुटेरे) आगंतुकों को दूर भगाना, और शाकभक्षियों के कुदरती दुश्मनों को आमंत्रित करना। उदाहरण के लिए, चबाए या तोड़े जाने पर पौधों की पत्तियाँ, तने और फूल अनेक रसायन उत्सर्जित करते हैं। जब आप ताज़ा कटी पत्तियों और तृणों की गंध का मज़ा ले रहे होते हैं, उस वक़्त यही प्रक्रिया चल रही होती है। जब फूलों को कोई कीट चबाता है, तो वे बीटा-ओसीमीन जैसे रसायन छोड़ते हैं। क्रैब स्पायडर (एक मकड़ी) इस गंध की मदद से कीटों को तलाशकर खाती है। दरअसल, पुष्पभक्षियों का हमला होने पर फूल बड़ी मात्रा में बीटा-ओसीमीन उत्सर्जित कर सकते हैं (**चित्र- 4**)।[4] एक और उदाहरण है कि फूलों में मिथाइल ऍन्थ्रानिलेट नामक एक पक्षी-विकर्षक यौगिक की मौजूदगी के चलते, परागणकर्ता कीटों को खाने वाले पक्षी दूर भाग जाते हैं। पुष्पीय गंध रसायनों में रोगाणुरोधी गुण भी हो सकते हैं जो फूल में रोगाणु विकास को अवरुद्ध करते हैं।

पुष्प पारिस्थितिकी एवं अनुकूलन

पौधों की हर प्रजाति, बहुत कम रासायनिक संश्लेषण प्रक्रियाओं के द्वारा बड़ी संख्या में कम अणु भार के वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों (VOC_s) का उत्पादन करती है। इन्हीं VOC_s का अनोखा मिश्रण हरेक प्रजाति के फूलों को उनकी विशिष्ट सुगंध से नवाज़ता है। कीटों और पक्षियों से लेकर छोटे जानवरों तक क़िस्म-क़िस्म के अनेक

चित्र-3 : एक फूल को परागित करता कीट।
Credits: V. S. Pragadheesh. License: CC-BY-NC.

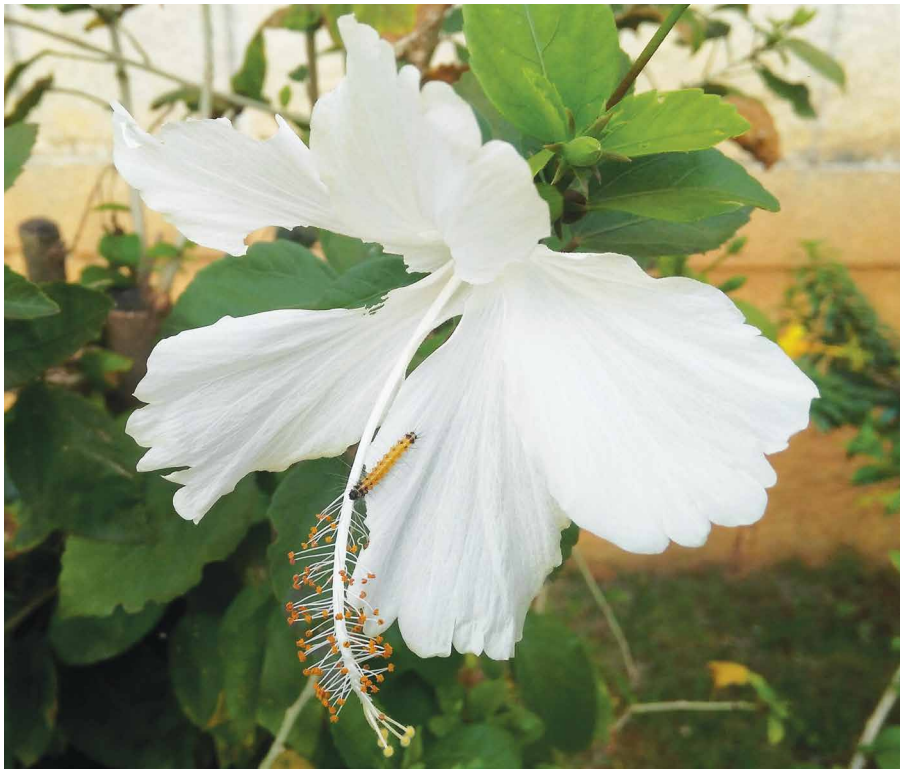

चित्र-4 : गुड़हल फूल को खाता एक पुष्पभक्षी।
Credits: V. S. Pragadheesh. License: CC-BY-NC.

परागणकर्ताओं को ये VOC_s अपनी ओर आकर्षित कर सकते हैं। लेकिन इसमें पेंच यह है कि तमाम पौधों, बहुतेरे परागणकर्ताओं और तमाम ख़ुशबुओं के इस कोलाहल के चलते एक दिक़्क़त भी पैदा हो सकती है। अगर परागणकर्ता अलग-अलग क़िस्मों के फूलों पर मंडराएँ, तो कोई पौधा भला यह कैसे सुनिश्चित करेगा कि उसका पराग उसी की प्रजाति के फूल को दिया जा रहा है?

मधुमक्खियों जैसे परागणकर्ता अनेक पौध-प्रजातियों से भेंट करने जाते हैं और बहुलवादी कहलाते हैं। वैसे, बहुतेरे बहुलवादी परागणकर्ता कुछ हद तक तो पुष्प निष्ठा दर्शाते हैं। पुष्पनिष्ठा मतलब किसी परागणकर्ता की वह प्रवृत्ति जिसमें वह एक ही प्रजाति के अनेक फूलों का मेहमान बन उनका पराग उसी प्रजाति में यहाँ-से-वहाँ करता है। हर प्रजाति के फूलों की गंध की विशिष्ट बनावट, परागणकर्ताओं को फूलों की प्रजातियों को पहचानने और सीखने का अवसर देकर उनकी पुष्प निष्ठा को कायम रखने में महती भूमिका निभाती है।

वैकल्पिक रूप से, कुछ परागणकर्ता, आजीवन फूलदार पौधे की एक ही प्रजाति पर मंडराते हैं। ऐसे परागणकर्ताओं को विशेषज्ञ कहते हैं। नतीजतन, ऐसी पौध प्रजाति के फूलों की अतिथि अकसर वही विशेषज्ञ परागणकर्ता प्रजाति होती है। मिसाल के लिए, *वनिला प्लैनिफोलिआ, जो वनीला बीन्स पैदा करता है,* पौधे का परागण केवल *मेलिपोना* नामक भ्रमर की इकलौती प्रजाति के द्वारा ही होता है। इसीलिए, जब इस पौधे की खेती इन भंवरों की सीमा के बाहर की जाती है तो यह जीवित नहीं रह पाता।[5] उसे हस्त-परागित किया जाए तो बात अलग है – जैसा कि यहाँ भारत में किया जाता है ताकि वनीला महक प्राप्त की जा सके।

दिनचर व निशाचर पुष्प गंध

अनेक पौधों में लयबद्ध ढंग से दिन और रात में, अपनी ख़ुशबुएँ फैलाने की प्रवृत्ति होती है। दिन में खिलने वाले फूलों की ख़ुशबू रात में खिलने वाले फूलों की ख़ुशबू से जुदा होती है। दिन के जिस समय किसी फूल से अधिकतम ख़ुशबू निकलती है उसका सम्बन्ध मकरन्द की उपलब्धता, पराग-परिपक्वता, और उसके परागणकर्ताओं की सक्रियता से होता है। मसलन, गुलाब जैसे दिन में खिलने वाले फूल, दिन के समय सबसे ज़्यादा ख़ुशबू बिखेरते हैं और भंवरों, गुबरैलों, तितलियों और मक्खियों को आकर्षित करते हैं। इसके उलट, चमेली जैसे रात में खिलने वाले फूल रात में अपनी अधिकतम सुगंध बिखेरते हैं जिसके फैलते चमगादड़, चूहे और निशाचर पतंगे

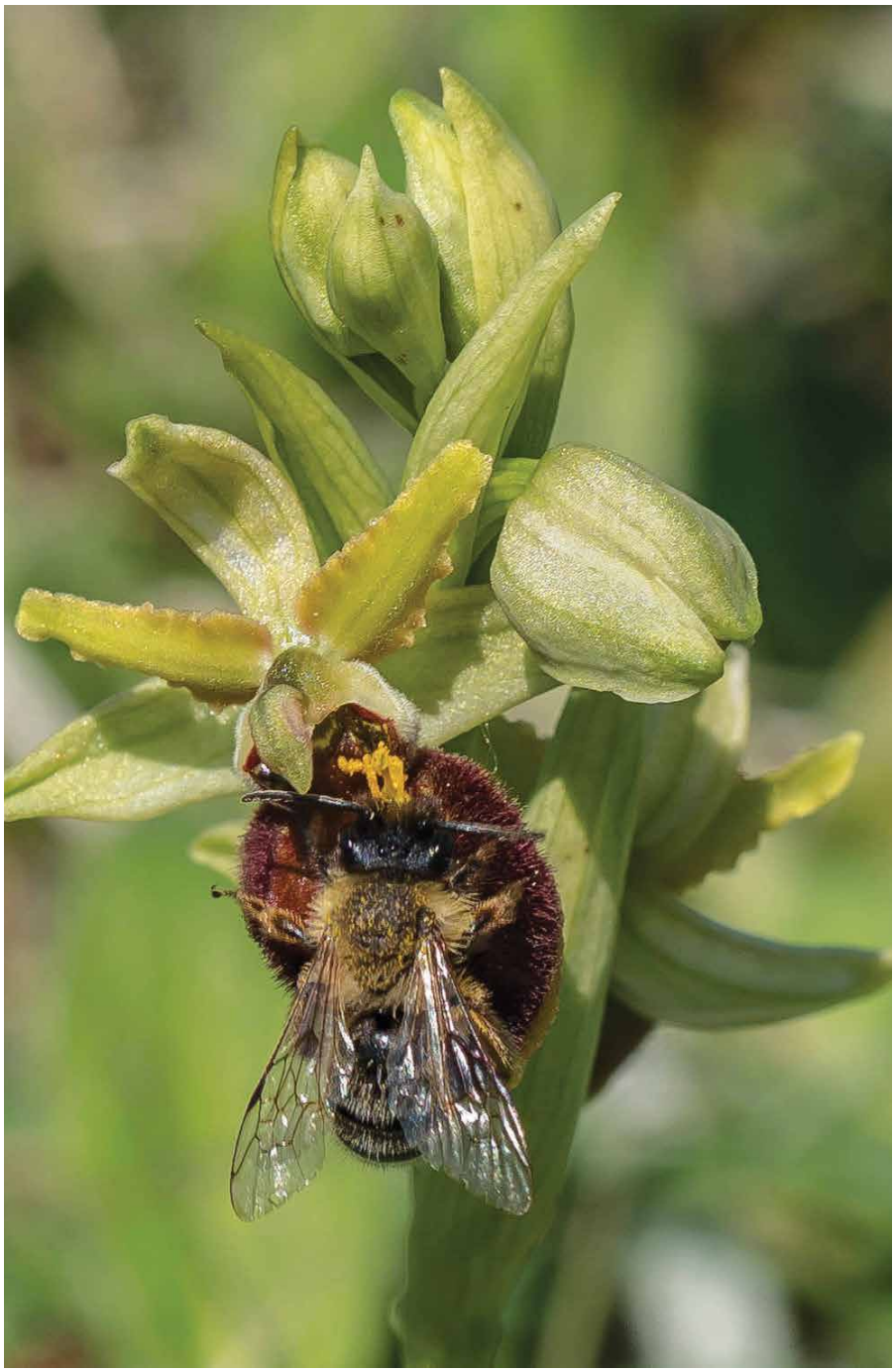

चित्र-5 : एक अर्ली स्पाइडर ऑर्किड (Ophrys sphegodes) को परागित करती एक खनन मधुमक्खी (माइनिंग बी Andrena nigroaenea)।

Credits: Keith Wilson. URL: https://www.flickr.com/photos/wislonhk/27042427467/in/photostream/. License: CC-BY-NC.

पढ़ाने के गुर

परागणकर्ता का अनुमान लगाएँ : बाहर की सैर पर जाएँ और तमाम फूलों को ग़ौर से देखें। विद्यार्थियों को अनुमान लगाने दें कि किस प्रकार के परागणकर्ता इन फूलों के प्रति आकर्षित होते हैं (मसलन, क्या वे रात में खिलने वाले हैं? क्या वे कीड़ों या पक्षियों की साइज़ के हैं?)। अब इंटरनेट पर फूलों और उनके परागणकर्ताओं को पहचानें।

सुगंधशाला : फूलों से अनेक सुगंधित तेलों के नमूने प्राप्त करें। अपने विद्यार्थियों को अनुमान लगाने दें कि वे सुगंधें किन फूलों की हैं। कौन-सी सुगंधें मिलती-जुलती हैं और कौन-सी अलग-अलग हैं? क्या पुष्प जैविकी के कारण कुछ फूलों की ख़ुशबुएँ एक-सरीखी होती हैं – उदाहरण के लिए, क्या उनके परागणकर्ता एक समान हैं (क्या वे एक ही क्षेत्र में दिन के एक ही समय पर खिलते हैं)? यदि सम्भव हो तो, असल फूलों पर अपनी अटकलों / परिकल्पनाओं को परखें!

आओ एक फूल बनाएँ : अपना एक नकली फूल प्रयोग करें! काग़ज़, क्रेयॉन्स या पेंसिलें, और टूथपिक्स लेकर कृत्रिम फूल बनाएँ और सुबह के वक़्त उनका परीक्षण करें। क्या आपके बनाए ये जाली फूल परागणकर्ताओं को आने के लिए लुभा सके? किसी वास्तविक फूल के सुगंधित तेल की एक बूँद बुरकें और देखें कि क्या इससे आपके इस बनावटी फूल की तरफ भौंरों का आकर्षण बढ़ता है? क्या आप सफल हुए? क्यों या क्यों नहीं?

परागणकर्ताओं का महत्त्व : विद्यार्थियों को FAO.org जैसी प्रतिष्ठित वेबसाइटों पर जाकर हमारी फ़सलों के लिए परागणकर्ताओं के महत्त्व सम्बन्धी अनुसन्धान करने को कहें। क्या वे इस बात का अनुमान लगा सकते हैं कि कौन-से फल व सब्ज़ियाँ जन्तु परागणकर्ताओं पर 100% निर्भर रहते हैं। इनमें से कितनी फ़सलें भारत में होती हैं?

चित्र-6 : वनस्पति वाष्पशील पदार्थों के ठोस-अवस्था निष्कर्षण के उदाहरण।

(क) पेंटास लैंसिओलेटा के पुष्पक्रम से पॉलीडाइमिथाइलसाइलोक्सेन (पीडीएमएस) ट्यूब्स के द्वारा वाष्पशील पदार्थों का ठोस-अवस्था निष्कर्षण

(ख) *हेडीकियम* (गुल बकावली) प्रजाति के पुष्पक्रम में वाष्पशीलों का ठोस-अवस्था सूक्ष्म-निष्कर्षण

Credits: V. S. Pragadheesh. License: CC-BY-NC.

आकर्षित होते हैं। रात में खिलने वाले फूलों की ख़ुशबुएँ लाइनेलूल, नेरोलिडॉल, कुछ सुगंधी एस्टर्स और नाइट्रोजनी इण्डोल व ऑक्ज़ाइम्स जैसे रसायनों से बनी होती हैं। इन रसायनों को एक सामूहिक नाम दिया गया है – 'श्वेत पुष्प-घ्राण छवि'।[6]

कूटमैथुन

अपने परागणकर्ताओं को लुभाने की धुन में फूल कभी-कभी हदें पार कर जाते हैं। परागण सुनिश्चित करने का एक तरीक़ा है एक विशिष्ट रिश्ता विकसित करना ताकि केवल एक ही प्रजाति के परागणकर्ता आकर्षित हों जिससे यह सम्भावना बढ़ जाएगी कि वह परागणकर्ता सिर्फ़ आपकी ही प्रजाति के पास आएगा। फूलों द्वारा अपनाया जाने वाला एक चतुर तरीक़ा है कि फूल ऐसा स्वांग करे कि वह स्वयं एक परागणकर्ता

चित्र-7 : नकली ख़ुशबू वाले काग़ज़ी फूल के पास आता एक कीड़ा।
Credits: Shravathi Krishna. License: CC-BY-NC.

है! *ओफ़्रीज़ स्फेगोड्स* जैसे कुछ ऑर्किड *एंड्रीना निग्रोएनिया* भ्रमर प्रजाति की मादाओं के रूप और उनके वाष्पशील फेरोमोन्स की नकल करते हैं ताकि इस प्रजाति के नरों को अपनी ओर आकर्षित कर अपने पराग का स्थानान्तरण करवा सकें। इस प्रक्रिया को कूटमैथुन (स्यूडोकॉप्युलेशन) कहते हैं, जिसमें नर भ्रमर फूल को मादा भ्रमर समझ बैठता है, (**चित्र-5**)। मज़े की बात यह है कि परागण के बाद फूल की ख़ुशबू बदल जाती है –फार्सेनिल हेक्सानोएट नामक रसायन की सान्द्रता बढ़ जाती है और नर भ्रमरों की और मुलाकातों को निषिद्ध करती है। चूँकि फूल की गंध का जैव-संश्लेषण एक महँगा उपक्रम होता है, *ऑर्फिस* ऑर्किड जैसे पौधे इन रासायनिक गंधों का समझदारी से इस्तेमाल करते हुए पहले से ही परागित फूलों के प्रति कीटों के आकर्षण को कम कर अधिकतम परागण हासिल करते हैं।

फूल-सुगंधों का अध्ययन, फूलों से निकलने वाले गैसीय यौगिकों को इकट्ठाकर प्रयोगशाला में उनका विश्लेषण करके किया जाता है। वाष्पशील पदार्थों को पकड़ने की अनेक तकनीकें मौजूद हैं। पुष्पीय गंधों को पौधे के इर्द-गिर्द की हवा में से इकट्ठा किया जा सकता है; यह प्रक्रिया 'हेडस्पेस कलेक्शन' कहलाती है। इन्हें इकट्ठा करने का दूसरा तरीक़ा है – विलायकों का इस्तेमाल कर सीधे-सीधे पुष्पीय ऊतकों में से यौगिक निचोड़ लेना, ठीक वैसे ही जैसे हम चाय बनाते हैं। पौधों के वाष्पशील पदार्थों को चारकोल या बहुलकों जैसी सोखने वाली सतहों पर भी सोखा जा सकता है (**चित्र-6**)। इस प्रक्रिया को सॉलिड-फेज़ एक्स्ट्रैक्शन कहते हैं। सॉलिड-फेज़ एक्स्ट्रैक्शन की मदद से पुष्पीय वाष्पशील पदार्थों का विश्लेषण करने के लिए, उन्हें या तो घोलकों या ऊष्मा का इस्तेमाल कर अवशोषी सतह से अलग करके प्रभाजन प्रक्रिया के द्वारा मिश्रण से पृथक करना होता है। इकट्ठा करने के बाद, गैस क्रोमेटोग्राफ़ी तकनीक के द्वारा एक-एक पुष्प गंध यौगिक को अलग-अलग किया जाता है और मास स्पेक्ट्रोमीट्री जैसी तकनीकों की मदद से उनकी पहचान की जाती है।

प्रकृति में मौजूद पुष्पीय वाष्पशील पदार्थों का कामकाज समझने के लिए हम असली फूलों के रंगों, आकारों और ख़ुशबुओं को मिलाकर डमी फूल या 'पुष्पीय प्रलोभन' बनाकर देख सकते हैं कि उनके प्रति परागणकर्ताओं की प्रतिक्रियाएँ क्या होती हैं (**चित्र-7**)। ये कृत्रिम पुष्पीय प्रलोभन एक वास्तविक फूल की नक़ल कर सकते हैं - उसकी गंध के साथ या उसकी गंध के बिना, उससे अलहदा रंग में या फूल-ख़ुशबुओं की एकदम अलहदा बनावट में। वैज्ञानिक बिरादरी इन प्रलोभन का इस्तेमाल यह जाँचने के लिए कर सकती है कि विभिन्न पारिस्थितिकियों में ये अलग-अलग रंग, आकार और ख़ुशबुएँ परागणकर्ताओं की पसन्द को किस तरह प्रभावित करते हैं।

निष्कर्ष

"ख़ुशबुएँ फूलों की भावनाएँ होती हैं।"
– हाइनरिख हाइन

अगली बार जब आप किसी बाग में घूमें तो सिर्फ़ फूलों की ख़ूबसूरत ख़ुशबुओं का आनन्द ही न उठाएँ। एक पल को ठिठककर ज़रा सोचें कि किस तरह ये पौधे अपनी दिलकश ख़ुशबुओं की ज़ुबानी अपनी पारिस्थितिकी से बातें करते हैं। और यह कुदरत की ज़ुबां है। आपके आँगन के – हर पौधे, हर पशु, और हर जीवाणु में, जहाँ भी आप देखें, हर पल हज़ारों रासायनिक अन्त:क्रियाएँ हो रही हैं। अगर आपके कोई सवाल हैं या इन अन्त:क्रियाओं को लेकर आपके कुछ अनुभव हैं तो कृपया हमें लिखें।

शब्दावली

पारिस्थितिकी तंत्र : किसी एक क्षेत्र विशेष में जीवित प्राणियों के समुदाय व निर्जीव घटकों के बीच अन्त:क्रियाएँ।

टर्पेनॉइड्स : पाँच कार्बन की इकाइयों से बने कार्बनिक यौगिकों का एक वर्ग, जिनमें कार्बन इकाइयाँ सिर-से-पूँछ की शैली में आपस में जुड़ी होती हैं।

फ्लैवोनॉइड्स : कार्बनिक यौगिकों का एक समूह जिसमें दो फिनाइल समूह कार्बन व ऑक्सीजन परमाणुओं की एक वलय से जुड़े होते हैं। पौधों में मौजूद ज़्यादातर रंजक इसी समूह के होते हैं।

स्टेरॉइड्स : कार्बनिक यौगिकों का एक और समूह जिसमें छह सदस्यीय कार्बन की तीन वलय और पाँच सदस्यीय कार्बन वलय एक विशिष्ट विन्यास में परस्पर बँधे होते हैं।

ऍल्कलॉइड्स : नाइट्रोजनी कार्बनिक यौगिकों का समूह जिसके मनुष्यों पर उल्लेखनीय शारीरिक प्रभाव पड़ते हैं।

फिनाइलप्रोपेनॉइड्स : कार्बनिक यौगिकों का वह वर्ग जिसमें एक फिनाइल समूह एक प्रोपेन (तीन कार्बन) पार्श्व शृंखला से जुड़ा रहता है। फिनाइलप्रोपेनॉइड्स ऍमीनो ऍसिड्स फिनाइल-ऍलेनिन और टाइरोसिन से व्युत्पन्न होते हैं।

वसा अम्ल व्युत्पन्न : कोशिका भित्तियों में मौजूद वसा अम्लों से व्युत्पन्न वाष्पशील कार्बनिक यौगिक जो कोशिका-भित्ति की टूट-फूट के दौरान निकलते हैं।

मकरन्द : मधुकोष (मकरन्द ग्रन्थियों में बनने वाला चीनी-युक्त घोल। पौधे यह तरल पदार्थ फूलों में से स्रावित करते हैं ताकि परागणकर्ता आकर्षित हों, जबकि तनों व पत्तियों में यह द्रव चींटियों आदि को आकर्षित करने और शाकभक्षियों को दूर रखने के लिए स्रावित किया जाता है।)

सूक्ष्म जीव : बैक्टीरिया, कवक आदि जैसे एक-कोशिकीय या बहु-कोशिकीय जीव जो इतने छोटे होते हैं कि उन्हें नंगी आँख से देखा नहीं जा सकता।

वाष्पशीलता : पदार्थ की हवा में उड़ जाने की प्रवृत्ति।

लिनेलूल : अधिकांश पौध-वाष्पशीलों में मौजूद टर्पेनॉइड अल्कोहल।

ऑर्किड : *ऑर्किडेसी* परिवार के वे सदस्य जिनके फूल अकसर रंगबिरंगे और ख़ुशबूदार होते हैं।

फेरोमोन : जानवरों द्वारा अपनी ही प्रजाति के अन्य सदस्य के लिए *संकेत* के बतौर छोड़े जाने वाले रासायनिक यौगिक।

निष्कर्षण : विलायकों का इस्तेमाल कर किसी सामग्री (मुख्यत: जैविक) से रासायनिक यौगिकों को अलग करने की प्रक्रिया।

विलायक घोल : किसी पदार्थ (विलेय) की प्रकृति बदले बिना उसे घोलने वाला एक द्रव, ठोस या गैस।

गैस क्रोमैटोग्राफ़ी : एक अचल तरल (या ठोस) प्रावस्था और एक चल गैसीय प्रावस्था के बीच विभाजन करते हुए गैसीय यौगिकों को अलग-अलग करने की एक तकनीक।

मास स्पेक्ट्रोमीट्री : किसी यौगिक की पहचान के लिए अपनाई जाने वाली एक विश्लेषणात्मक तकनीक जो एक रासायनिक यौगिक को आयनित कर उसके आयनों को पृथक करती है और फिर उनका मापन कर एक रासायनिक फिंगरप्रिंट निकालती है।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Flowers for sale in India, McKay Savage, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/mckaysavage/2279208080. License: CC-BY.

References

1. Winfree, R. (2010). The conservation and restoration of wild bees. Annals of the New York Academy of Sciences, 1195: 169-197.
2. Pichersky, E. & Dudareva, N. (2007). Scent engineering: toward the goal of controlling how flowers smell. Trends in Biotechnology, 25 (3): 105-110.
3. Farré-Armengol, G., Filella, I. & Llusia, J. & Peñuelas, J. (2013). Floral volatile organic compounds: Between attraction and deterrence of visitors under global change. Perspectives in Plant Ecology, Evolution and Systematics 15: 56-67.
4. Knauer, A. C., Bakhtiari, M. & Schiestl, F. P. (2018). Crab spiders impact floral-signal evolution indirectly through removal of florivores. Nature Communications 9: 1367. DOI: https://doi.org/10.1038/s41467-018-03792-x.
5. Wikipedia contributors. (2018, August 19). Vanilla. In *Wikipedia, The Free Encyclopedia*. Retrieved 16:17, August 23, 2018, from https://en.wikipedia.org/w/index.php?title=Vanilla&oldid=855636219.
6. Raguso, R. A. & Pichersky, E. (1999). A day in the life of a linalool molecule: chemical communication in a plant-pollinator system. Part 1: Linalool biosynthesis in flowering plants. Plant Species Biology, 14: 95-120.
7. Figueiredo, A. C., Barroso, J. G., Pedro, L. G. & Scheffer, J. J. C (2008). Factors affecting volatile and essential oil production in plants. Flavour and Fragrance, Journal 23: 213–226.
8. Larue, A. C., Raguso, R. A. & Junker, R. R. (2016). Experimental manipulation of floral scent bouquets restructures flower–visitor interactions in the field. Journal of Animal Ecology, 85(2): 396-408.
9. Nordström, K. et al. (2017). *In situ* modeling of multimodal floral cues attracting wild pollinators across environments. Proceedings of the National Academy of Sciences, 114 (50): 13218-13223.

वी.एस. प्रगाधीश एक प्राकृतिक उत्पाद वैश्लेषिक रसायनज्ञ हैं जिन्हें वानस्पतिक वाष्पशील पदार्थों के पारिस्थितिकीय प्रकार्यों ने इतना लुभाया कि वे रासायनिक पारिस्थितिकी की ओर मुड़ चले। एक पोस्ट-डॉक्टरल शोधार्थी के बतौर वे बेंगलूरु की 'नैचुरलिस्ट'-प्रेरित, एनसीबीएस-टीआइएफआर प्रयोगशाला से सम्बद्ध रहे हैं। इन दिनों वे कोलकाता की सीएसआइआर-आइआइसीबी प्रयोगशाला में एक वैज्ञानिक के बतौर कार्यरत हैं। उनसे vspragadheesh@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

शैनन ओल्सन एक एसोसिएट प्रोफ़ेसर के बतौर, टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ़ फंडामेंटल रिसर्च के नेशनल सेंटर फॉर बायोलॉजिकल साइंसेस के 'नैचुरलिस्ट'-प्रेरित रासायनिक पारिस्थितिकी समूह की प्रमुख हैं। फुलब्राइट स्कॉलर व रामानुजन फेलो के बतौर डॉ. ओल्सन भारत में रासायनिक पारिस्थितिकी के काम को आगे बढ़ाने वाले उपक्रम की सदस्य हैं। एक वैज्ञानिक होने के नाते उन्हें सबसे अच्छा यह लगता है कि आपको हर दिन कुछ नया अवलोकन करने और सीखने का अवसर मिलता है और यह सम्भावना रहती है कि ऐसी कोई नई चीज़ इस दुनिया पर सकारात्मक असर डालेगी। उनसे shannon@nice.ncbs.res.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी

आपके आँगन में जीवन
मनमोहक सुगन्ध वाले कुछ फूल

वी. एस. प्रागधीश और शैनन ऑल्सन

यहाँ हम आमतौर पर दिखने वाले कुछ ऐसे फूलों की गन्ध की बात कर रहे हैं, जो हमें अच्छी लगती हैं। आप इनमें से कितने फूलों की गन्ध पहचानते हैं?

नींबू के फूलों पर मधुमक्खी

सिट्रसी गन्ध

यह सन्तरे या नींबू जैसी गन्ध होती है, जो β-मायर्सीन, लिमोनीन, लिनालूल और सिट्रल्स जैसे यौगिकों के संयोजन से उत्पन्न होती है। सिट्रोनेला, लेमनग्रास और बर्गमोट के फूलों में यह सुगन्ध पाई जाती है।

रासायनिक घटक

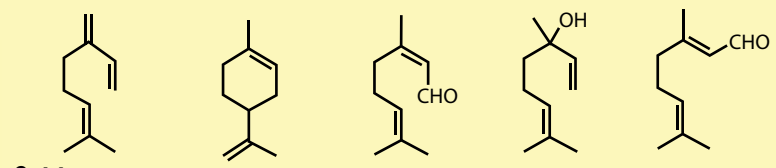

इलंग-इलंग का फूल

फलों जैसी गन्ध

मीठी, सुखद और तीव्र गन्ध जो एल्कोहल, एस्टर और लैक्टोन जैसे यौगिकों के कारण उत्पन्न होती हैं। यह कभी-कभी लम्बी दूरी के संकेतक के रूप में काम करती हैं, जिससे फूलों को दूर से पहचानने में मदद मिलती है।

रासायनिक घटक

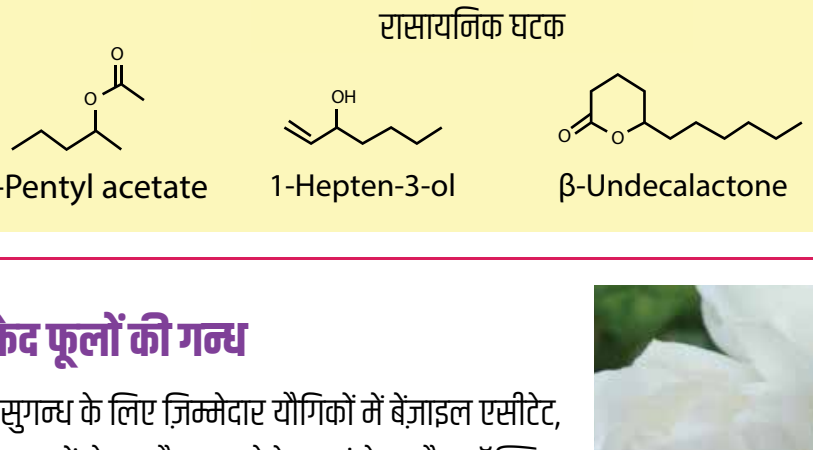

रोज़मेरी के वायवीय (arial) भाग और फूल

कपूरी गन्ध

कपूर, 1,8-सिनेओल और पाइनिन जैसे यौगिकों से उत्पन्न होने वाली तीखी और ठण्डी सुगन्ध। यह रोज़मेरी के फूलों, पत्तियों और तनों में पाई जाती है।

रासायनिक घटक

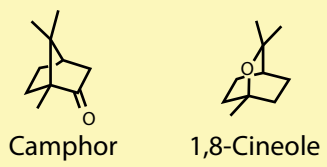

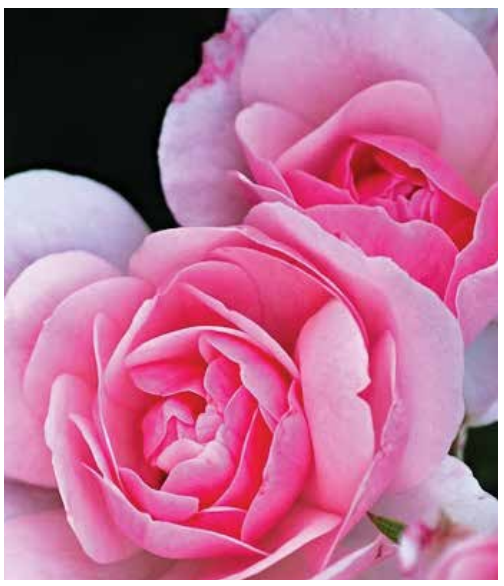

गुलाब का फूल

गुलाब

रोज़ ऑक्साइड, β-डामासीनोन, फिनाइल एथेनॉल, जेरानियोल, नेरोल और सिट्रोनेलोल जैसे रासायनिक यौगिकों से उत्पन्न एक अनूठी गन्ध। जेरानियम (Pelargonium graveolens) के पत्ते और तने भी इन यौगिकों का उत्पादन करते हैं। ऐतिहासिक रूप से यह इत्र, खाद्य पदार्थों और समारोहों में इस्तेमाल की जाने वाले सबसे पसन्दीदा गन्धों में से एक है। गुलाब की पँखुड़ियों से बने इत्र (अत्तर) को सुगन्ध उद्योग में बहुत महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

रासायनिक घटक

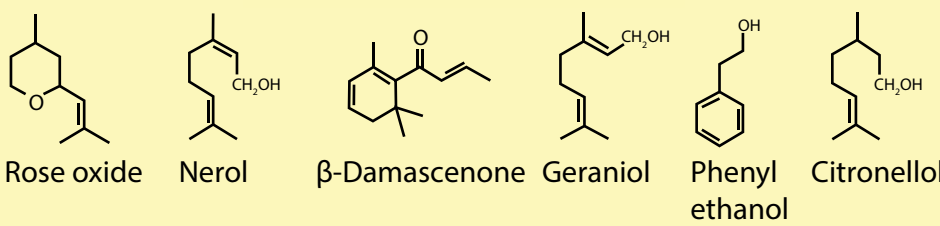

सफ़ेद फूलों की गन्ध

इस सुगन्ध के लिए ज़िम्मेदार यौगिकों में बेंज़ाइल एसीटेट, मिथाइल बेंजोएट और नाइट्रोजेनस इंडोल और ऑक्सिम जैसे सुगन्धित ईस्टर के साथ लिनालूल शामिल हैं। यह सुगन्ध मुख्यत: चमेली, ईवनिंग प्रिमरोज़ आदि जैसे रात में खिलने वाले सफ़ेद फूलों में पाई जाती है, जो रात में निकलने वाले परागणकर्ताओं को आकर्षित करते हैं।

चमेली के फूल पर बैठा एक पतंगा

रासायनिक घटक

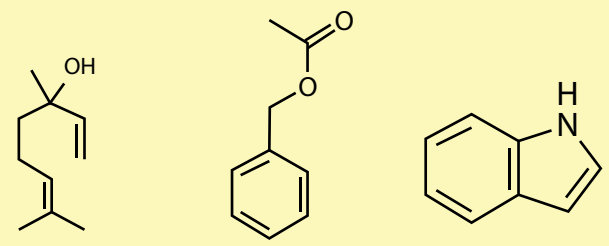

वी. एस. प्रागधीश सीएसआईआर-आईआईसीबी, कोलकाता में वैज्ञानिक हैं। उनसे vspragadheesh@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

शैनन ओल्सन एसोसिएट प्रोफ़ेसर हैं। वह टाटा मूलभूत अनुसन्धान संस्थान के राष्ट्रीय जीव विज्ञान केन्द्र में नेचुरलिस्ट इन्सपायर्ड केमिकल इकॉलोजी ग्रुप का नेतृत्व कर रही हैं। उनसे shannon@nice.ncbs.res.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** कविता तिवारी

Azim Premji University

i wonder... Rediscovering school science

जीवन की कीमियागिरी

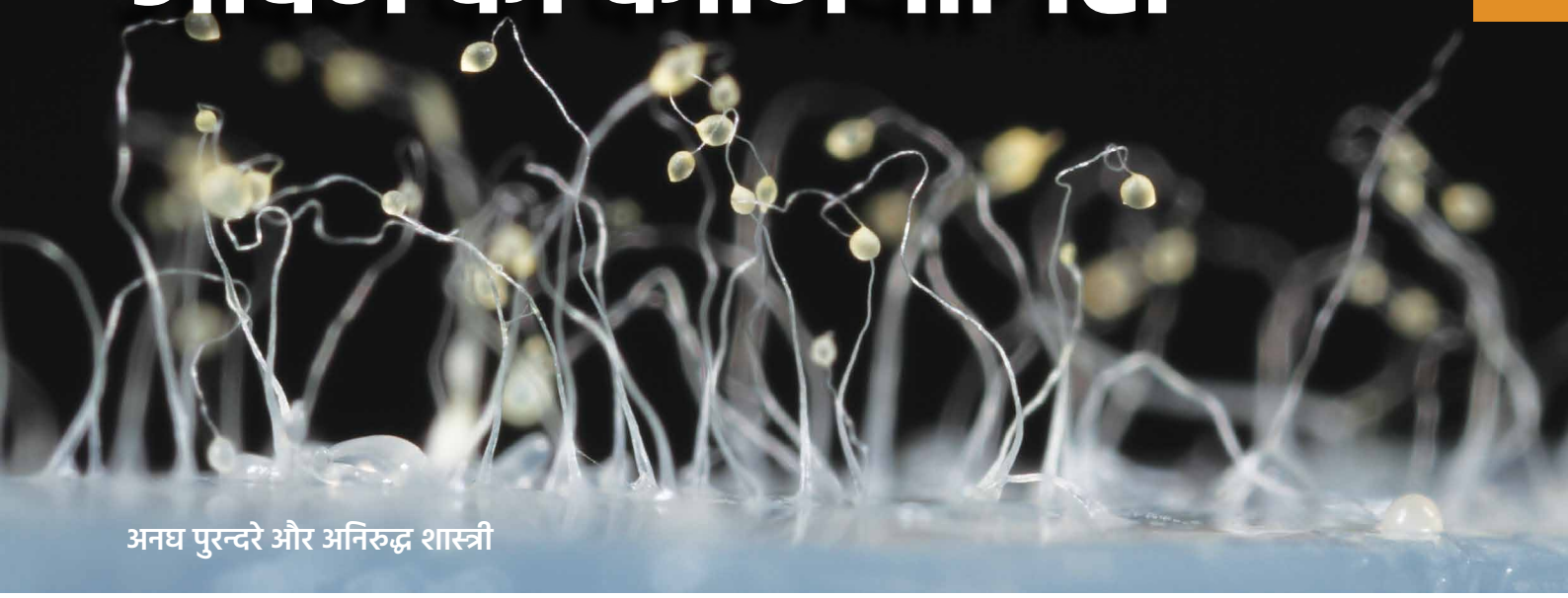

अनघ पुरन्दरे और अनिरुद्ध शास्त्री

जीवित प्राणियों का अध्ययन, उनकी संरचना के विभिन्न स्तरों – अणुओं से लेकर पारिस्थितिकी तंत्रों (ईकोसिस्टम) तक किया जा सकता है। रसायनशास्त्र को लेकर हमारी मौजूदा समझ इन विभिन्न स्तरों पर जीवित प्राणियों सम्बन्धी हमारी समझ पर कुछ प्रकाश डालती है। यह लेख रसायन के लेंस के ज़रिए हमें 'जीवन' के कुछ दिलचस्प पहलुओं की एक झलक दिखलाता है।

कल्पना कीजिए, आप एक सड़क पर चले जा रहे हैं और आपकी नज़र एक चट्टान पर बैठे एक कीड़े पर पड़ती है। चट्टान और कीड़ा, दोनों ही पदार्थ बुनियादी रूप से पदार्थ से बने हैं। तिस पर भी, वे दोनों एक-दूसरे से अलग हैं। हो सकता है कि चट्टान प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले सभी 92 तत्वों से बनी हो, जबकि उस पर बैठा कीड़ा शायद ऐसे महज़ 30 तत्वों से ही बना हो। अब कौन-सी चीज़ भला इन 30 तत्वों को ख़ास बनाती है? क्या किसी कीड़े की कीमियागिरी उसे एक चट्टान से इतना अलग बनाती है?

पार्थिव जीवन का आधार कार्बन है

हालाँकि यह सुझाया गया है कि एलियन (अन्य ग्रहों के) जीवों का आधार शायद सिलिकॉन हो, लेकिन पृथ्वी के तमाम जीव कार्बन आधारित हैं।

सिलिकॉन और कार्बन दोनों में चार-चार संयोजी-इलेक्ट्रॉन होते हैं और आवर्त सारणी में सिलिकॉन का स्थान कार्बन के ठीक नीचे है। लेकिन, Si-Si बन्धनों की तुलना में C-C बन्धन ज़्यादा मज़बूत होते हैं और पानी में ज़्यादा टिकाऊ रहते हैं। इसके अलावा, पूरी तरह से ऑक्सीकृत किए जाने पर कार्बन एक गैस यानी कार्बन डाईऑक्साइड बनाता है, जबकि सिलिकॉन एक ठोस बनाता है – सिलिकॉन डाईऑक्साइड। और कोई गैस (कार्बन डाईऑक्साइड) – विसरण व री-साइक्लिंग – के लिए किसी ठोस के मुक़ाबले (कार्बन डाइऑक्साइड) ज़्यादा उपयुक्त होती है। ये वे प्रक्रियाएँ हैं जिनके बग़ैर जीवन निभ नहीं सकता।

सोचने के लिए सवाल : सिलिकॉन-सिलिकॉन बन्धनों (Si-Si बॉण्ड्स) की तुलना में कार्बन-कार्बन बन्धन (C-C बॉण्ड्स) क्यों बहुत मज़बूत होते हैं? (सुराग़ – आवर्त सारणी देखें)

डाईहाइड्रोजन मोनोऑक्साइड (H_2O) जीवन को बनाए रखता है

रासायनिक गुणों के एक अद्वितीय संयोजन के चलते पृथ्वी पर जीवन बनाए रखने में पानी की अपरिहार्य भूमिका बन जाती है। किसी कोशिका में होने वाली लाखों ज़रूरी जीवन-समर्थक अभिक्रियाओं को चलायमान रखने के लिए अणुओं को एक-दूसरे से टकराना होता है।

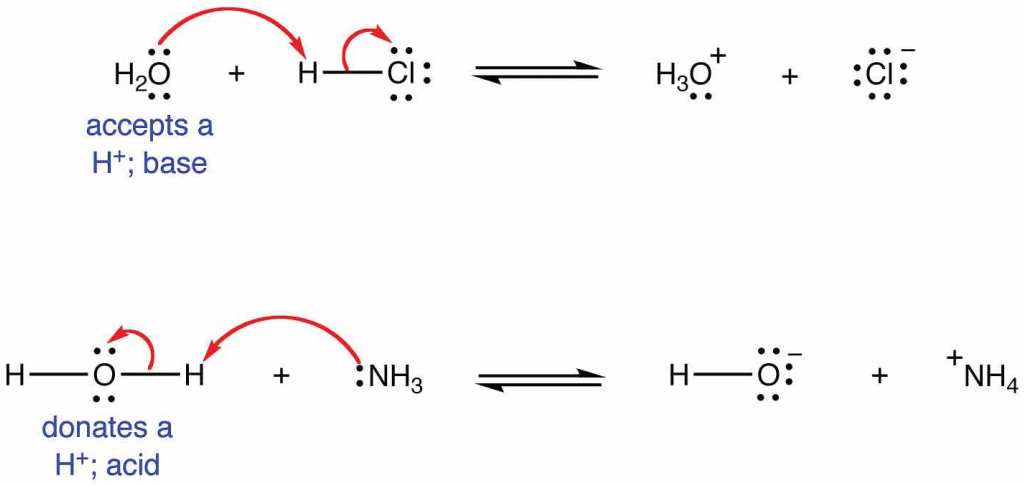

चित्र-1 : पानी में, एक अम्ल और एक क्षार, दोनों की तरह क्रिया करने की क्षमता होती है।
Credits: Adapted from Gamini Gunawardena, OChemPal. URL: http://www.ochempal.org/index.php/alphabetical/a-b/amphoteric/.

सोचने के लिए सवाल : रासायनिक अभिक्रियाओं के लिए तरल पदार्थ सबसे उपयुक्त माध्यम क्यों हैं?

किसी ठोस या गैस माध्यम की तुलना में एक द्रव-माध्यम में ये आणविक-भिड़न्तें अधिक सम्भाव्य होती हैं। पानी के क्वथनांक और हिमांक के बीच बहुत बड़ा अन्तर (~100 °C) होने के चलते पिछले 350 करोड़ सालों के दौरान इस ग्रह पर विविध तापमानों पर पृथ्वी पर मौजूद अधिकांश पानी द्रवित अवस्था में रहा है। ब्रह्माण्ड में सर्वाधिक परिमाण में मौजूद दो तत्वों – हाइड्रोजन और ऑक्सीजन – से बना होने के चलते इस पूरी अवधि में पानी बहुतायत से मौजूद रहा है।

पानी बड़ी संख्या में विलेयों को घोल लेता है। इसके अलावा पानी, एक अम्ल और एक क्षार, दोनों की तरह काम करता है – किसी ज़्यादा प्रबल अम्ल की उपस्थिति में एक प्रोटॉन लेकर और एक अधिक प्रबल क्षार की मौजूदगी में एक इलेक्ट्रॉन देकर (**देखें चित्र-1**)।

गुणधर्मों के इस अनुपम संयोजन के चलते, जैव-रासायनिक अभिक्रियाओं के लिए पानी एक आदर्श माध्यम बन जाता है।

जीवन की कीमियागिरी पर तापमान की बन्दिश

जीवन प्रक्रियाएँ दो-या-दो से ज़्यादा कोशिकीय अणुओं की अभिक्रियाओं पर निर्भर करती हैं। इन अभिक्रियाओं के होने के लिए यह ज़रूरी है कि ये अणु एक-दूसरे से टकराएँ। कोशिका की अफ़रा-तफ़री से भरी आन्तरिक दुनिया में अणु हर समय यहाँ-वहाँ तफ़रीह करते रहते हैं। अणुओं की यह तफ़रीह और टकराहटें उस गतिज ऊर्जा के परिमाण पर निर्भर करती हैं जो उन्होंने अपने परिवेश से ली है। ऊर्जा का यह परिमाण प्राणी के परिवेश के तापमान पर निर्भर करता है। साथ ही, यह इस बात पर भी निर्भर करता है कि कोशिका के दिए हुए आयतन में मौजूद अणुओं की संख्या कितनी है, जो उनकी कोशिकीय सान्द्रता पर निर्भर करती है। इस प्रकार, प्रत्येक जैव-रासायनिक अभिक्रिया, तापमानों और सान्द्रताओं की एक निश्चित रेंज में होती है।

पता करें : कुछ जीव (जिन्हें एक्सट्रीमोफाइल्स के नाम से जाना जाता है) पर्यावरण की चरम परिस्थितियों में कैसे रहते हैं?

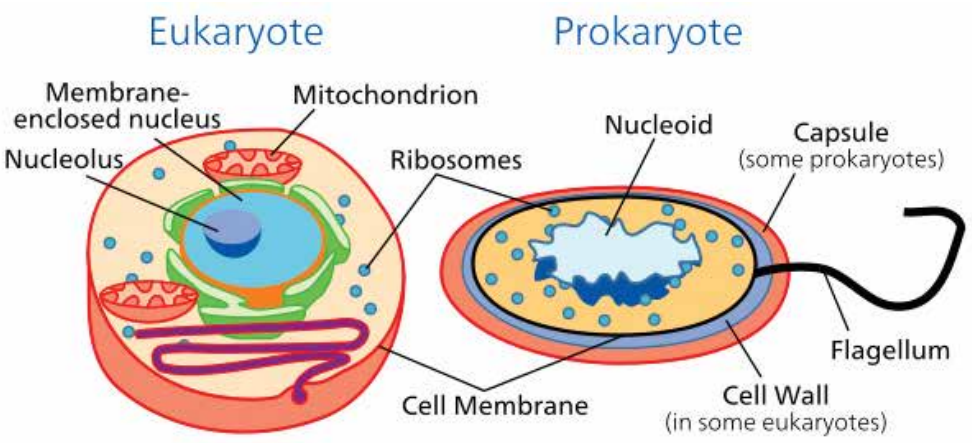

चित्र-2 : केन्द्रकयुक्त कोशिकाओं में झिल्ली से घिरे कोशिकांग जैव-अणुओं की प्रभावी सान्द्रताएँ बढ़ाते हैं।
Credits: Owned by Science Primer (National Center for Biotechnology Information), vectorized by Mortadelo2005 and uploaded on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Celltypes.svg.

यद्यपि सभी जीवों पर तापमानों की ये बन्दिशें लागू होती हैं, लेकिन कोशिकाओं ने अणुओं की प्रभावी सान्द्रताएँ बढ़ाने के कुछ तरीक़े विकसित कर लिए हैं। उदाहरण के लिए, यूकैरिऑटिक (केन्द्रकयुक्त) कोशिकाएँ झिल्ली-आधारित कोशिका-अंगक विकसित कर यह उपलब्धि अर्जित करती हैं (**देखें चित्र-2**)।

जीवन की जानकारी एक रासायनिक क्रम के रूप में संग्रहित है

हालाँकि प्रोटीन ही ज़्यादातर कोशिकीय कार्यों को अंजाम देते हैं, लेकिन कौन-से प्रोटीन कब बनेंगे, ये सारी हिदायतें डीएनए (डीऑक्सीराइबोन्युक्लिक ऍसिड) में संग्रहित होती हैं।

हरेक डीएनए अणु, न्यूक्लिओटाइड्स नाम के कार्बनिक अणुओं के दो रेशों से मिलकर बनता है। उनके नाइट्रोजनी क्षार की प्रकृति

पता करें : किस तरह से पानी का घनत्व, तापमान के साथ बदलता है। और जीवन प्रक्रियाओं के विकास पर इसका असर क्या होगा?

सोचने के लिए सवाल : रासायनिक अभिक्रियाओं के लिए द्रव सबसे ज़्यादा उपयुक्त माध्यम क्यों होते हैं?

के हिसाब से ये न्यूक्लिओटाइड्स चार क़िस्म के होते हैं – एडिनीन (A), गुआनिन (G), थाइमीन (T) और साइटोसीन (C)। ये दो रेशे सीढ़ी-नुमा हाइड्रोजन आबन्धों द्वारा दोहरी कुण्डली (डबल हेलिक्स) आकार में लिपटे रहते हैं। ये हाइड्रोजन आबन्ध अनुपूरक न्यूक्लिओटाइड्स के नाइट्रोजनी क्षारों के बीच बनते हैं। सो, किसी नियत जगह पर, एक रेशे का एक एडिनीन (A) दूसरे रेशे पर उसी जगह में मात्र थाइमीन (T) के साथ हाइड्रोजन आबन्ध बना सकता है और इसके उलट भी। ठीक इसी प्रकार, एक रेशे का एक गुआनिन (G), दूसरे रेशे में उसी स्थान पर मौजूद साइटसिन (C) के साथ ही हाइड्रोजन आबन्ध बना सकता है और इसके उलट भी (**देखें चित्र-3**)।

डीएनए के प्रत्येक रेशे में न्यूक्लिओटाइड्स का सटीक क्रम तय करता है कि सम्बद्ध कोशिका प्रोटीनों की कौन-सी विशिष्ट क़िस्में बना सकेगी। उसके क्षारों की अनुपूरकता ही सुनिश्चित करती है कि एक ही डीएनए अणु में निहित जानकारी की विश्वसनीय नक़ल दूसरे अणु के रूप में बनेगी। कोशिका-विभाजन के लिहाज़ से यह निहायत ज़रूरी है।

उच्च-ऊर्जा वाले आबन्धन जीवन अभिक्रियाओं का संचालन करते हैं!

सभी कोशिकाओं को ऊर्जा चाहिए रहती है। यह ऊर्जा वे शर्कराओं (मुख्यतः ग्लूकोज़) के ऑक्सीकरण के द्वारा प्राप्त करती हैं। इन अभिक्रियाओं से निकली ऊर्जा एक अणु में संग्रहित होती है जिसे एडिनोसीन ट्राइफ़ॉस्फ़ेट (एटीपी) कहते हैं। सो, एटीपी को कोशिका की ऊर्जा मुद्रा/ करंसी भी कहा जाता है।

प्रत्येक एटीपी अणु में एक नाइट्रोजनी क्षार (एडिनोसीन), एक शर्करा (राइबोस) और तीन फ़ॉस्फ़ेट समूहों वाला एक पुछल्ला होता है। ये तीन फ़ॉस्फ़ेट समूह राइबोस अणु के साथ क्रमशः जुड़कर एएमपी (एडिनोसीन

सोचने के लिए सवाल : आपके हिसाब से डीएनए की दो शृंखलाओं के बीच हाइड्रोजन आबन्ध बनने में ग़लतियाँ रह जाने से क्या होगा?

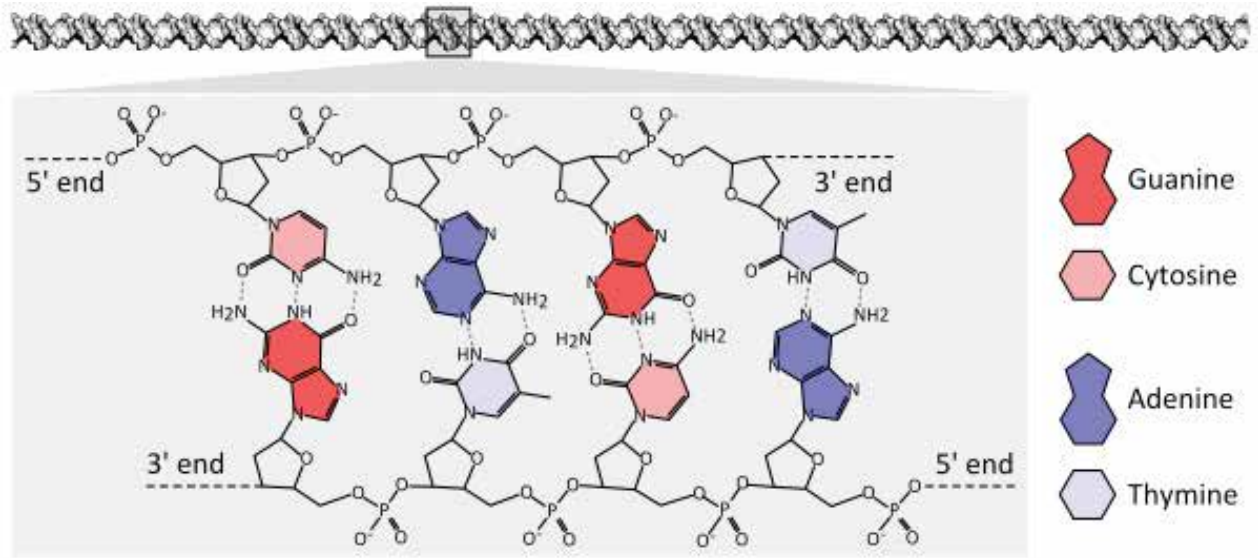

चित्र-3 : डीएनए अणु की संरचना।
Credits: Thomas Shafee, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:DNA_chemical_structure_2.svg. License: CC-BY.

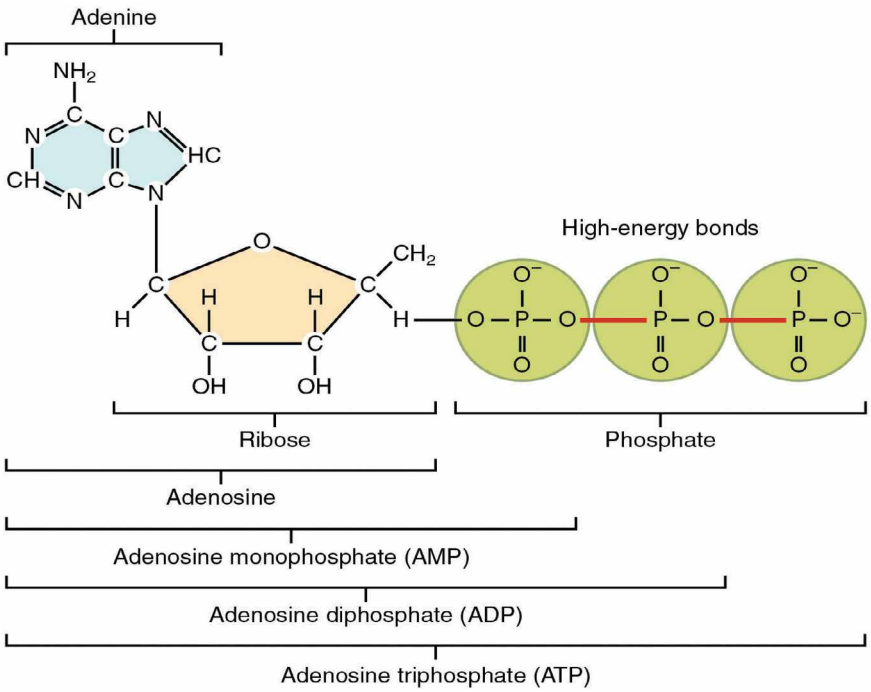

चित्र-4 : एटीपी अणु की संरचना। लाल रेखाएँ इसके दो उच्च-ऊर्जा फ़ॉस्फ़ेट बॉण्ड्स दर्शाती हैं।
Credits: OpenStax College from Anatomy & Physiology, Connexions (http://cnx.org/content/col11496/1.6/), Jun 19, 2013, and uploaded on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:230_Structure_of_Adenosine_Triphosphate_(ATP)-01.jpg. License: CC-BY.

मोनोफ़ॉस्फ़ेट), एडीपी (एडिनोसीन डाईफ़ॉस्फ़ेट) और अन्ततः एटीपी बनाते हैं (**देखें चित्र-4**)।

सोचने के लिए सवाल : एटीपी में मौजूद तीन फ़ॉस्फ़ेट आबन्धों में से केवल दो ही क्यों उच्च–ऊर्जा आबन्ध होते हैं?

शरीर का एक भाग दूसरे के साथ रासायनिक तरीक़े से 'बात करता' है!

किसी जटिल बहु-कोशिकीय जीव का जीवित रहना उसकी विभिन्न कोशिकाओं, ऊतकों और अंगों के परस्पर-तालमेल पर निर्भर करता है। यह तालमेल सम्प्रेषण के ज़रिए अर्जित किया जाता है – और शरीर के विभिन्न हिस्सों के बीच का सारा सम्प्रेषण रसायनों के द्वारा होता है। मसलन, क्या आपने कभी सोचा है कि चॉकलेट का एक टुकड़ा खाते ही आप थोड़ी देर को ही सही इतना ख़ुश-ख़ुश क्यों महसूस करते हैं? चॉकलेटों में ट्रिप्टोफ़ॅन, थिओब्रोमीन और फिनाइलएथिलएलेनीन जैसे रसायन होते हैं। ये रसायन मस्तिष्क में पहुँचकर एंडॉर्फिन्स नामक अणु समूहों के उत्सर्जन को प्रेरित करते हैं। एंडॉर्फिन्स एक तरह के न्यूरोट्रांसमीटर (तंत्रिका-सन्देशवाहक) होते हैं – ऐसे रसायन जो तंत्रिका-कोशिकाओं व शरीर की अन्य कोशिकाओं के बीच सन्देशों के सीधे प्रसारण में मददगार होते हैं। 100 से भी ज़्यादा ऐसे न्यूरोट्रांसमीटरों को पहचाना जा चुका है। वे सब मिलकर, नाना प्रकार के शारीरिक व शरीर-क्रियात्मक क्रियाकलापों को बरक़रार रखते हैं।

वैसे चॉकलेट मतलब ज़हर!

ज़रा ठहरो! फेंको नहीं अभी अपने सारे चॉकलेट। चॉकलेट, कॉफ़ी और चाय क्रमशः इन पौधों से प्राप्त किए जाते हैं – थिओब्रोमा कॅकाओ, कॉफीआ प्रजातियाँ

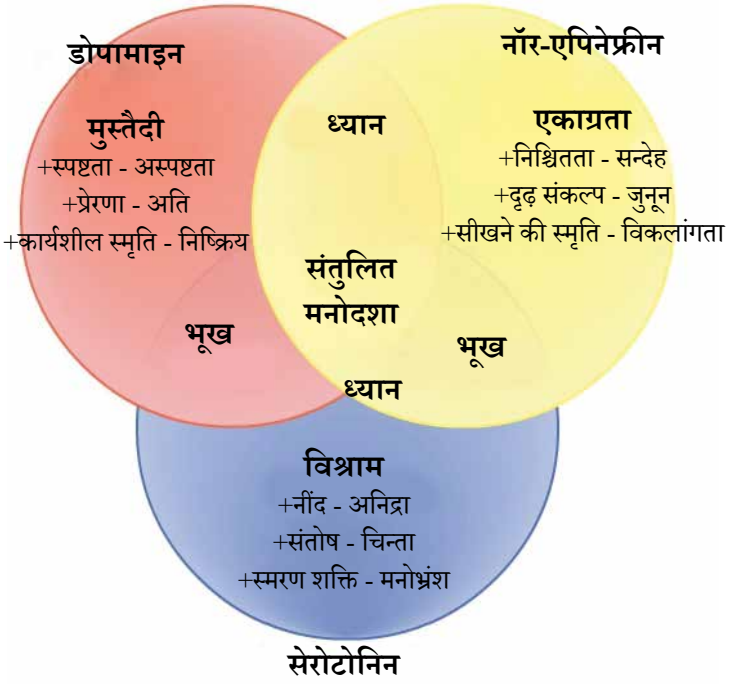

चित्र-5 : डोपामाइन, सेरोटोनिन और नॉर-एपिनेफ्रीन जैसे न्यूरोट्रांसमीटर शारीरिक व शरीर-क्रियात्मक कामकाज बरक़रार रखते हैं।
Credits: Niklis Papageorgio, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Dopamine_Norepinephrine_Serotonin.png. License: CC-0.

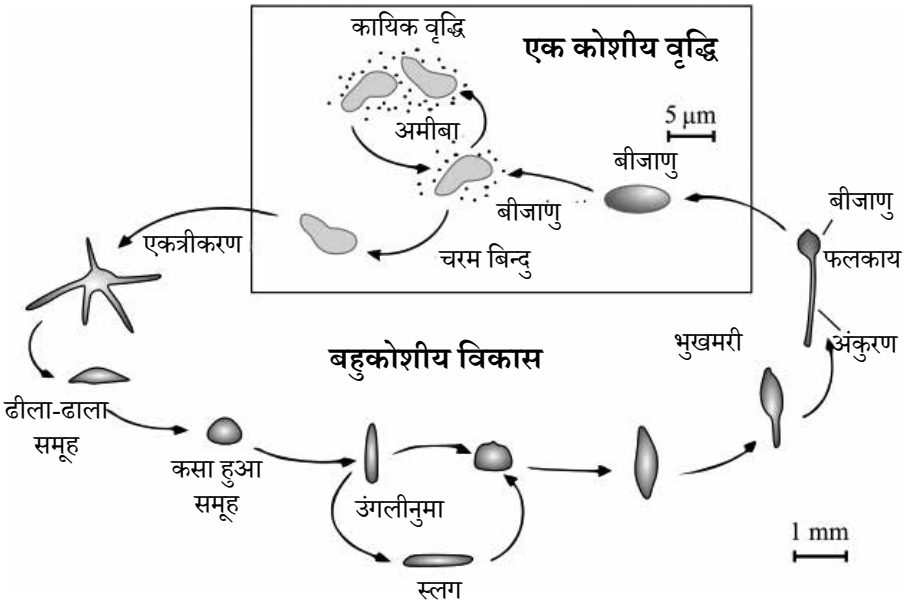

चित्र-6 : डिक्टियोस्टेलियम डिस्कोइडम का जीवन चक्र।

Credits: Drawn by the user Hideshi and converted to SVG by Tijmen Stam and IIVQ on Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Dicty_Life_Cycle_H01.svg. License: GFDL & CC-BY-SA.

और कॅमेलिआ सायनेन्सिस। ये पौधे, थिओब्रोमीन और कैफ़ीन जैसे रसायन पैदा कर, कीट शाकाहारियों को उन्हें खाने से हतोत्साहित करते हैं। ये रसायन कीटों के तंत्रिका तंत्र तथा पेशीय तंत्र को ऐसे प्रतिकूल ढंग से प्रभावित करते हैं कि उनकी भूख कम हो जाती है, उनकी चाल-ढाल गड़बड़ा जाती है, उनकी वृद्धि और प्रजनन-क्रिया आदि बाधित हो जाते हैं।

दिलचस्प बात यह है कि कीट तंत्रिका तंत्र में थिओब्रोमीन व कैफ़ीन से जुड़ने वाले अणुओं (ग्राहियों) की संरचना मानव मस्तिष्क के ग्राहियों की संरचना सरीखी ही होती है। और कीटों से मानवों में तंत्रिका ग्राहियों की रासायनिक संरचनाओं का यह संरक्षण ही मानवों को स्फूर्तिदायकों के बतौर इन कीट 'विषों' का उपभोग करने देता है (**देखें चित्र-5**)। इसमें न केवल प्रसन्नता पर नियंत्रण शामिल है, बल्कि अन्य 'मूड्स' पर भी लगाम कसती है – जैसे कि उदासी, बोरियत और उनींदापन। इनमें से हरेक एहसास का सम्बन्ध मस्तिष्क के कुछ ख़ास हिस्सों में कुछ ख़ास न्यूरोट्रांसमीटरों के उत्सर्जन से होता है।

कुछ मामलों में, विभिन्न ऊतकों या अंगों में सम्प्रेषण अप्रत्यक्ष भी हो सकता है। इस तरह के सन्देशों को ढोने वाले रसायनों को हॉर्मोन कहा जाता है। उदाहरण के लिए, अग्न्याशय इन्सुलिन नाम का हॉर्मोन बनाता है जो रक्त प्रवाह में छोड़ा जाता है और फिर उसके ज़रिए शरीर के विभिन्न हिस्सों तक पहुँचता है। इन्सुलिन मांसपेशी कोशिकाओं की सतह पर उपस्थित विशिष्ट रसायनों (ग्राहियों) से जा जुड़ता है।

यह जुड़ाव मांसपेशी की कोशिकाओं को निर्देश देता है कि वे ख़ून में से ग्लूकोज़ का आयात बढ़ा लें और उसके दहन से ऊर्जा प्राप्त करें।

पता करें : हमें मिर्ची तीखी क्यों लगती है लेकिन तोतों को नहीं?

रसायन : वह सार्वभौमिक भाषा जिसमें सारे जीव एक-दूसरे के साथ सम्प्रेषण करते हैं!

जीव-जगत में संवाद फ़क़त ऊतकों या अंगों के स्तर पर नहीं होता। उसी या भिन्न प्रजाति के जीव भी एक-दूसरे के साथ संवाद करते हैं। मसलन, मिट्टी-वासी अमीबा डिक्टीओस्टीलियम डिस्कोइडियम (प्यार से हम उसे डिक्टी बुलाते हैं) अनुकूल पर्यावरण में एक-कोशिकीय होता है। लेकिन पर्यावरण के प्रतिकूल होते ही ये अमीबा चक्रीय-ऍडीनोसीन मोनोफ़ॉस्फ़ेट (c-AMP) नामक एक रसायन स्रावित करते हैं जो आस-पास के अन्य एक-कोशिकीय जीवों को खींचकर अपने पास ले आता है। फिर क्या, देखते-ही-देखते ये सारे एक-कोशिकीय जीव मिलकर एक बहु-कोशिकीय संरचना बनाते हैं जिसे फलन काय (फ्रूटिंग बॉडी) कहते हैं। इस फलन काय में एक लम्बा छड़ाकार डण्ठल होता है जिस पर बीजाणु (स्पोर्स) नाम का कोशिकाओं का एक समूह सवार होता है। ये बीजाणु बिखरते हैं और तने की वजह से इतना ऊपर उठे होते हैं कि उनमें से कुछ अपने जनक से छिटक दूर जा गिरते हैं जहाँ उन्हें अपने जीने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मिलती हैं (**देखें चित्र-6**)।

अन्य प्रजातियों के जीव फेरोमोन्स नामक रसायनों के ज़रिए संवाद करते हैं। मसलन, बहुत-से कीट (जैसे कि चींटियाँ) फेरोमोनों के ज़रिए ख़तरे, भोजन और उसके स्रोत और घोंसले की जानकारी का लेन-देन करते हैं। हैरत की बात तो यह है कि कुछ पौधे भी वातावरण में ख़ास तरह के रसायन छोड़कर शाकभक्षी ख़तरे का संकेत देते हैं। इस रासायनिक चेतावनी के सम्पर्क में आने वाले इन्हीं या भिन्न प्रजातियों के अन्य पौधे जवाब में शाकभक्षी-नाशी रसायन पैदा करते और छोड़ते हैं। अकसर, यह जवाबी कार्रवाई शाकभक्षी के उन पौधों तक आने से पहले ही शुरू हो जाती है!

रसायन प्रकाश भी 'देख' सकते हैं!

कुछ रसायन प्रकाश महसूस करने में जीवों की मदद करते हैं। मसलन, रीढ़दार प्राणियों के रेटिना में रोडोप्सिन नामक विशेष प्रकाश-ग्राही होते हैं। रोडोप्सिन प्रोटीन से जुड़ा रेटिनल अणु होता है जो कुछ ख़ास तरंग-लम्बाई वाला प्रकाश अवशोषित कर सकता है। प्रकाश अवशोषित करते

ही, रेटिनाई अणु की संरचना बदल जाती है, जिसके नतीजतन, इससे जुड़े प्रोटीन की संरचना में भी बदलाव आ जाता है। यह परिवर्तित प्रोटीन फिर रासायनिक अभिक्रियाओं की एक शृंखला शुरू कर देता है जिसके चलते एक ऐसा तंत्रिका-सिग्नल मस्तिष्क को जाता है जो उसे प्राप्त प्रकाश की मात्रा और उसकी गुणवत्ता की जानकारी देता है। जब-जब आँख में रोशनी जाती है रेटिना कोशिकाओं में यह समूची प्रक्रिया होती है। चूँकि रेटिनाई अणु विटामिन 'ए' का एक एल्डीहाइड होता है, इस विटामिन की कमी से रतौंधी हो सकती है।

पता करें : क्या जीवित प्राणियों में ऐसे ही अन्य प्रकाश-संवेदी अणु होते हैं? उनमें ऐसे कौन-से साझा गुण होते हैं कि वे प्रकाश देख लेते हैं?

आणविक मोटरें आपके हाथों का भार उठाती हैं!

जब भी आप क़लम या पानी से भरी बाल्टी उठाते हैं तो आपकी बाँह के अगले हिस्से की बाइसेप्स पेशियाँ सिकुड़ती हैं। यह संकुचन दो लम्बे, रेशे-सरीखे कोशिकीय प्रोटीनों – मायोसिन और ऍक्टिन की क्रिया के चलते होती है।

ये प्रोटीन किसी सुप्त मांसपेशी कोशिका के अन्दर परस्पर-समान्तर होते हैं। लेकिन कोशिका को सिकुड़ने का संकेत मिलते ही मायोसिन और एक्टिन सक्रिय हो आपस में जुड़कर एक-दूसरे के ऊपर सरकने लगते हैं, जिसके चलते मांसपेशी तन्तु की लम्बाई कम हो जाती है (**देखें चित्र-7**)। एटीपी की

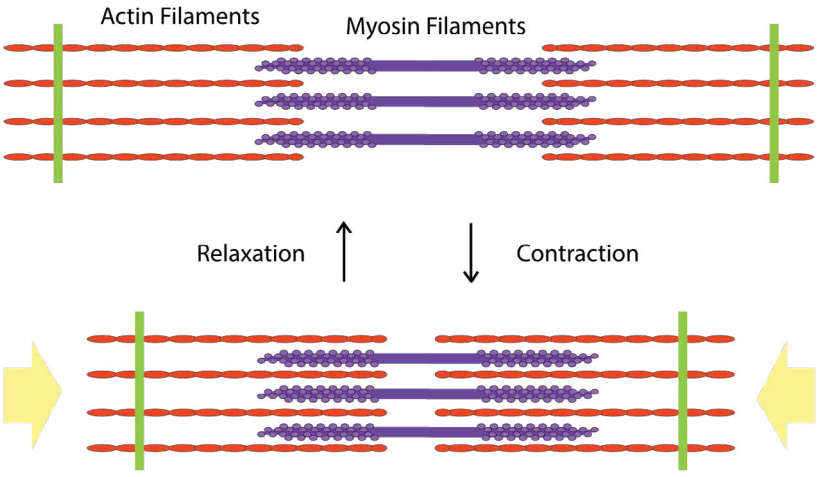

चित्र-7 : मांसपेशीय कोशिकाओं में ऍक्टिन व मायोसिन तन्तुओं का सिकुड़ना।

Credits: Adapted from an image created by Alli Sarfati on Proteins of the Deep Sea, Kier Laboratory, UNC Chapel Hill as part of the HHMI Internship for Future Teachers. URL: http://www.unc.edu/depts/our/hhmi/hhmi-ft_learning_modules/octopusmodule/images/contraction.png.

रासायनिक ऊर्जा के यांत्रिक ऊर्जा में बदलते ही, मांसपेशियाँ सिकुड़ने लगती हैं।

निष्कर्ष

"वे आप में और मुझ में हैं; उन्होंने हमारा तन और मन बनाया है; और उन्हें बचाए रखना ही हमारे अस्तित्व का सार है। उन प्रतिकृतिकारकों/ नक़ल नवीसों ने एक लम्बा सफ़र तय किया है। अब उनका नामकरण 'जीन्स' हुआ है और हम उनकी जीवन-रक्षा मशीनें हैं।"

–'द सेल्फिश जीन' में रिचर्ड डॉकिन्स।

एक अत्यन्त ध्यानाकर्षक उदाहरण के द्वारा रिचर्ड डॉकिन्स रेखांकित करते हैं कि किस तरह कीमियागिरी जैविक प्रक्रियाओं को आदेशित करती है। हाँ, यह एक क्रान्तिकारी नज़रिया ज़रूर है, लेकिन हम यह भी जानते हैं कि दसियों लाखों सालों में प्राकृतिक चयन के चलते कुछेक क़िस्म की रासायनिकी को जैविक तंत्रों में अन्य के मुक़ाबले ज़्यादा तैनात किया गया है। इन्हीं रसायनों और उनकी अभिक्रियाओं के चलते न सिर्फ़ एक कीड़ा किसी चट्टान से अलग दिखता है, बल्कि इनसे ही तमाम जीवों का अस्तित्व सफलतापूर्वक कायम रहा है।

यह लेख, कुछेक उदाहरणों के द्वारा हमें बताता है कि रासायनिकी के सिद्धान्तों की समझ के बूते हम किस तरह जीवों सम्बन्धी अपनी समझ को समृद्ध कर सकते हैं और इसके उलट भी। लेकिन जैविकी की समझ के साथ रासायनिकी के प्रबल बन्धन को देखते हुए यही कहा जा सकता है अभी तो ऐसे कई बन्धनों की गाँठें खुलनी बाक़ी हैं। मसलन, क्या आपने कभी भोजन सम्बन्धी अपनी ज़रूरत पर रासायनिक दृष्टि से विचार किया है? भोजन को ऊर्जा में बदलने का आशय वास्तव में क्या है? और इस ऊर्जा का इस्तेमाल होता किसलिए है? क्या आप ऐसी अन्य कड़ियों के बारे में सोच सकते हैं?

Note: Credits for the image used in the background of the article title: *Dictyostelium discoideum*, Usman Bashir, Queller/Strassmann Research Group at Washington University in St. Louis, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Dictyostelium_discoideum_43.jpg. License: CC-BY-SA.

Additional Resources

1. Cooper GM. The Cell: A Molecular Approach. 2nd edition. Sunderland (MA): Sinauer Associates; 2000. DNA Replication. Available from: https://www.ncbi.nlm.nih.gov/books/NBK9940/.
2. Lodish H, Berk A, Zipursky SL, et al. Molecular Cell Biology. 4th edition. New York: W. H. Freeman; 2000. Section 2.4, Biochemical Energetics. Available from: https://www.ncbi.nlm.nih.gov/books/NBK21737/.
3. Cooper GM. The Cell: A Molecular Approach. 2nd edition. Sunderland (MA): Sinauer Associates; 2000. Metabolic Energy. Available from: https://www.ncbi.nlm.nih.gov/books/NBK9903/.
4. Westheimer, F. (1987). Why nature chose phosphates. Science, [online] 235(4793), pp.1173-1178. Available at: http://archives.evergreen.edu/webpages/curricular/2006-2007/m2o2006/seminar/westheimer.pdf [Accessed 6 Jun. 2018].

अनघ पुरन्दरे ऋषि वैली स्कूल में विज्ञान व जैविकी पढ़ाते हैं। उनके पुराने कार्य-अनुभव में स्कूली बच्चों की अवधारणात्मक समझ को परखने के साधन डिज़ाइन करना शामिल रहा है। उनकी रुचि अलग-अलग विषयों को परस्पर जोड़कर विज्ञान सीखना आसान बनाने में है। उनसे anaghp@rishivalley.org या anaghrv@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनिरुद्ध शास्त्री ने पुणे के इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ़ साइंस एजूकेशन एंड रिसर्च (IISER) से पौधों में तापमान सहनशीलता विषय पर अपने काम में पीएचडी प्राप्त की है। ASSET ग्रीष्मकालीन कार्यक्रम के ज़रिए उन्होंने प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के साथ काम किया है। उनकी रुचि विज्ञान शिक्षण के सन्दर्भ में पाठ्यक्रम, मूल्यांकन परीक्षण और अन्य शैक्षिक उपकरण बनाने में है। सम्प्रति 'एजूकेशनल इनिशिएटिव्स' के साथ कार्यरत हैं। उनसे aniruddh0810@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

Printed and published by Manoj P on behalf of Azim Premji Foundation for Development.
Printed at Suprabha Colorgrafix (P) Ltd., No. 10, 11, 11-A, J.C. Industrial Area, Yelachenahalli, Kanakapura Road, Bangalore 560062.
Published at Azim Premji University, Pixel B Block, PES College of Engineering Campus, Electronics City, Bangalore 560100.
Editors: Ramgopal Vallath & Chitra Ravi

आई वंडर... के अगले अंक में मुलाकात होगी कुछ बड़े सवालों से!

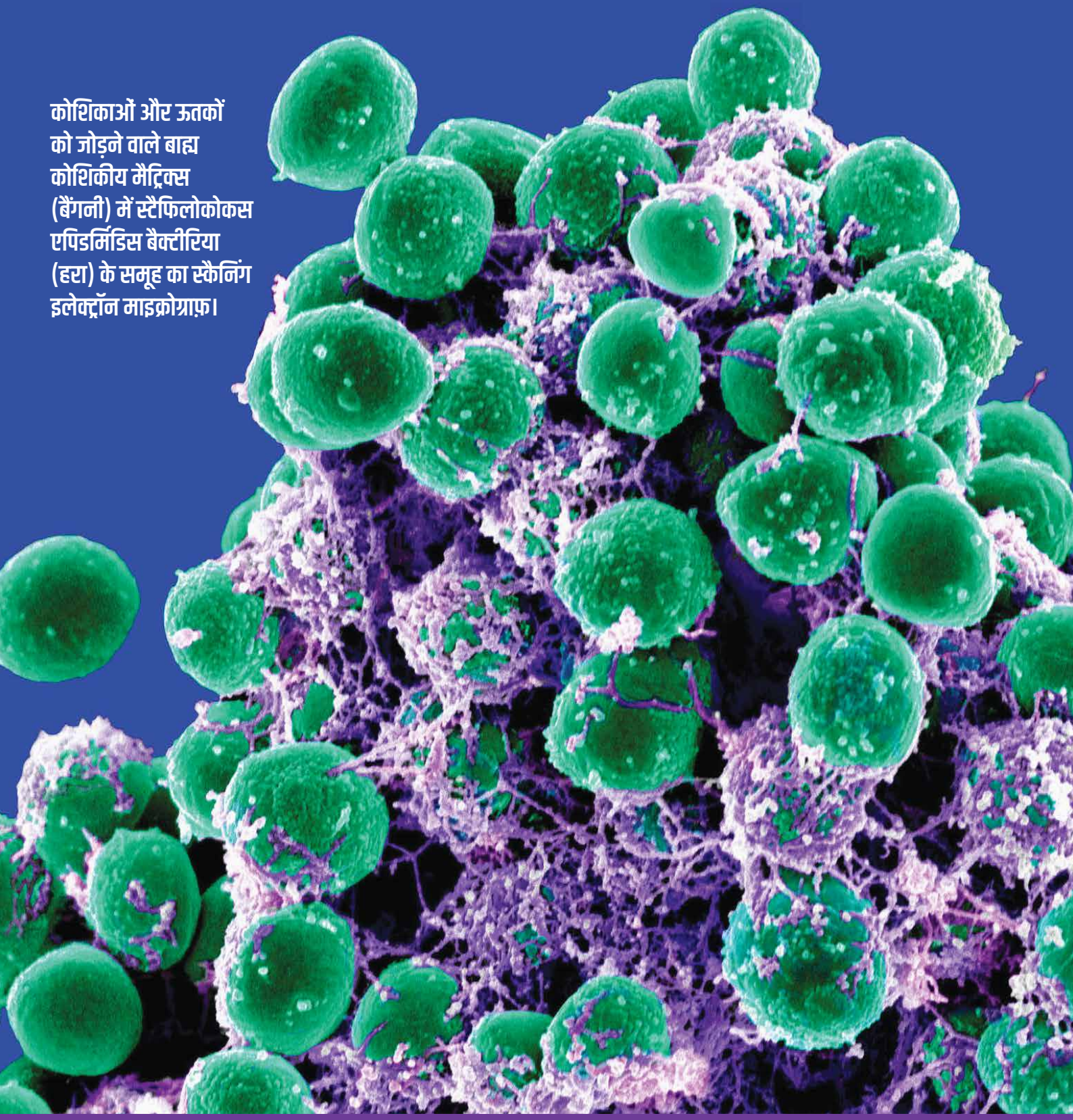

कोशिकाओं और ऊतकों को जोड़ने वाले बाह्य कोशिकीय मैट्रिक्स (बैंगनी) में स्टैफिलोकोकस एपिडर्मिडिस बैक्टीरिया (हरा) के समूह का स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोग्राफ़।

Azim Premji University
Pixel Park, PES Campus, Electronics City, Hosur Road,
Bangalore - 560100
Facebook: /azimpremjiuniversity
Instagram: @azimpremjiuniv
Twitter: @azimpremjiuniv
080-6614 5136
www.azimpremjiuniversity.edu.in